खंड

3

अनुवाद की विधाएँ

इकाई 7
निर्वचन : संकल्पना, प्रक्रिया और प्रकार 117

इकाई 8
सारानुवाद और संक्षिप्तानुवाद 136

इकाई 9
अनुसृजन और अनुवाद 149

इकाई 10
रूपांतरण और अनुवाद 163

इकाई 11
डिबंग और सबटाइटिलंग की प्रक्रिया और अनुवाद 177

में अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। इनमें निर्वचन, सारानुवाद, पुनर्सृजन और अनुसृजन तथा रूपांतरण सम्मिलित हैं। ध्यातव्य है कि निर्वचन का क्षेत्र-विशेष से संबंध होने के कारण इनकी प्रयोज्यता पर चर्चा करना उपयोगी होगा। सारानुवाद भी इसी प्रकार अपने विशिष्ट स्वरूप एवं प्रयोज्यता से अनुवाद की विशेष विधा है। पुनर्सृजन और अनुसृजन भी अनुवाद विधाओं में अपनी प्रकृति एवं स्वरूप के पद्य, गद्य, कथेतर साहित्य, तकनीकी और वैज्ञानिक साहित्य तथा विज्ञापन एवं पारिभाषिक शब्दावली जैसे क्षेत्रों में अपनी विशिष्टताओं के कारण अलग स्थान रखता है। इसी प्रकार रूपांतरण भी अनुवाद का एक विशिष्ट आयामी रूप है जिसका प्रयोजन क्षेत्र भी विशिष्ट है। इन्हीं सब बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए अनुवाद की विधाएँ शीर्षक से इस खंड में चार इकाइयाँ सम्मिलित हैं; जिनका विस्तृत परिचय इस प्रकार है :

इकाई 7 'निर्वचन : संकल्पना, प्रक्रिया और प्रकार' : इस इकाई में अनुवाद की एक विशिष्ट विधा के रूप में निर्वचन की संकल्पना, उसके प्रकार तथा निर्वचन प्रक्रिया पर विस्तार से चर्चा की गई है। निर्वचन के प्रयोज्य क्षेत्र, आवश्यकता तथा निर्वचन प्रक्रिया के विभिन्न चरणों तथा चुनौतियों संबंधी गुत्थियों को भी अनावृत करने का प्रयास किया गया है। निर्वचन को आशु अनुवाद, भाषांतरण, सद्य-अनुवाद आदि समाभिधानों से भी जाना जाता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी का व्यापक प्रयोग होने से निर्वचन प्रौद्योगिकी समावेशित अनुवाद विधा के रूप में भी सुस्थापित है। निर्वचन और निर्वचन के प्रयोग क्षेत्र से आपका परिचय संक्षिप्त रूप में पिछली इकाइयों में भी हो चुका है।

इकाई 8 'सारानुवाद' : इस इकाई में अनुवाद विधा के उस रूप की चर्चा आप पढ़ेंगे जिसमें हम स्रोत/मूलपाठ का सार प्रस्तुत करते हैं। सारानुवाद का भी विशिष्ट प्रयोजन क्षेत्र है तथा इसके स्पष्ट प्रक्रियात्मक चरण हैं। सारानुवाद, भावानुवाद अथवा सामान्य अनुवाद से अपने आकार प्रकार तथा कथ्य-अभिव्यक्ति की कृति स्वरूप में विलग है। अतः इस पर आप विस्तार से इस इकाई में चर्चा करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप यह जान पाएँगे कि सारानुवाद की सीमाएँ भी हैं। साहित्यानुवाद विशेषकर कविता तथा रस सौंदर्यपरक साहित्य का सारानुवाद सामान्यतः नहीं किया जाता है। शिक्षार्थी दैनंदिन व्यवहार में आने वाले प्रयोगों को अध्ययन-सामग्री के साथ जोड़कर स्वयं इस विधा के महत्व को समझ सकेंगे।

इकाई 9 'अनुसृजन और अनुवाद' : अनुसृजन शीर्षक से इस इकाई का उद्देश्य शिक्षार्थियों को सर्जनात्मक साहित्य, ज्ञान-प्रधान साहित्य तथा विज्ञापनों के अनुवाद में अपनाई जाने वाली प्रविधि के फलस्वरूप उत्पाद के रूप में परिणामित होने वाली विधा की चर्चा करेंगे। आपने इस कार्यक्रम की पिछली इकाइयों में सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद, विज्ञापनों तथा वैज्ञानिक एवं ज्ञान-प्रधान साहित्य के अनुवाद के संदर्भ में जान लिया है कि इनका शाब्दिक अथवा केवल भाषिक अनुवाद ही नहीं होता; अपितु इसमें अनुवादक अपनी सृजनात्मक प्रतिभा से मूल के कथ्य को सुरक्षित रखते हुए उसे काल, स्थिति एवं परिवेशजन्य संकल्पनाओं से जोड़कर एक विशिष्ट पाठ का निर्माण करता है। यह प्रक्रिया पुनःसृजन के चरण से गुजरती है। यह एक अनुसृजित पाठ के रूप में हमारे सामने आता है। शिक्षार्थी इस इकाई में अनुसृजन का अर्थ, अभिप्राय, प्रयोजन क्षेत्र, प्रक्रिया एवं प्रविधि पर सहजता से विचार कर सकेंगे तथा अनुवाद में सृजनशीलता के पक्ष को समझ सकेंगे।

इकाई 10 'रूपांतरण और अनुवाद' : पिछली इकाई में हमने अनुसृजन पर चर्चा के दौरान उसके सर्जनात्मक पक्ष पर चर्चा की। इसी तारतम्य में आप इस इकाई में अनुवाद की एक और उप-विधा : रूपांतरण का अध्ययन करेंगे। रूपांतरण कई मामलों में अन्य विधाओं से भिन्न है; इनमें स्रोतपाठ की विधा में स्पष्ट अंतरण किया जाता है; यथा; पाठ से मंचन, वाचन अथवा अभिनय। इसके अतिरिक्त कई बार पाठ से पाठ में भी अंतरण होता है, जैसे रामायण तथा श्रीमद्भागवद्गीता के अनेक भारतीय संस्करण मिलते हैं। शेक्सपीयर के नाटकों पर अनेक नए पाठ तैयार किए गए हैं। मूल भाषा से मूल भाषा में रूपांतरण और मूल भाषा में अन्य भाषा में रूपांतरण भी होता है। शिक्षार्थियों के लिए रूपांतरण के महत्व को अनुवाद के संदर्भ में समझाने का प्रयास भी इस इकाई में किया गया है। अनुवाद और रूपांतरण का अंतर्संबंध बताते हुए पाठपरक तथा दृश्यपरक रूपांतरण पर विशेष चर्चा की गई है। रूपांतरण के इन प्रकारों को उदाहरणों सहित इकाई में प्रस्तुत किया गया है ताकि आप स्वयं रूपांतरण की विधा को इसके दूसरे प्रयोग-क्षेत्रों के साथ जोड़कर भी देख सकें और यह जान सकें कि अनुवाद की इस विधा का क्षेत्र स्पष्ट और व्यापक होने के साथ रूपांतरकारों, अनुवादकों के लिए व्यवसाय का बड़ा क्षेत्र भी है।

इकाई 11 ^Mfcax vkSj lcVkbVfyax dh çf0;k vkSj vuqokn* : अनुवाद में जिस तरह को आयाम और विस्तार हो रहा है उनमें सामग्री प्रयोक्ता के अनुरूप एवं ग्रहणीय बनाने हेतु उसका लक्ष्य भाषा में अनुदित किया जाना अपेक्षणीय रहता है। फिल्मी गीतों का डबिंग का पुराना कभी-कभी दूसरे पूरे कार्यक्रम को लक्ष्यभाषा में ध्वनित कर दिया जाता है, इसे डबिंग कहा जाता है, परन्तु इसमें कई अवसरों पर कृत्रिमता का भी बोध होता है; अतः कुछ कार्यक्रमों अथवा वृत्तचित्रों या फिल्मों को मूल भाषा में ही प्रसारित किया जाता है परन्तु स्क्रीन पर्दे पर दिखाये रहे दृश्या सीन की संक्षिप्त 7-8 शब्दों में पट्टीनुमा बनाकर निश्चित अवधि में चलती रहती है। अनुवाद विधा का यह विशिष्ट रूप है; अतः विद्यार्थियों को डबिंग, सबटाइलिंग का आवश्यकता, पद्धति, तकनीक और उपयोगिता आदिपक्षों से परिचित कराने हेतु यह इकाई विशेषरूप से संयोजित की गई है।

इकाई 7 निर्वचन : संकल्पना, प्रक्रिया और प्रकार

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 निर्वचन से तात्पर्य

7.3 निर्वचन का प्रयोज्य-क्षेत्र

7.4 निर्वचन की आवश्यकता

7.4.1 बहुभाषी समाज में आवश्यकता

7.4.2 सभा सम्मेलनों में आवश्यकता

7.4.3 वैश्विक संदर्भ में

7.4.4 सांस्कृतिक एवं सामाजिक क्रियाकलापों में

7.4.5 यात्रा, पर्यटन आदि

7.4.6 राजनयिक गतिविधियाँ

7.4.7 संसद कार्यों हेतु

7.5 निर्वचन की प्रक्रिया

7.5.1 विकोडीकरण

7.5.2 अंतरण

7.6 निर्वचन के प्रकार

7.6.1 क्रमिक या क्रमागत निर्वचन (Consecutive Interpretation)

7.6.2 तात्कालिक या युगपत निर्वचन (Simultaneous Interpretation)

7.6.3 पास बैठकर धीमी आवाज में किया जाने वाला निर्वचन(Whispered Interpretation)

7.7 निर्वचन कार्य की व्यावहारिक जटिलता और प्रभावकारिता

7.7.1 प्रभावीकारक : गुणात्मक

7.7.2 तनावकारक

7.7.3 निर्वचन कार्य की व्यावहारिक समस्याएँ

7.8 निर्वचन और अनुवाद

7.9 निर्वचन, भावानुवाद और सारानुवाद

7.10 निर्वचक से अपेक्षाएँ

7.11 सारांश

7.12 अभ्यास के लिए प्रश्न

7.13 शब्दावली

7.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी :

- निर्वचन क्या है तथा विभिन्न संदर्भों में इसकी आवश्यकता किन-किन क्षेत्रों में हैं; यह जान सकेंगे;
- निर्वचन की प्रक्रिया और उसके विभिन्न चरणों की जानकारी प्राप्त करेंगे;
- निर्वचन के विभिन्न प्रकारों से अवगत हो सकेंगे;
- निर्वचन कार्य की जटिलता और प्रभावी कारकों की पहचान कर सकेंगे; तथा
- निर्वचन और सामान्य अनुवाद, भावानुवाद और सारानुवाद आदि में भेद कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

इस पाठ्यक्रम के पिछले दो खंडों में आपने अनुवाद प्रक्रिया, अनुवाद प्रकार तथा अनुवाद की सीमाओं के साथ-साथ अनुवाद को स्तरीय एवं प्रयोगपरक बनाने वाले कारकों यथा अनुवाद समीक्षा, पुनरीक्षण एवं अनुवाद मूल्यांकन पर पर्याप्त चर्चा की। अनुवाद प्रकारों पर चर्चा के क्रम में हमने पाया कि सदैव लिखित अनुवाद ही नहीं होता; जैसे कि पर्यटन व्यवसाय, सभा-सम्मेलनों, तीर्थाटन, संसद एवं विधान-सभाओं आदि में, जहाँ तात्कालिकता और घटनाओं की समसामयिकता के कारण लिखित अनुवाद नहीं अपितु तत्काल अनुवाद या भाषांतर आदि होता है। ऐसी परिस्थितियों में तुरंत घटना अथवा गतिविधि को 'लक्ष्य दर्शक, श्रोता अथवा पाठक तक पहुँचाने के लिए मूलपाठ का भाषांतर या निर्वचन या आशु-अनुवाद अथवा Interpretation किया जाता है। इस प्रकार निर्वचन अनुवाद का विशिष्ट क्षेत्र है, क्योंकि सद्य रूप से दो भिन्न-भिन्न भाषाभाषियों को सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से समान धरातल पर लाने में यह एक प्रकार की वैज्ञानिक प्रक्रिया है; जिसका वर्तमान विश्व में बड़े पैमाने पर प्रयोग हो रहा है।

यह स्वाभाविक है कि अनुवाद का दायरा अति व्यापक होने के कारण उसकी अनेक प्रक्रियाएँ विभिन्न स्तरों पर संपन्न होती हैं तथा इन्हें स्पष्ट रूप से अलग कर पाना संभव नहीं होता। तथापि इस इकाई में हम यह साफ तौर पर जान सकेंगे कि निर्वचन या आशु-अनुवाद एक मनोवैज्ञानिक गतिविधि के रूप में अनुवाद की एक विशिष्ट विधा है। निर्वचन अनुवाद, भावानुवाद आदि से अलग विधा है तथा इसकी अपनी विशेष आवश्यकता और प्रयोज्य क्षेत्र एवं प्रक्रिया है। निर्वचक या आशु अनुवादक या दुभाषिया कौन होता है, इसके क्या-क्या गुण होते हैं और किन व्यावहारिक जटिलताओं से जूझता हुआ वह निर्वचन करता है, यह वैज्ञानिक अध्ययन का विषय है। अनुवाद और निर्वचन में क्या सूक्ष्म भेद हैं, जो अनुवाद प्रक्रिया और प्रविधि में अलग-अलग रूप में सामने आते हैं। इकाई में दिए गए प्रश्नों को हल करने के उपरांत आप स्वयं निर्वचन के महत्व तथा वर्तमान समाज में उसकी उपयोगिता का ठीक से निर्धारण कर सकेंगे।

7.2 निर्वचन से तात्पर्य

भाषा आपसी संवाद का महत्त्वपूर्ण माध्यम है। यह संस्कृति और सभ्यता को स्वर देती है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बहुत सारी भाषाएँ बोली जाती हैं। केवल 'एक विशेष' भाषा बोलने-समझने वाला व्यक्ति केवल 'दूसरी किसी विशेष' भाषा बोलने-समझने वाले व्यक्ति से कैसे संवाद स्थापित कर सकता है? इस प्रश्न के उत्तर में ही निर्वचन का महत्त्व छिपा है। दरअसल, जो व्यवस्था एक भाषा को बोलने-समझने वाले व्यक्ति और किसी दूसरी अन्य भाषा को बोलने-समझने वाले व्यक्ति के बीच मौखिक संवाद को संभव बनाती है, वही निर्वचन है। निर्वचन की यह व्याख्या कुछ-कुछ विश्व ग्राम की परिकल्पना को साकार करती प्रतीत होती है। कुछ विद्वान इसे अनुवाद का ही एक अंग मानते हैं और इसे आशु अनुवाद या मौखिक अनुवाद का नाम भी देते हैं। यह अनुवाद की विशिष्ट मौखिक प्रक्रिया है जो तत्काल संपादित होती है। समय के साथ-साथ यह विधा विज्ञान के रूप में भी जानी जाने लगी है, क्योंकि संचार की अनेकानेक समुन्नत विधाओं तथा तकनीकी समावेशन इसे सुप्रयोज्य एवं व्यापक परिप्रेक्ष्य प्रदान करते हैं। तथापि आमतौर पर इसे निर्वचन अथवा भाषांतरण के नाम से जाना जाता है। अंग्रेजी में इसे 'इंटरप्रेटेशन' (Interpretation) कहा जाता है। भाषांतरण के अलावा निर्वचन प्रक्रिया का सामीप्य व्याख्या अथवा आशु-अनुवाद से भी है जैसे कि अध्यापक अपने पक्ष अथवा संश्लेषण संकल्पना या हिंदी, अंग्रेजी में छपे साहित्य के पद्य या पद्यांश को समझाने के लिए उसका भाष्य, टीका अथवा विस्तारण करता है। यह तो

स्पष्ट ही है कि यह सारी प्रक्रिया मौखिक रूप में और तत्काल/सद्यः संपन्न होती है। भारत सरकार की विधि शब्दावली में निर्वचन (अथवा Interpretation) को एक प्रक्रिया बतलाया गया है जिसका उद्देश्य किसी पाठ के अर्थ को जानना है अर्थात् Process of ascertaning a meaning of a text. इस प्रकार निर्वचन आशु अनुवाद, भाषांतर, अर्थ-निर्णय, व्याख्या, भाष्य-टीका (मौखिक), अनुवचन, वार्तानुवाद आदि के काफी समीपस्थ अभिव्यक्ति है जिसका मूल उद्देश्य है :

- किसी सार्वजनिक समारोह, सम्मेलन, आयोजन आदि की गतिविधि, व्याख्यान आदि का उसी समय लक्ष्य श्रोता वर्ग के लिए तुरंत ग्रहण-योग्य निर्वचित रूप प्रस्तुत करना; तथा
- दो व्यक्तियों के बीच होने वाले वार्तालाप को क्रमशः कथन के तुरंत बाद क्रमागत रूप में प्रस्तुत करना।

अक्सर लोग निर्वचन और अनुवाद को लेकर भ्रम की स्थिति में पड़ जाते हैं। निर्वचन मौखिक होता है, जबकि अनुवाद लिखित रूप में होता है। हालाँकि दोनों ही स्रोतभाषा (Source Language) से लक्ष्यभाषा (Target Language) में संदेश को परिवर्तित करते हैं किंतु दोनों के तौर-तरीके और उद्देश्य अलग-अलग हैं।

निर्वचन का प्रयोग 'व्याख्या' के संदर्भ में भी होता रहा है। चैम्बर्स शब्द-कोश के अनुसार निर्वचन 'एक भाषा में शब्दों के अर्थ और उनके महत्त्व को दूसरी भाषा में समझाने की क्रिया है'। पद्यचंद्र कोश (1914) के अनुसार निर्वचन शब्द में निरु+वच्+ल्युट प्रत्यय है जिसका अर्थ होता है धातु और प्रत्यय के विभाग से बनने वाली निरुक्ति (विशेष उक्ति) यानि अर्थ को निचोड़कर पूरा-पूरा व्यक्त कर देना। बाद में निर्वचन मौखिक अनुवाद के रूप में होने लगी और इसमें शाब्दिक अर्थों के साथ ही लाक्षणिक और सांकेतिक अर्थों (Cannotative meanings) को भी लिया गया है। निर्वचन दोनों भाषाओं के मुहावरों, लोकोक्तियों, सामाजिक-सांस्कृतिक और साहित्यिक संदर्भों का आपसी आदान-प्रदान भी है। निर्वचन एक भाषा से दूसरी भाषा में मौखिक अनुवाद मात्र नहीं है। वरन् दो भाषाओं के बीच शाब्दिक-सेतु का निर्माण है जो दो अलग-अलग संस्कृतियों और वैचारिक-विश्वों को आपस में जोड़ता है। यह दो भाषाओं के बीच विचारों, तथ्यों, अनुभव, भावों और अहसासों का परस्पर विनिमय है।

7.3 निर्वचन का प्रयोज्य-क्षेत्र

अनुवाद की एक विशिष्ट शाखा होने के नाते निर्वचन का बहुभाषिक समाज में अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय, तथा क्षेत्रीय एवं स्थानीय तौर पर सांस्कृतिक एवं भावात्मक एकता संस्थापन में महत्वपूर्ण स्थान है। महत्वपूर्ण तात्कालिक हितों की पूर्ति के साथ-साथ पारंपरिक संवाद में इसकी भूमिका स्वयं-सिद्ध है। निर्वचन की भूमिका अनेक संदर्भों में और भी महत्वपूर्ण हो जाती जब सूचना, ज्ञान अथवा अन्य गतिविधियों से राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वैयक्तिक, सामाजिक-सांस्कृतिक अथवा सांस्थानिक भाषा वैभिन्न्य के कारण उनके मध्य संवाद और संप्रेषण की आवश्यकताएँ सदैव त्वरित गति से आपसी संबंध स्थापना की आग्रही हो जाती हैं। संसद, संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा अन्य विश्व संस्थाओं-यथा, यूनेस्को, यूनिसेफ, विश्व मुद्रा-कोश, विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक आदि में लगातार सभा-सम्मेलन आदि में निर्वचन की अपेक्षा बनी रहती है ताकि सभी सदस्य राष्ट्रों के प्रतिनिधि अपनी बात कह सकें, और सभी सदस्य अपनी प्रतिक्रिया दे सकें। इसी प्रकार बहुभाषी समाज (भारत, कनाडा आदि) में भी विभिन्न भाषाभाषियों के मध्य औपचारिक-अनौपचारिक संवाद अपेक्षित रहता है। पानी, जल, आब, ध्याह, त्याह, प्यास, पियास, त्रेछ आदि असंख्य अभिव्यक्तियाँ हैं जो सामान्यतः पानी के लिए प्रयुक्त होती हैं, इन्हें तत्काल समझकर प्रतिक्रिया की आवश्यकता होती है। ऐसी ही स्थितियाँ प्रायः सार्वजनिक सेवा तथा अन्य सेक्टरों में सामने आती हैं जब विधिवत अनुवाद का समय नहीं होता, ऐसे में निर्वचन ही तुरंत समाधान का साधन बनता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बहुभाषी समाज के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय संदर्भ तक निर्वचन का क्षेत्र सुविस्तारित है।

7.4 निर्वचन की आवश्यकता

आइए, निवर्चन की जरूरत को समझें। यदि भाषा आपसी संवाद का माध्यम है तो वक्ता द्वारा बोले गए शब्दों के अर्थ श्रोता को समझ आने चाहिए और विभिन्न परिस्थितियों में तत्काल आने चाहिए। अलग-अलग भाषाएँ

बोलने-समझने वाले लोग किसी निर्वचक द्वारा किए गए मौखिक अनुवाद के माध्यम से ही एक-दूसरे की बात समझ सकते हैं। ऐसा इसलिए संभव होता है क्योंकि उस निर्वचक को उन दोनों भाषाओं और उनके प्रयोक्ता-लक्षिता वर्ग की संस्कृति का अच्छा ज्ञान होता है। दोनों भाषाओं पर अपने समान अधिकार के कारण वह उन दोनों ही भाषाओं से न्याय कर पाता है। इसी वजह से वह उन दोनों भाषाओं में कही गई बातें समझ भी पाता है और मौखिक अनुवाद के माध्यम से उन बातों को (लक्ष्य) व्यक्तियों को समझा भी पाता है।

आज विश्व सिकुड़ कर एक विश्वग्राम (Global village) बन गया है। पूरे विश्व में छह हजार से भी अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अलग-अलग भाषाएँ बोलने वाले लोगों के बीच आज अधिकाधिक संवाद की आवश्यकता है। निर्वचकों के बिना यह कार्य असंभव है।

ऐसा नहीं है कि निर्वचन का महत्त्व अतीत में नहीं था। यह व्यवस्था किसी न किसी रूप में आदिकाल से मौजूद रही है। प्राचीनकाल में भी इसकी मौजूदगी के प्रमाण हमारे पास उपलब्ध हैं। बादशाहों, योद्धाओं और आक्रमणकारियों को भी निर्वचकों की आवश्यकता पड़ती रहती थी। भारत में आशु-अनुवाद (निर्वचन) का इतिहास काफी प्राचीन है। बौद्धधर्म के प्रचार-प्रसार के लिए जब अशोक के पुत्र और पुत्री विदेशों में गए तो उन्हें दुभाषिया की आवश्यकता पड़ी होगी। चीनी यात्री फाह्यान और ह्येनसांग को वार्तालाप के लिए निर्वचन का सहारा लेना पड़ा होगा। जब सिकंदर ने पुरु को पराजित किया होगा तो वे एक-दूसरे की भाषा नहीं जानते थे, तो उनके संवाद में आशु-अनुवादक ही आया होगा। प्राचीन रोमन और ग्रीक पुस्तकों और शिलालेखों आदि में भी इस व्यवस्था की मौजूदगी के अनेक उल्लेख मिलते हैं। मध्य-काल में यूरोप में होने वाले धर्म-युद्धों (Crusades) के समय भी निर्वचकों का इस्तेमाल किया जाता था। विभिन्न देशों के बीच कूटनीतिक और राजनयिक संबंधों में भी शुरू से ही निर्वचक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। प्राचीनकाल और मध्यकाल में चीन और फ़ारस (Persia) से भारत आने वाले यात्री और आक्रमणकारी स्थानीय लोगों से संवाद स्थापित करने के लिए किसी-न-किसी रूप में निर्वचकों पर ही निर्भर थे। यहाँ तक कि युद्ध शांति तथा दौत्य संबंधों में कटुता के बावजूद निर्वचकों या भाषांतरकारों के लिए मुआफी/सुरक्षा (Immunity) की गारंटी थी। इनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना के 'अनुवाद संदर्भ' में दर्ज है कि निर्वचन अनुवाद से पहले भी प्रचलित था और प्रागैतिहासिक साम्राज्य सुमेरिया के नरेश गिलगमेश के महाकाव्य के कथानक दक्षिण पूर्व एशियाई भाषाओं में मिलते हैं जबकि उस समय कोई भाषा विधिवत रूप से विकसित नहीं थी। सम्राट चंद्रगुप्त के साम्राज्य में सिकंदर के दूत के साथ वार्तालाप और महाभारत तथा रामायण के दौत्य प्रसंग निर्वचन परंपरा की ऐतिहासिकता के गवाह हैं।

अतः चाहे वह युद्ध का समय हो या शांति का अथवा उपनिवेशवादिता का, निर्वचन के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता। विशेष रूप से बैठकों और सम्मेलनों के इस युग में निर्वचन अथवा भाषांतरण की व्यवस्था का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। आज इसका प्रयोग अन्य जगहों के अलावा संयुक्त राष्ट्र संघ, यूरोपीय यूनियन, इंटरनेशनल कोर्ट ऑफ़ जस्टिस, राष्ट्रमंडल और सार्क देशों की संस्थाओं तथा भारतीय संसद के दोनों सदनों में होता है।

भारत में लगभग 850 (1961 के सर्वेक्षण के अनुसार 1652 मातृ भाषाएँ बताई गई हैं) भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलन में हैं। इनमें संविधान द्वारा आधिकारिक रूप से मान्यता-प्राप्त 22 भाषाएँ भी शामिल हैं। कश्मीर से कन्याकुमारी और गुजरात से उत्तर-पूर्व तक अलग-अलग भाषाएँ और बोलियाँ बोलने वाले लोग रहते हैं। ऐसे परिदृश्य में निर्वचन के बिना जीवन की कल्पना सहज नहीं है।

7.4.1 बहुभाषी समाज में आवश्यकता

निवर्चन की आवश्यकता सामान्यतः बहुभाषिक समाज में होती है। निर्वचन किसी भी बहुभाषी समाज में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से स्वयं सक्रिय रूप से घटित होता है। भारत की भाषा विविधता को देखते हुए सहज ही यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक नागरिक दो या अधिक भाषाओं का व्यापार करता है। देश के किसी भी क्षेत्र/छोर को लें, निर्वचन के बिना हमारी कोई गतिविधि, यात्रा, संगोष्ठी, व्यापार अथवा अन्य कार्य संपन्न नहीं होगा। चार कोस पर पानी बदले आठ कोस पर बानी, यह इसका प्रमाण है।

7.4.2 सभा सम्मेलनों में आवश्यकता

निवर्चन आपसी संबंधों को पोषित करने में तथा सभा, सम्मेलनों, गोष्ठियों आदि में भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। भारतीय संसद, प्रादेशिक विधान सभाओं तथा अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं यथा संयुक्त राष्ट्रसंघ के विभिन्न उपांगों में व्यापक रूप में सद्यः अनुवाद अथवा क्रमिक अनुवाद उपयोग में लाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषाओं में तो अनुवाद सद्यः उपलब्ध होता ही है। अन्य राष्ट्रों की भाषाओं के अनुवाद की व्यवस्था भी इन भाषाओं में की जाती है। इसके अतिरिक्त व्यापारिक, प्रशासनिक एवं विकासात्मक और अकादमिक उद्देश्यों के प्रयोजन से भी असंख्य सभा-सम्मेलनों, गोष्ठियों का आयोजन प्रतिदिन हो रहा है। इन सभी में निर्वचन की आवश्यकता रहती है।

7.4.3 वैश्विक संदर्भ में

निर्वचन वैश्विक ग्राम की अवधारणा को पोषित करता है। विभिन्न देशों के मध्य सहयोग, यात्रा सुगमता व संयुक्त अंतरराष्ट्रीय उद्यमों में निवर्चन की आवश्यकता बनी रहती है। उदाहरण के लिए, जर्मनी, फ्रांस या चीन में जाने पर वहाँ टैक्सी चालक, बैंक लेन-देन, होटल, खरीददारी, दिशा निर्देशन और यहाँ तक व्यापार आदि के अवसरों पर निवर्चन से ही हमारी उद्देश्य पूर्ति अथवा कार्य संपादन हो पाता है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रों के मध्य आपसी दौत्य संबंधों तथा व्यापारिक गतिविधियों की स्थापना में भी निर्वचन की आवश्यकता पड़ती है। अधिकांश राष्ट्रों की अपनी अलग-अलग भाषाएँ हैं, तथा विशेष अवसरों पर लिखित अनुवाद का अवकाश नहीं होता है। अस्तु निर्वचन की आवश्यकता स्वयंसिद्ध है।

7.4.4 सांस्कृतिक एवं सामाजिक क्रियाकलापों में

निर्वचन से हमारी सामाजिक एवं सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती है। देश के विभिन्न भागों की संस्कृति, बोली, रहन-सहन, खान-पान व अन्य विशिष्टताओं को समझने और अपनी विशिष्टताओं को उन तक तक पहुँचाने हेतु, निर्वचन की केंद्रीय भूमिका है। दक्षिण, उत्तर, पूर्व और पश्चिम भारत के असंख्य सांस्कृतिक एवं कलात्मक तथा साहित्यिक रंगों को जानने और उनसे राष्ट्रीय एकता के सूत्रों को जोड़ने में निर्वचन हमारा सबसे महत्वपूर्ण साधन है।

7.4.5 यात्रा, पर्यटन आदि

विभिन्न संस्कृतियों, धर्मों और भौगोलिक विविधताओं का राष्ट्र होने के कारण भारत में धार्मिक यात्राओं का प्राचीन काल से प्रचलन रहा है। एक भाषा-भाषी समूह उत्तर से जब दक्षिण, पूर्व या पश्चिम अथवा इन दिशाओं के वासी अन्य स्थानों पर जाएँगे तो निर्वचन की प्रक्रिया ही यात्रा को सुगमित करती है। धर्मशालाओं, सरायों, मंदिरों, मस्जिदों, खान-पान एवं खरीददारी और दर्शनीय स्थानों पर यदि दुभाषिया मिल जाएँ तो मानो हमारी तमाम चिंताएँ मिट जाती है तथा यात्रा-भ्रमण आदि अधिक रोचक तथा उपादेय हो जाता हैं।

(i) **पर्यटन :** पर्यटन आज भारत में एक उद्योग बन चुका है। देश की आर्थिक व्यवस्था में भी इसका बड़ा महत्वपूर्ण योगदान है। राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों के लिए निवर्चकों या दुभाषियों जैसे यात्रा गाइड, की व्यवस्था हवाई अड्डों, होटल व व्यापारिक केंद्रों पर की जाती है। यह निर्वचन का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है जो न केवल पर्यटकों की तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति करता है, अपितु संस्कृतिक संबंधों के आदान-प्रदान और अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ीकरण तथा सहयोग में महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाता है।

(ii) **व्यवसाय :** राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर आज अनेक व्यापार समझौते, सामूहिक उद्यम तथा आयात-निर्यात की गतिविधियाँ आयोजित हो रही हैं। अरब से तेल के समझौते, पश्चिम से तकनीकी और देश के उत्तर से अनार, मेवे और फल, दक्षिण से भारी मशीनरी, पूर्व का हथकरघा एवं कलात्मक सामग्री और पश्चिमी भारत की वित्तीय गतिविधियाँ निर्वचन साधकों द्वारा ही सुगमित की जाती हैं। भारत से चिकित्सा, इंजीनियरिंग तथा कुशल कामगारों की सेवाएँ विदेशों में निर्यात करने की जटिल प्रक्रियाओं में निर्वचन की विभिन्न स्तरीय भूमिका रहती है।

7.4.6 राजनयिक गतिविधियाँ

विभिन्न देशों के मध्य दौत्य संबंधों एवं आपसी समझौतों, करार आदि के निष्पादन व अन्य अवसरों पर अक्सर निर्वचकों को देखा जा सकता है। महत्वपूर्ण संबोधन यथा गणतंत्र दिवस या स्वाधीनता दिवस आदि के अवसरों पर राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री के संबोधन का तुरंत अनुवाद या क्रमिक अनुवाद निर्वचन के माध्यम से किया जाता है। विदेशी राष्ट्राध्यक्षों के संबोधनों या राष्ट्राध्यक्षों की बैठकों में भी निर्वचक मौजूद होते हैं जो दो भिन्न भाषाओं के मध्य संवाद-सुगमित करते हैं।

7.4.7 संसद कार्यों हेतु

भारतीय संसद में भी सदस्य चूँकि देश भर के विभिन्न भागों का प्रतिनिधित्व करते हैं, अतः वे सभी पूर्ण रूप से हिंदी या अंग्रेजी में ही अपनी बात रखे यह आवश्यक नहीं। वे अपनी भाषा में अपनी बात रखने हेतु सभापति से अनुमति प्राप्त कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में संविधान के अनुच्छेद 348 के उपबंध के अधीन संसदीय कार्य हिंदी या अंग्रेजी में करने का प्रावधान है। अतः पूर्व सूचना के आधार पर कोई सदस्य यदि सभापति की अनुज्ञा से हिंदी या अंग्रेजी के अलावा किसी अन्य भाषा में अपने विचार व्यक्त करता है तो उसके हिंदी या अंग्रेजी में निर्वचन की व्यवस्था की जाएगी; साथ ही यदि हिंदी में कोई सदस्य बोलता है तो अंग्रेजी में उसका निर्वचन किया जाएगा। यही प्रक्रिया अंग्रेजी संबोधनों पर भी लागू होती है। सदस्यों की बैठकों के इस प्रकार के अनुवादों को सुनने की व्यवस्था होती है जिसे इच्छानुसार सुना जा सकता है, जबकि निर्वचक तुरंत इनका भाषांतर कर प्रौद्योगिकीय प्रविधियों द्वारा सदस्यों तक सतत पहुचाते रहते हैं।

संसद के सभापटल पर बजट अभिभाषण तथा अन्य प्रस्तुत प्रलेख सदैव द्विभाषिक रूप में प्रस्तुत किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति द्वारा संसद में संयुक्त अधिवे ान को संबोधित करने के उपरांत तुरंत उसका हिंदी या अंग्रेजी प्रारूप भी पढ़ा जाता है। प्रारूप पढ़ने की यह व्यवस्था प्रधानमंत्री के संबोधन के उपरांत भी होती है; यह कार्य भी निर्वचन का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है।

विशेष क्षमता वाले लोगों के लिए भी निर्वचन का एक और महत्वपूर्ण क्षेत्र है। देखने तथा बोलने की क्षमता से विहीन व्यक्तियों के मध्य सूचना-संवाद स्थापना के लिए भी निर्वचन की महती भूमिका है।

7.5 निर्वचन की प्रक्रिया

निर्वचन पूर्णतः एक मनोभाषिक गतिविधि है तथा इसका उत्पाद संभवतः अनुसृजन जैसा ही है। निर्वचक को मनो-शब्दकोश (Mental lexicon) की सहायता से तुरंत कंप्यूटर प्रणाली के अनुसार 'इनपुट' के आधारों पर प्रोडक्ट उपलब्ध कराना होता है। अतः निर्वचक को दोनों भाषाओं पर समान अधिकार होना चाहिए। साथ ही साथ दोनों भाषाओं के संकेतार्थ एवं व्युत्पत्तिपरक अर्थ का ज्ञान भी होना वांछित है। वह एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा की कोड व्यवस्था का इस्तेमाल करते हुए उस भाषा में अभिव्यक्त करता है। यानी निर्वचक पहले शब्दों से अर्थ ग्रहण करता है और फिर अर्थ को दूसरी (लक्ष्य) भाषा के शब्दों में संप्रेषित करता है।

निर्वचक ऊँची तनी हुई रस्सी पर चल रहे नट-सा होता है जिसकी सुरक्षा के लिए नीचे कोई जाल नहीं लगा होता। निर्वचन के दौरान कई प्रक्रियाएँ एक साथ चल रही होती हैं। स्रोतभाषा से आने वाले संदेश और लक्ष्यभाषा में जाने वाले संदेश-दोनों पर एक साथ और उसी समय काम हो रहा होता है। अतः गलती की कोई गुंजाइश न के बराबर है क्योंकि सद्यः संपन्नता के कारण भूल-सुधार का मौका नहीं होता। निर्वचन गतिविधि में कई प्रक्रियाएँ एक साथ चल रही होती हैं, जैसे-

(क) सुनने का प्रयास

निर्वचन की प्रक्रिया का प्रथम चरण निर्वचक द्वारा स्रोतभाषा में दिए जा रहे भाषण को सुनना होता है; तत्पश्चात उसे समझना और उसका विश्लेषण कर अर्थबोध करना होता है।

(ख) अल्प अवधि के स्मरण का प्रयास

प्रथम मनोभाषिक गतिविधि के उपरांत निर्वचक द्वारा स्रोतभाषा के वक्ता के आशय से बोधित सूचना को तब तक याद रखना होता है, जब तक कि उसे लक्ष्यभाषा में परिवर्तित नहीं कर दिया जाता। यह स्मरण अवधि इसलिए निश्चित काल की होती है क्योंकि निर्वचक के सामने तब तक 'अगला' पाठ वक्ता द्वारा प्रस्तुत किया जा चुका होता है।

(ग) अंतरण का प्रयास

पूर्व दोनों चरणों के उपरांत निर्वचक द्वारा स्रोतपाठ (भाषण/कथानादि) से गृहीत अर्थ या सूचना को लक्ष्यभाषा में अंतरण (Transference) या उसके बदले स्वरूप में उपलब्ध कराना शामिल है। इस चरण में स्रोतभाषा के विचारों का लक्ष्यभाषा के समतुल्यों द्वारा अंतरित (प्रतिस्थापित) किया जाता है। निर्वचन में यह कार्य मानसिक स्तर पर होता है।

(घ) बोलने का प्रयास

स्रोतभाषा के पाठ के श्रवण, बोधन, अर्थ ग्रहण के क्रम में इस सारी प्रक्रिया में मानसिक रूप से हुए अंतरण को लक्ष्यभाषा में शाब्दिक रूप देना या संप्रेषित करना ही बोलने के प्रयास में सम्मिलित है। इस स्तर पर संचित आशय को बोल कर व्यक्त किया जाता है।

इन सब बिंदुओं के अध्ययन से पता चलता है कि निर्वचन एक जटिल प्रक्रिया है। इसमें एक साथ कई मानसिक संसाधनों का प्रयोग होता है। निर्वचक को वाक्य को शुरू करते समय तथा वाक्य का अंत करते समय उपयुक्त शब्दों और वाक्य-संरचना का विशेष ध्यान रखना होता है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि हर भाषा की बनावट-बुनावट अलग होती है। निर्वचक के मुँह से जो स्वतः स्फूर्त लगता है उसके पीछे एकाधिक जटिल प्रक्रियाएँ साथ-साथ काम कर रही होती हैं। इनमें पाठ का अवबोधन, विश्लेषण, अंतरण, पुनर्सृजन, अभिव्यक्ति आदि एक साथ चलते हैं। अतः निर्वचन में श्रवण, पठन की भूमिका का साहचर्य रहता है। यह कुछ-कुछ विज्ञान तो है परंतु इसमें कलात्मक पक्ष भी प्रमुख रहता है। थियोडर सेवरी के अनुसार मूल छवि को चित्रकार अपनी कला से सुधारता भी है, यदि मूल वक्ता ने कोई त्रुटि मूल पाठ में कह दी है तो निर्वचन में उसका सुधार करते हुए कई बार लक्ष्य/स्थिति संदर्भ के अनुसार उसमें सौंदर्य बोध का समावेश भी कर दिया जाता है। सम्माननीय, परम सम्मानीय सुंदर-अति सुंदर, प्रसन्नता-हार्दिक प्रसन्नता और warm welcome-welcome गर्मजोशी आदि अभिव्यक्तियाँ अर्थांतरण नहीं सहजता का निर्माण करती है जो अनपेक्षित नहीं अपितु अधिकतर अपेक्षित होती हैं। निर्वचक यदि सुनने में विशेष ध्यान नहीं रखे तो स्रोतभाषा के शब्दों को भूल जाने का खतरा होता है। अतः यह सर्तकता से संपादित की जाने वाली गतिविधि है। तथ्य और आँकड़े एक भाषा से दूसरी भाषा में बिल्कुल सही संप्रेषित होने चाहिए अन्यथा मूल संदेश दूषित हो जाता है। कई बार वक्ता तथ्यात्मक भूल कर सकता है। उस स्थिति में निर्वचक को बेहद सावधानी से संदेश को संप्रेषित करना होता है। निर्वचक को अपनी वाक्-शक्ति एवं वाक्-पटुता पर पूरा नियंत्रण होना आवश्यक है; भूलवश भी कोई अवांछित ध्वनि या कथ्य पूर्णतः अनपेक्षित होता है। यह कार्य द्विस्तरीय होता है। पहले मूल वक्तव्य को इकाइयों में विभाजित कर उसका अर्थ ग्रहण और तत्पश्चात् इसका अंतरण और अंत में उसको बोलना : अर्थात् तीन चरण इस प्रक्रिया को संपन्न करते हैं :

- मूल भाषण/कथन को सुनना एवं समझना
- कथन को अंतरित करने की प्रक्रिया, तथा
- लक्ष्यभाषा में उसे कहना

7.5.1 विकोडीकरण (decoding)

निर्वचन करने के लिए सबसे पहली और महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया संदेश को ध्यानपूर्वक सुनना अर्थात् श्रवण है। तत्पश्चात् अन्य क्रमिक प्रक्रियाओं को निष्पादित करना है अर्थात् मूलपाठ यानि वक्ता के पाठ का विकोडन करना। यह विकोडन सर्वप्रथम पाठ के श्रवण से प्रारंभ होता है :

(i) **श्रवण/सुनना :** यदि निर्वचक या आशु-अनुवादक या दुभाषिया मूल वक्ता के भाषण को ठीक से नहीं सुन पाएगा तो वह संदेश को दूसरी भाषा में ठीक से संप्रेषित नहीं कर पाएगा। बोलते समय वक्ता का माइक ऑन होना चाहिए तथा निर्वचक के हेडफ़ोन में आवाज सही ढंग से आ रही है, यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए। इसके लिए तकनीकी स्टाफ़ की मदद ज़रूरी है। इसके अतिरिक्त निर्वचक को एकाग्रचित तथा मूल वक्ता और कथ्य के प्रति श्रवणनुराग जैसी भावना होनी चाहिए। सभा, गोष्ठियों और सद्य कार्यक्रमों, यथा खेलों आदि के समय खुले वातावरण में भी निर्वचकों के लिए ऐसे स्थान की व्यवस्था की जाती है जहाँ से सारा दृश्य स्पष्ट दिखाई दे तथा घटना का शोर एवं जन प्रतिक्रिया की आवाजें भी सुनाई दें परंतु इससे निर्वचन को मूलपाठ प्राप्त करने में कोई व्यवधान न हो।

(ii) **हाव-भाव, भंगिमाओं आदि इशारों से अर्थ को समझना :** निर्वचन एक प्रकार से मनोभाषिक अध्ययन जैसी प्रक्रिया है। मनुष्य कभी-कभी शब्दों के माध्यम से अपनी बात कहने में समर्थ नहीं हो पाता है, वह हकलाता है, हाथ या बाजू, अँगुलियाँ अथवा अपनी भाव-भंगिमाओं से मंतव्य स्वभावत; व्यक्त करता है। अतः संदेश को समझने में हाव-भाव, भंगिमाओं आदि का भी अपना महत्त्व है। हाथों के इशारे, आँखों ही आँखों में हो रहे इशारे, चढ़ी हुई त्योरियाँ, स्वर का तेज़ होना या नरम पड़ना आदि शारीरिक प्रभाव वक्ता की मनोदशा एवं दिए जा रहे वक्तव्य की पृष्ठभूमि, यथा देशभक्ति, जन-भावना तथा युद्ध आदि के प्रति वितृष्णा जैसे मूल संदेश को पुष्ट कर सकती हैं। एक अच्छा निर्वचक इनका सहारा ले कर अपने निर्वचन को ज्यादा संप्रेषणीय बना सकता है।

(iii) **विश्लेषण :** भाषण को समझने के लिए उसे ध्यान से सुनना ज़रूरी है। ध्यान से सुनना एक सक्रिय क्रिया है। इसके अलावा वक्ता के वाक्य के महत्त्वपूर्ण हिस्से पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है। इसके साथ-साथ भाषण के विषय के बारे में समुचित जानकारी का होना, वक्ता के झुकाव उसके वक्तव्य से संबंधित ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं मंतव्य, यथा राजनैतिक, आर्थिक व्यापार, प्रतिनिधि समूह; समझौते व द्विपक्षीय आर्थिक हितों की पृष्ठभूमि में कूटनीति आदि का ज्ञान तथा श्रोताओं के ज्ञान स्तर के बारे में बुनियादी जानकारी निर्वचक के लिए विश्लेषण और प्रक्रिया को सरल कर देती है। इनसे निर्वचन में मदद मिलती है। निर्वचक यदि चाहे तो कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य या आँकड़े एक कागज़ पर साथ-साथ नोट भी करता रह सकता है।

(iv) **विषय की समझ :** एक भाषा के संदेश को दूसरी भाषा में संप्रेषित करने के लिए पहले उसे ठीक से समझना आवश्यक है। निर्वचक के लिए विषयवस्तु की समझ ज़रूरी है। कई बार बैठक या सम्मेलन से पहले दौत्य संबंधी दस्तावेज या आपसी सहमति व संयुक्त रक्षा, व्यापार, समझौते आदि के वक्तव्य तथा घोषणा पत्रों से जुड़े दस्तावेज़ उपलब्ध कराए जाते हैं। उन्हें पहले ही पढ़कर निर्वचक यथोचित तैयारी के साथ निर्वचन का काम कर सकता है। विशेष रूप से तकनीकी विषय पर दिए जा रहे भाषण के संदर्भ में इसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। निर्वचक को किसी तकनीकी विषय में प्रयोग की जाने वाली पारिभाषिक शब्दावली की जानकारी अव   य होनी चाहिए। सार्वजनिक समारोहों तथा गणतंत्र दिवस तथा स्वाधीनता दिवस पर निर्वचन में प्रचुर मात्रा में देश की सुरक्षा, विकास एवं पुरस्कारों से संबंधित आँकड़े दिए जाते हैं, इन्हें पहले ही निर्वचकों को प्रायः उपलब्ध कर दिया जाता है।

(v) **शिक्षा तथा सामान्य ज्ञान :** निर्वचक का भाषा के क्षेत्र में उच्च शिक्षा प्राप्त होना तथा प्रशिक्षित होना आवश्यक है। इसके अलावा हर विषय के बारे में उसका सार्वभौम/वैश्विक (Universal/world knowledge) उच्च कोटि का होना चाहिए। इसका कारण यह है कि उसे किसी भी विषय पर निर्वचन करना पड़ सकता हे। विषय को समझे बिना वह निर्वचन के साथ न्याय नहीं कर सकता। इसके लिए बौद्धिक क्षमता भी ज़रूरी है। वास्तव में एक आदर्श निर्वचक चलता-फिरता विश्वकोश (Encyclopedia) जैसा होता है। उसके लिए समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं के माध्यम से जानकारियाँ हासिल करना अनिवार्य है। विषय विशेष के विशेषज्ञ निर्वचक भी उच्च स्तरीय सभाओं, सम्मेलनों तथा बैठकों में अपनी संवाद सेवा देते हैं; यथा रक्षा सौदों व सहमतियों तथा संयुक्त रक्षा अभियानों में रक्षा विशेषज्ञ ही अपने-अपने देशों के सेना प्रमुखों व

रक्षा मंत्रियों की बैठकों में निर्वचन कार्य करते है। बड़े राष्ट्रों की रक्षा सेवाओं में भाषा विज्ञानियों, अनुवादकों व निर्वचकों के अलग से सेवा-संवर्ग की व्यवस्था भी होती है।

(vi) भाषा : स्रोतभाषा की पूर्ण जानकारी के बिना संदेश को लक्ष्यभाषा में रूपांतरित नहीं किया जा सकता। लक्ष्यभाषा की पूर्ण जानकारी के बिना संदेश के साथ न्याय नहीं किया जा सकता। दोनों भाषाओं पर पूरी पकड़ के बिना निर्वचन का स्तर अच्छा नही हो सकता। निर्वचन के लिए अपने भाषा-ज्ञान में निरंतर वृद्धि करना आवश्यक है। निर्वचक को एक भाषा के मुहावरों, लोकोक्तियों आदि का दूसरी भाषा में समानार्थी मुहावरों व लोकोक्तियों आदि का भी ज्ञान होना चाहिए। हर भाषा की अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है निर्वचक को उसकी पूरी जानकारी होनी चाहिए। उसे दोनों भाषाओं के मिथक, लोक-संस्कृति, लोक-गीत, साहित्य और धार्मिक ग्रंथों आदि में प्रयुक्त शब्दों का ज्ञान होना चाहिए। उसे लोकप्रिय गीतों, गज़लों, कविताओं, श्लोकों और शेरो-शायरी आदि की जानकारी होनी चाहिए ताकि यदि वक्ता अपने भाषण में उनका प्रयोग करे तो निर्वचक बगलें न झाँकने लगे। निर्वचक का शब्द-भंडार विपुल तथा उसकी भाषा-शैली समृद्ध होनी चाहिए तभी वह उच्च कोटि का निर्वचन कर सकेगा। उसे भाषा की बारीकियों का भी पूर्ण ज्ञान होना चाहिए ताकि उससे निर्वचन करते समय कोई चूक न हो।

(vii) उच्चारण और शैली : निर्वचक को वक्ता के उच्चारण और उसके लहजे की समझ की जानकारी आवश्यक होती है अन्यथा वह संदेश को ठीक तरह से नहीं समझ पाएगा और गलत निर्वचन से अर्थ का अनर्थ कर देगा। उदाहरण के लिए भारतीय संदर्भ में प्रादेशिक उच्चारण और शैलियों में अंतर होता है। भारत के दक्षिणी हिस्से में बोली जाने वाली अंग्रेजी में कई शब्दों के उच्चारण, भारत के पूर्वी हिस्से में बोली जाने वाली अंग्रेज़ी के कई शब्दों के उच्चारण से भिन्न होते हैं। यह मातृ-भाषा के प्रभाव की वजह से होता है। इससे भाषा के उच्चारण की शैली भी प्रभावित होती है। पंजाब में स्कूल (School) 'सकूल' है तो पूर्वी भारत में यह 'इस्कूल' है। दक्षिण में 'आनर' (Honour) का उच्चारण 'हानर' भी कर दिया जाता है। पूर्व में 'स्पष्ट' का उच्चारण अक्सर 'अस्पष्ट' कर दिया जाता है। और 'वैल्यू' (Value) को 'भैल्यू' भी कहा जाता है। एक निर्वचक को इन उच्चारण शैलियों के प्रति सतर्क और सावधान रहने की आवश्यकता होती है। निर्वचक का अपना उच्चारण और शैली हमेशा मानक और त्रुटि-रहित होने चाहिए।

(viii) अस्पष्टता : कई बार वक्ता के भाषण में अस्पष्टता हो सकती है। यदि वक्ता की भाषा समृद्ध नहीं है या यदि उसे उस विषय की समुचित जानकारी नहीं है जिस पर वह बोल रहा है तो अस्पष्टता की संभावना बनी रहती है। यह वक्ता की गलती की वजह से हो सकता है और इस पर निर्वचक का कोई नियंत्रण नहीं होता है परंतु ऐसी स्थिति में वह भाषण अथवा सभा स्थल छोड़कर नहीं जा सकता है। अतः ऐसे समय में निर्वचक को चाहिए कि वह लक्ष्यभाषा में मूल संदेश को बाधित न होने दे। यदि निर्वचक का भाषा-ज्ञान व विषय-ज्ञान अव्वल दर्जे का हुआ तो वह स्थिति को सँभाल लेगा। उसे अपने सही अनुमान व विषय तथा वक्ता की पृष्ठभूमि के बारे में अपने पूर्व-ज्ञान की वजह से लक्ष्यभाषा में सही संदेश को संप्रेषित करने में मदद मिलेगी। यदि वक्ता की गलती की वजह से स्रोतभाषा में दिया जाने वाला संदेश अस्पष्ट हो तो भी निर्वचक का यह दायित्व है कि वह अपने ज्ञान तथा अपनी जानकारी के सहारे उस अस्पष्ट संदेश को भी लक्ष्यभाषा में यथासंभव स्पष्ट करके संप्रेषित करे, यानि निर्वचन को कुछ-कुछ सद्यः एवं मौखिक संपादक का कार्य भी करना पड़ सकता है।

किंतु कई बार वक्ता जान-बूझकर अपने भाषण में अस्पष्टता को बढ़ावा दे सकता है। यह उसकी रणनीति या तरकीब हो सकती है। कूटनयिक एवं राजनयिक वार्ताओं में इस चाल का इस्तेमाल टालने या थोड़ा और समय हासिल करने के लिए किया जाता है। ऐसी अवस्था में निर्वचक या आशु-अनुवादक को अपनी सूझ-बूझ का इस्तेमाल करते हुए लक्ष्यभाषा में भी संदेश को अस्पष्ट ही रखना चाहिए क्योंकि वक्ता का भी यही उद्देश्य होता है। निर्वचक को इन बारीकियों को समझना और इनमें अंतर करना आना चाहिए। इसके अतिरिक्त श्रोता के रूप में एकाग्रता का अभाव, एक साथ अनेक प्रकार की ध्वनियों का व्यवधान तथा अनेक प्रकार के तात्कालिक कारणों से उत्पन्न चुनौतियाँ भी निर्वचक के समक्ष आ जाती हैं, उनके प्रति भी निर्वचक को मानसिक रूप से तैयार रहना होता है।

7.5.2 अंतरण

अर्थ ग्रहण-बोधन के उपरांत संदेश को दूसरी लक्ष्यभाषा में व्यक्त करने की प्रक्रिया के विभिन्न चरण प्रारंभ होते हैं।

(i) पुनः प्रस्तुतीकरण का प्रयास : निर्वचन या भाषांतरण करते समय दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य अंतरण या पुनः प्रस्तुतीकरण का प्रयास है। स्रोतभाषा में कहे गए संदेश को सुनने के बाद निर्वचक या दुभाषिया के दिमाग में जो प्रक्रियाएँ चलती हैं उसे हम अंतरण या पुनः प्रस्तुतीकरण का प्रयास कहते हैं। यह लक्ष्यभाषा में संदेश को संप्रेषित करने से पहले की प्रक्रिया है। यह एक जटिल प्रक्रिया होती है जो लगातार निर्वचक के मनोमस्तिष्क में चल रही होती है जब वह वक्ता के अगले वाक्य को सुन रहा होता है और साथ-ही-साथ वक्ता के पिछले वाक्य का निर्वचन भी कर रहा होता है। वह लगातार अपने दिमाग में स्रोतभाषा के समतुल्य और समानार्थी शब्दों और पर्यायों की खोज कर रहा होता है। ऐसे समय में निर्वचक का दिमाग किसी स्वचालित मशीन की तरह काम करता है क्योंकि उसके पास अंतरण करते वक़्त केवल पलभर का समय होता है। यह एक भाषा के संदेश को समझकर (Decode) दूसरी भाषा में कूटबद्ध (Encode) करने की प्रक्रिया का मध्यम चरण होता है। इस पूरी प्रक्रिया में निरंतर समय का दबाव बना रहता है।

(ii) पूर्वानुमान : समय के दबाव से निपटने के लिए निर्वचक को वक्ता द्वारा बोले जा रहे शब्दों का सही पूर्वानुमान लगाना आना चाहिए। निर्वचन के संबंध में पूर्वानुमान क्या होता, आइए पहले इसे समझें। विद्वान वोलफ़्रैम विल्स के अनुसार पूर्वानुमान *''वक्ता द्वारा बोले जाने से पहले ही स्रोतभाषा की पाठ-इकाइयों की भविष्यवाणी एवं उनका निर्वचन है''*। इसे पहले से प्राप्त और संसाधित भाषायी प्रेरक (stimuli) के उत्तर के रूप में समझा जा सकता है। इसे हम ''पूर्वानुमान-संकेत'' कहते हैं।

इससे स्पष्ट है कि पूर्वानुमान निरंतर चलने वाली समझने की प्रक्रिया है जिससे अक्सर निर्वचक स्वयं भी अनभिज्ञ रहता है। निर्वचक संदर्भ, विषय-वस्तु, वक्ता की पृष्ठभूमि, उसके ज्ञान झुकाव अपने सामान्य ज्ञान आदि के आधार का सहारा लेकर तथा वक्ता के भाषण के संकेतों को ग्रहण करके आगे क्या बोला जाना है, इस बारे में सही पूर्वानुमान लगा सकता है। इससे निर्वचक खुद पर पड़ते समय के दबाव को कम करता है तथा अपने निर्वचन को और प्रभावशाली बनाता है। अक्सर खेलों या समारोहों में निर्वचक या आँखों देखा हाल सुनाने वाले, आने वाले गेंद या खिलाड़ी की हरकत तथा नेता के भाषण, यानि शब्द बोलने से पूर्व उसकी भाव-भंगिमा तथा शरीर के संचालनादि से ही अनुमान लगा लेता है और उसका उत्साहपूर्वक ऐलान/वाचन भी कर देता है।

सही पूर्वानुमान के लिए निर्वचक के मनोमस्तिष्क में विषय से संबंधित शब्द-सूची आ जानी चाहिए। वर्षों का अभ्यास, अनुभव तथा पहले की गई तैयारी इस काम में मदद करती है। सही समय पर संकेतों को ग्रहण करके निर्वचक पूर्वानुमान करने के कार्य में दक्ष हो सकता है। इससे निर्वचन अनुवाद जैसी बोझिलता से अलग अधिक सहज एवं स्वाभाविक प्रतीत होता है।

(iii) बोलने का प्रयास : निर्वचन की प्रक्रिया में बोलना भी एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है। किसी भी बैठक या सम्मेलन में, जहाँ निर्वचन की व्यवस्था होती है, वहाँ आप वक्ता को बोलते हुए सुनते हैं किन्तु निर्वचक के बोलने को समझते हैं। निर्वचक माध्यम होता है। वह वक्ता की आवाज़ होता है। वह मौखिक संदेश को अर्थ प्रदान करता है। यह अर्थ केवल शब्दों के माध्यम से संप्रेषित नहीं होता बल्कि इसमें स्वर का गुण, लहज़ा, गति, प्रबलता, लय, तान (Pitch) और अनुतान, बलाघात (Accent) आदि का भी महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

पेशेवर निर्वचक के भाषण की शैली हर दृष्टि से बिल्कुल सही होनी चाहिए। उसे स्पष्ट और जीवंत वक्ता होना चाहिए। उसकी आवाज़ ऐसी होनी चाहिए कि सुनने वाला ऊबे नहीं और देर तक उसे आराम से सुन सके। वक्ता, विषय और संदर्भ के अनुरूप ही उसे स्वर-लहरियों में उतार-चढ़ाव करना आना चाहिए। बोलते समय निर्वचक का चित्त शांत होना चाहिए और उसके ज़ेहन में कोई तनाव (Tension) नहीं होना चाहिए। भाषण, खेल, शोक समारोह अथवा मेले आदि दृश्यों के निर्वचन के दौरान किन शब्दों, वाक्यांशों या वाक्यों

पर बल (Stress) दिया जाना है और शब्दावली का क्लेवर क्या होगा, इसकी जानकारी उसे होनी चाहिए। इन्हीं कारणों से एक पेशेवर निर्वचक को प्रशिक्षण के दौरान अपनी खास-क्रिया, अपने शब्द-चयन, लय, स्वर-परिवर्तन और उच्चारण आदि को विशेष सावधानी से विकसित करने की आवश्यकता है।

निर्वचक को सरल भाषा-शैली में मूल वक्ता के कथन के अर्थ को श्रोताओं तक संप्रेषित करना चाहिए। कई बार शब्द के लिए शब्द रखने के बजाय भावानुवाद या व्याख्या करना बेहतर होता है।

इन बातों से स्पष्ट होता है कि निर्वचन या आशु-अनुवाद एक चुनौतीपूर्ण बौद्धिक क्रिया है।

7.6 निर्वचन के प्रकार

आइए, अब निर्वचन के प्रकारों के बारे में जानकारी हासिल करें।

हालांकि निर्वचन अपने पुराने स्वरूप में प्राचीन काल एवं मध्य युग में भी मौजूद था किंतु आज जिसे हम निर्वचन (Interpretation) के रूप में जानते हैं, उसकी शुरूआत प्रथम विश्व युद्ध के बाद हुई थी। किंतु यह आधुनिक निर्वचन-कला की प्रारंभिक अवस्था थी। उसके बाद के वर्षों में धीरे-धीरे विकसित होकर निर्वचन ने अपना वर्तमान स्वरूप प्राप्त किया है। अब यह पूरी तरह से एक वैज्ञानिक कार्य क्षेत्र बना गया है। विश्व भर में भाषाओं पर अच्छी पकड़ रखने वाले युवा अब इस कार्य क्षेत्र की ओर आकृष्ट हो रहे हैं।

किसी भी बैठक या सम्मेलन में किस तरह का निर्वचन चाहिए, इस आधार पर आज निर्वचन के कई प्रकार हैं; जैसे - (क) क्रमिक या क्रमागत या अनुगामी निर्वचन (Consecutive Interpretation), (ख) युगपत् निर्वचन (Simultaneous Interpretation), (ग) वक्ता के पास बैठ पर धीमी आवाज में किया गया निर्वचन (Whispered Interpretation), इंगित भाषा (Sign Language) में किया जाने वाला निर्वचन, (ङ) अदालतों (Courts) में किया जाने वाला निर्वचन, (च) किसी समूह (Community Interpretation) के लिए किया जाने वाला निर्वचन आदि। किंतु अधिकांश राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों एवं बैठकों, संयुक्त राष्ट्र संघ, विभिन्न देशों की संसद तथा द्विपक्षीय/बहुपक्षीय वार्ताओं के दौरान निर्वचन के जो मुख्य रूप से प्रचलित हैं, वे इस प्रकार है :

(क) क्रमिक या क्रमागत् या अनुगामी निर्वचन (Consecutive Interpretation)

(ख) युगपत् निर्वचन (Simultaneous Interpretation)

(ग) पास बैठ कर धीमी आवाज में किया जाने वाला निर्वचन (Whispered Interpretation)

आइए, अब एक-एक करके इनके बारे में जानें :

7.6.1 क्रमिक या क्रमागत निर्वचन (Consecutive Interpretation)

इसे अनुगामी या अनवरत निर्वचन भी कहते हैं। इस प्रकार के निर्वचन में पहले वक्ता बोलता है, फिर निर्वचक भाषण या बातचीत के उस अंश का निर्वचन करता है। इस प्रकार की निर्वचन-व्यवस्था में निर्वचक या तो वक्ता तथा शिष्ट-मंडल के अन्य सदस्यों के साथ ही बैठता है। अथवा वक्ता की बगल में खड़ा होता है। वह वक्ता की बात ध्यान से सुन रहा होता है और किसी कागज पर महत्वपूर्ण बातें नोट कर रहा होता है। जब वक्ता चुप होता है। तब निर्वचक उसके द्वारा कही गई बातों को एक भाषा से दूसरी भाषा में संप्रेषित करता है। इस प्रकार के निर्वचन में सामान्यतः वक्ता हर एक से पाँच मिनट के बीच रुकता है। आमतौर पर यह एक पैरा (अनुच्छेद) या एक विचार के अंत में होता है। वक्ता के रुकते ही निर्वचक कही गई बात को लक्ष्यभाषा में संप्रेषित कर देता है। यदि कभी वक्ता लगातार बोलता चला जा रहा हो और बीच में रुकने की बात भूल गया हो तो निर्वचक वक्ता से रुकने का आग्रह करता है। इसके बाद वह वक्ता की बोली हुई बात दूसरी भाषा में व्यक्त करता है।

क्रमिक निर्वचन एक-तरफा या दो-तरफा दोनों तरह का हो सकता है। यानी यह पारस्परिक (Reciprocal) भी हो सकता है और आपसी बातचीत के रूप में भी हो सकता है।

इसे इस रूप में समझा जा सकता है -

वक्ता → निर्वचक → श्रोता

व नि श्र

- **एक-तरफा क्रमिक या क्रमागत निर्वचन** की बानगी ऐसी होगी जैसे-वक्ता बोलता है, फिर निर्वचक बोलता है और यह क्रिया शृंखला के रूप में जारी रहती है।

  व न व न व न ....

  इस तरह किए जा रहे निर्वचन में श्रोता केवल सुनते हैं। वे चर्चा में हिस्सा नहीं लेते।

- **दो-तरफा या पारस्परिक (Reciprocal) क्रमिक या क्रमागत निर्वचन** में सिलसिला इस तरह से होगा पहले वक्ता बोलता है, फिर निर्वचक बोलता है और श्रोता निर्वचन को सुनते हैं। इसके बाद श्रोता हिस्सा लेते हैं जिसके बाद निर्वचक उनकी कही बात का निर्वचन करता है। यह शृंखला इस तरह चलती है :

  व न श्र न व न श्र न................

इस तरह के आशु-अनुवाद या निर्वचन में निर्वचक की दोनों भाषाओं पर समान और मजबूत पकड़ होनी आवश्यक है (यदि एक ही निर्वचक दोनों भाषाओं में निर्वचन कर रहा है) क्योंकि उसके लिए बारी-बारी से दोनों भाषाएँ स्रोतभाषा (Source language) भी हो जाएगी और लक्ष्यभाषा (Target language) भी।

क्रमिक निर्वचन प्रणाली में निर्वचक को महत्वपूर्ण बिंदु नोट करने होते हैं जिनकी मदद से वह बाद में निर्वचन करता है। बातचीत या भाषण के दौरान क्या नोट करना है और क्या नहीं, यह निर्वचक की प्रवीणता दर्शाता है। कई निर्वचक तेज लिखने और समय बचाने के लिए आशुलिपि (Short-hand) जैसी तकनीकों में इस्तेमाल करते हैं। इस प्रकार के निर्वचन में निर्वचक की स्मरण-शक्ति की भी परीक्षा होती है।

क्रमिक निर्वचन प्रणाली का इस्तेमाल छोटी बैठकों, बेहद तकनीकी या गोपनीय कानूनी अभिसाक्ष्य (Legal Deposition), रिकार्ड किए जाने वाले वक्तव्यों आदि के दौरान किया जाता है। इसके अलावा अदालत में किसी गवाह के लिए निर्वचन, साक्षात्कारों, आधिकारिक दौरों आदि के दौरान भी यह निर्वचन प्रणाली इस्तेमाल होती है।

7.6.2 तात्कालिक या युगपत निर्वचन (Simultaneous Interpretation)

यह समक्षणिक या समकालिक निर्वचन प्रणाली है। इसमें मूल वक्ता के जारी भाषण के साथ-साथ निर्वचक निर्वचन करता रहता है। इस प्रणाली में निर्वचक एक ध्वनिरोधी कक्ष (Sound proof Booth) में हेडफोन (Head Phone) लगाकर बैठता है। हेडफोन के माध्यम से वह मूल वक्ता का भाषण सुनता है तथा माइक (Mike) के सहारे वह साथ-साथ उस भाषण का निर्वचन करता चला जाता है। ध्वनिरोधी कक्ष पारदर्शी काँच का होता है जिससे वक्ता निर्वचक को दिखता रहे। सम्मेलन कक्ष में बैठे श्रोता हेडफोन लगा कर संबंधित चैनल का चयन करके अपनी रुचि की भाषा में किए जा रहे निर्वचन को सुन सकते हैं।

तात्कालिक या युगपत् एक बेहद चुनौतीपूर्ण और जटिल प्रक्रिया होती है क्योंकि निर्वचक को एक साथ सुनना, समझना और बोलना होता है। चूक की कोई गुंजाइश नहीं होती। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित क्रिया-कलाप घटित होते हैं -

(i) स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा का एक साथ संसाधन (processing)।

(ii) वक्ता के संदेश का वाक्य, अर्थ और संदर्भ के स्तरों पर लगातार एक साथ पूर्वानुमान करना।

(iii) स्रोतभाषा भाषा में कहे गए वक्ता के संदेश को लगातार लक्ष्यभाषा में संप्रेषण के अनुकूल बनाना।

(iv) निर्वचक या दुभाषिया का अपने संप्रेषण की भाषा-शैली, लय व लहजे को वक्ता के अनुरूप बनाना।

तात्कालिक (युगपत्) निर्वचन करने वाले निर्वचक के पास सही शब्द, सही मुहावरे आदि ढूँढने का समय नहीं होता। उसे अपने पूर्व-ज्ञान व स्मृति के सहारे निर्वचन की प्रक्रिया सफलता से संपन्न करनी होती है।

तात्कालिक (युगपत्) निर्वचन में दो निर्वचक दो अलग-अलग कक्षों में बैठकर काम करते हैं। एक निर्वचक 'क' भाषा से 'ख' भाषा में निर्वचन करता है। दूसरा निर्वचक 'ख' भाषा से 'क' भाषा में निर्वचन करता है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ, भारतीय संसद के दोनों सदनों तथा यूरोपीय संसद आदि में निर्वचन या आशु-अनुवाद की यही प्रणाली इस्तेमाल की जाती है। यह सर्वाधिक इस्तेमाल की जाने वाली निर्वचन प्रणाली है।

7.6.3 पास बैठकर धीमी आवाज में किया जाने वाला निर्वचन (Whispered Interpretation)

इस निर्वचन प्रणाली में माइक या हेडफोन का इस्तेमाल नहीं होता। यहाँ निर्वचक शिष्ट मंडल के सदस्य/सदस्यों के पास बैठकर वक्ता के भाषण का धीमी आवाज में साथ-साथ निर्वचन करता जाता है। यह तरीका युगपत् निर्वचन वाला ही होता है। किंतु यहाँ श्रोताओं की संख्या कम होती है। यह प्रणाली द्वि-पक्षीय बैठकों आदि में इस्तेमाल की जाती है जहाँ अधिकांश श्रोता वक्ता के भाषण की भाषा समझते हैं। केवल कुछ ही श्रोता उस भाषा से अनभिज्ञ होते हैं तथा उनके लिए ही ऐसे निर्वचन की व्यवस्था की जाती है।

इसके अतिरिक्त खेलों, समारोहों अथवा अन्य गतिविधियों, पर्यटन आदि में भी निर्वचक घटनाओं एवं दृश्यों को देखता एवं समझता है। तत्पश्चात् उनका विवरण श्रोताओं एवं दर्शकों लक्षित वर्ग तक अपनी वाणी से पहुँचाता है। इसमें निर्वचक यदि किसी वाहन में चलाय-मान होता है तो वह दृश्यों की जानकारी किसी फिल्म जैसी पद्धति से देता है और यदि वह किसी स्थान पर बैठा है तो वह घटना को देखकर तुरंत उसका विवरण प्रस्तुत करता है। इसमें वह कभी-कभार तो क्रमिक या क्रमागत पद्धति अपनाता है जैसे 26 जनवरी या 15 अगस्त को दिए गए भाषण का विवरण या फिर वह क्रिकेट या मेले के दृश्यों का विवरण युगपत् प्रणाली में देता है। ऐसी परिस्थितियों में निर्वचन को दर्शकों या श्रोताओं द्वारा उत्पन्न व्यवधान, ध्वनि, संगीतादि की समस्या से भी निपटना पड़ता है। इस प्रक्रिया में निर्वचन, घटना को देखता है, उसका अर्थबोधन अपनी क्षमता से करता है, उचित शब्दों में उसका कोडीकरण (encode) करता है और फिर उसका वाचन करता है।

7.7 निर्वचन कार्य की व्यावहारिक जटिलता और प्रभावकारिता

7.7.1 प्रभावीकारक : गुणात्मक

एक जटिल प्रक्रिया होने के कारण निर्वचन या आशु-अनुवाद की गुणवत्ता कई कारणों से प्रभावित होती है :

- निर्वचक या आशु-अनुवादक की पेशेवर अर्हता, उसके ज्ञान की गहराई, स्रोतभाषा व लक्ष्यभाषा की उसकी जानकारी तथा उनपर उसकी पकड़, मुहावरों, लोकोक्तियों आदि की उसकी समझ, साहित्य, संस्कृति, परंपरा आदि का उसका ज्ञान इत्यादि।
- निर्वचन या आशु-अनुवाद की तकनीकों और तौर-तरीकों के बारे में निर्वचक के प्रशिक्षण का स्तर तथा उसकी गहराई, निर्वचक का पेशेवर अनुभव आदि।
- तकनीकी साधनों और साज़ो-सामान की गुणवत्ता और उनका स्तर; जैसे-हेडफोन, माइक, वक्ता के भाषण की आवाज की प्रबलता या क्षीणता, काम करने की जगह (Booths), बैठने की व्यवस्था, कक्ष में ध्वनि-प्रदूषण से उत्पन्न बाधा, सार्वजनिक समारोह में निर्वचक के बैठने या विवरण देने के स्थान की उपयुक्तता आदि।
- सत्र/गोष्ठी/सम्मेलन/आयोजन/घटना से पहले या उसके दौरान बैठक/सम्मेलन के विषयों की जानकारी देने वाले दस्तावेजों का निर्वचक के द्वारा अध्ययन एवं पूर्व-तैयारी।
- बैठक/सम्मेलन के आयोजकों व सभापति का निर्वचन भाषांतरण से जुड़ी बाधाओं का ज्ञान तथा निर्वचकों या दुभाषियों से उनका सहयोग।
- निर्वचन करते समय निर्वचक का स्वास्थ्य तथा उसकी मानसिक अवस्था।
- निर्वचन में वाक् शक्ति और सटीक एवं स्पष्ट शुद्ध उच्चारण।

7.7.2 तनावकारक

निर्वचन के पेशे को बेहद तनावपूर्ण पेशा माना जाता है। निर्वचक हर बार निर्वचन करते समय अग्नि-परीक्षा से गुजरता है। कई स्थितियाँ इस पेशे को तनावपूर्ण बनाती हैं -

- बहुत धीरे या बहुत तेज़ बोलने वाले वक्ता।
- लिखा हुआ भाषण पढ़ने वाले वक्ता।
- बार-बार विषय बदलना तथा विषय से जुड़े दस्तावेज उपलब्ध न होना।
- हेडफोन या माइक का ठीक से काम न करना जिसके कारण मूल वक्ता की आवाज को ठीक से न सुन पाना।
- निर्वचन-कक्ष (booth) की स्थिति या उसके छोटे आकार की वजह से हो रही असुविधा।
- मूल वक्ता के लहज़े या गलत उच्चारण की वजह से संदेश का बाधित होना।
- तकनीकी विषय-वस्तु पर हो रहा दुरूह या क्लिष्ट भाषण।
- मूल वक्ता के भाषण के बीच में हो रही टोका-टोकी या शोर-शराबा आदि।
- निर्वचन-कक्ष (booth) का बेहद गरम या बेहद ठंडा तापमान वगैरह।
- घटना या आयोजन में अचानक मची अफरातफरी।
- खुले स्थान पर मौसम आदि की प्रतिकूलता।
- भावावेश में वक्ता द्वारा हाव-भाव आदि द्वारा ही आशय की अभिव्यक्ति।
- आयोजन घटना भाषण का अनावश्यक विस्तारण आदि।

यदि निर्वचक इन में से किसी भी वजह से तनावपूर्ण स्थिति में होगा तो उसके द्वारा किए जा रहे निर्वचन का स्तर और उसकी गुणवत्ता प्रभावित होगी। सही निर्वचन के लिए निर्वचक का तनाव-रहित तथा शांत-चित्त होना बेहद आवश्यक है।

7.7.3 निर्वचन कार्य की व्यावहारिक समस्याएँ

निर्वचन अनुवाद की ही एक विधा है। परंतु यह 'अनुवाद' की परिधि से कुछ अलग भी 'कुछ' है। इसके विभिन्न पक्षों पर चर्चा से पीछे यह स्पष्ट भी हो चुका है। निर्वचन में सातत्य और सहज संप्रेषण की प्रधानता है; अतः निर्वचक को कुछ बिंदुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है; जैसे-

- अनुवादक के समान उसके पास पर्याय-चयन का अवकाश नहीं होता है अतः उसे अलग-अलग परिवेश में प्रयुक्त होने वाले शब्दों तथा उनके अर्थ का सही-सही ज्ञान होना चाहिए। राजनीतिशास्त्र में state या nation का अर्थ प्रदेश/राष्ट्र नहीं अपितु राजनीतिक रूप से एक स्वतंत्र सत्ता का परिचायक भी है। जर्मनी में Chancellor का अर्थ कुलपति/कुलाधिपति नहीं अपितु चांसलर या राष्ट्र प्रमुख या राष्ट्रपति होता है, जबकि सामान्य प्रयोग में इनके अर्थ भिन्न होंगे।
- निर्वचक को अक्सर अलग-अलग राज्यों, राष्ट्रों के निवासियों द्वारा एक ही शब्द के विभिन्न उच्चारण यथा एजुकेशन-एडुकेशन (Education) तथा इंटरप्रेन्युर-अंटरप्रेन्युर (Entrepreneur), एंटरप्राइज (Entreprise) तथा ऐसे ही अन्य उच्चारणों को सटीकता से ग्रहण कर उसका संप्रेषण करना चुनौती है।
- पर्यटन क्षेत्र में निर्वचन करते समय जाति, धर्म, राष्ट्र से संबंधित आचार-विचार-व्यवहार हेतु प्रयोग होने वाले शब्दों के अंतरण में विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है। दलित शब्द के अर्थ में अनेक बार गलतफहमी उत्पन्न हो चुकी है।
- कभी-कभी स्थानीय/राष्ट्रीय हितों के लिए विशेष कथन भी निर्वचक को तत्काल ढूँढने पड़ते हैं। गौना, सप्तपदी, मृत्योपरांत संस्कार शब्द, खाने-पीने और पहरावे के लिए प्रयुक्त शब्द विदेशियों एवं अन्य धर्मियों के लिए कुतूहल उत्पन्न करते हैं और समझने में क्लिष्ट संकल्पनाएँ बन जाती हैं। इन्हें सामान्य एवं सहजता में तत्काल समझाना निर्वचक दुभाषिए के लिए चुनौतीपूर्ण कार्य होता है।

- बैठकों, सम्मेलनों और संसदीय कार्यवाहियों के निर्वचन में निर्वचक को बिना सूचना के भी कार्य करना होता है। कई बार दृश्य श्रव्य या कलात्मक प्रस्तुतियों को भी संप्रेषित करना होता है, इसके लिए भी निर्वचक को तैयार रहना पड़ता है और अपने आपको किसी भी नई परिस्थिति में ढालने, तदनुरूप संबोधन संप्रेषण खोजने की चुनौती के लिए मानसिक रूप से सक्षम होना पड़ता।
- निर्वचक का कार्य एक दुधारी तलवार पर चलने जैसा दुष्कर कार्य है, उसे मूल की मर्यादा को बचाना परंतु दर्शक/श्रोता को भा जाने वाला संप्रेषण करना होता। वह एक महान सेतु निर्माता, सांस्कृतिक संबंध पोषक एवं महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय संबंधों की निर्मिति का माध्यम होता है। अतः उसका दायित्व अत्यंत नाजुक होता है, जिसके प्रति सदैव सावधान रहने की चुनौती है।

7.8 निर्वचन और अनुवाद

निर्वचन (Interpretation) और अनुवाद (Translation) के बीच के अंतर को रेखांकित करते हुए सेलेस्कोविच कहते हैं :

''निर्वचन (आशु-अनुवाद) चित्रकारी (Painting) की तरह है जबकि अनुवाद फ़ोटोग्राफी की तरह है। फ़ोटोग्राफ़ी शब्दों को एक भाषा से दूसरी भाषा में हूबहू वैसे ही रखती है। वह उनके अर्थ समझाने को प्रयास नहीं करती। दूसरी ओर पेंटिंग (चित्रकारी) शब्दों के अर्थ ढूँढ़ती है। वह किसी भी चीज़ को चित्रकार की निगाह से देखते हुए संदेश को संप्रेषित करती है। इस तरह से निर्वचन दो भाषाओं के बीच शाब्दिक संदेशों को आदान-प्रदान है। वह 'शब्द-के-लिए-शब्द' जैसे अनुवाद से कहीं बढ़कर है''।

अनुवाद की प्रक्रिया लिखित और धीमी होती है। अनुवादक के पास भूल-सुधार के लिए पर्याप्त समय होता है, किंतु निर्वचन की प्रक्रिया मौखिक एवं त्वरित है। उसे संदेश को यथाशीघ्र संप्रेषित करना होता है। इसमें भूल-सुधार के लिए समय न के बराबर होता है क्योंकि संदेश संप्रेषण का कार्य लगभग 'उसी समय' हो रहा होता है। निर्वचक को उपयुक्त शब्दों, वाक्य-विन्यास और शैली का चयन 'फटाफट' करना होता है क्योंकि वह वक्ता के लगभग साथ-साथ ही बोलने का कार्य कर रहा होता है। इसलिए एक निर्वचक को विवेकशील भी होना चाहिए ताकि वह वक्ता के हाव-भाव और भंगिमाओं या तेवर आदि को समझकर तथा उनका सही अंदाजा लगाकर अपने निर्वचन को और अधिक सशक्त और सटीक बना सके।

बी. ग्लेमेट के अनुसार ''निर्वचक चीजों को एक 'टेलीस्कोप' के माध्यम से देखता है जबकि अनुवादक उन्हें एक माइक्रोस्कोप के माध्यम से देखता है। हालांकि ये दोनों तकनीकें अलग हैं लेकिन एक-दूसरे को प्रति-लाभ प्रदान करती हैं''।

ग्लिचमैन ने अनुवाद और निर्वचन के अंतर को विस्तार से स्पष्ट किया है -

अनुवाद	निर्वचन
1. पाठ (Text) पहले किसी समय तैयार किया गया था।	1. भाषण अभी (Now) और यहीं (Here) दिया जा रहा है। घटना सद्यः घटित हो रही है।
2. पाठ पूरी तरह तैयार उत्पाद है। वह स्थायी है और उसे बदला नहीं जा सकता।	2. भाषण अभी चल रहा है। उसका विकास हो रहा है। वह गतिशील अवस्था में है और उसके जारी रहने के बारे में पहले से कुछ नहीं कहा जा सकता।
3. शुरू से अंत तक पाठ की जाँच की जा सकती है। इसे अलग रखा जा सकता है और बाद में इसकी जाँच फिर से की जा सकती है।	3. भाषण के शब्द और ध्वनियाँ धीरे-धीरे कानों से मिटते जाते हैं। केवल वहीं तक याद रहता जितना निर्वचक को याद रहता है।

4.	पाठ पूरी तरह से शाब्दिक होता है। इसके साथ कोई अनुपूरक सूचना नहीं होती है। पाठ किस माहौल और हालत में लिखा गया, यह अनुवादक को स्पष्टतः पता नहीं होता।	4.	भाषण को संपुष्ट करने के लिए वक्ता के हाव-भाव, भंगिमाएँ आदि मौजूद होती हैं। निर्वचक उसी माहौल में मौजूद होता है जिसमें भाषण दिया जा रहा है।
5.	अधिकांश पाठ एक ही लेखक की उपज होते हैं। अनुवादक अपनी सोच और लेखन-शैली को एक समय में एक ही लेखक के अनुरूप बनाता है।	5.	निर्वचक को एक ही बैठक या सम्मेलन या घटना में थोड़े-थोड़े समय के अंतराल पर कई वक्ताओं-घटनाओं की भाषा-शैली के अनुरूप ढलना पड़ता है।
6.	निर्वचक को किसी बैठक या सम्मेलन के तनाव और उत्तेजना की पूरी जानकारी होती है। अक्सर वह इन्हें स्वयं भी महसूस करता है।	6.	निर्वचक को किसी बैठक या सम्मेलन के तनाव और उत्तेजना की पूरी जानकारी होती है। अक्सर वह इन्हें स्वयं भी महसूस करता है।
7.	प्रकाशन से पहले अनुवादक का मसौदा लिखा जा सकता है। इसका पुनरीक्षण हो सकता है।	7.	निर्वचक और उसके श्रोताओं के बीच किसी छलनी की तरह काम करने के लिए कोई संपादक नहीं होता।
8.	अनुवादक पाठकों से भी उतना ही दूर हो सकता है जितना लेखक से। उसका अपना पाठ भी स्थायी हो सकता है।	8.	निर्वचन प्रत्यक्षत उपस्थित हुए श्रोताओं के समूह को संबोधित होता है। उसके बारे में श्रोताओं की राय वहीं और उसी समय मिल सकती है। लक्षित वर्ग निर्वचक के उसी रूप को वास्तविकता में पहचानता है।
9.	लेखक और पाठक एक-दूसरे से संपर्क में नहीं होते; यह दूरी समय और स्थान, दोनों की होती है और यह दूरी बहुत ज़्यादा हो सकती है।	9.	वक्ता और श्रोता एक ही बैठक या सम्मेलन के एक ही कमरे या स्थल पर एक ही समय में भाग ले रहे होते हैं।

- अनुवाद की अपेक्षा निर्वचन या संभाषण एक प्राचीन विधा है हालाँकि इसमें अनेक मत है। कुछ विद्वान इसे मौलिक लेखन के समकक्ष ही शुरू हुआ मानते हें जबकि कुछ विद्वानों का मानना है कि निर्वचन विधिवत मौलिक लेखन से पूर्व भी आम व्यवहार को संपादित करने हेतु अपने आशय को दूसरों तक पहुँचाने के लिए प्रयुक्त होता रहा है और जीवन की विभिन्न गतिविधियों को पूर्ण करने के लिए व्याख्या या निर्वचन की आवश्यकता बनी रही है। बाद में यह अन्य भाषा के मौखिक अनुवाद के रूप में भी प्रयुक्त होने लगा। इस दृष्टि से विधिवत अनुवाद से यह प्राचीन विधा है।
- अनुवाद में भाषा का स्थान स्रोतभाषा (SL) और लक्ष्यभाषा (TL) में नहीं बदलता। निर्वचन में वही भाषा कभी SL बनती है तो कभी TL.
- निर्वचन की विशेषता इस तथ्य में भी है कि यह सहज एवं स्वभाविक विधा है क्योंकि इसके माध्यम से अनुवाद के कृत्रिम साधनों की अपेक्षा तत्काल सहज विधान से निर्वचक द्वारा यह कार्य संपादित होता है।
- सामान्य अनुवाद की अपेक्षा निर्वचन सामाजिक एवं सांस्कृतिक सेतु निर्माण के साथ-साथ वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विश्वग्राम की अवधारणा को मूर्त करता है। यही नहीं यह अनेक संवेदी मुद्दों को भी सहज एवं आपसी समझबूझ से निष्पादित करने में सहायक होता है। वार्तालाप एवं मध्यस्थता हेतु जब दो विभिन्न गुटों के मध्य तालमेल हो तो निर्वचन एवं निर्वचक की भूमिका केंद्रीय हो जाती है।
- भारत की भाषिक एवं सांस्कृतिक विविधता की जहाँ विशिष्टताएँ एवं विलक्षणताएँ है वही ये राज्य (Nation या State) के लिए चुनौतियाँ भी प्रस्तुत करती हैं। स्वाभाविक है आपसी समझबूझ से ही राज्य की एकता

एवं अखंडता को बनाए रखा जा सकता है। ऐसी स्थिति में लिखित या औपचारिक अनुवाद की अपेक्षा निर्वचन ही उत्तम साधन होता है। अतः यह राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संबंधों का पोषक भी है।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि अनुवाद तथा निर्वचन दोनों ही स्रोतभााषा और लक्ष्यभाषा के मध्य होने वाली एक भाषिक प्रक्रिया है परंतु इसके बावजूद दोनों दो अलग विधाएँ है। हालाँकि अनुवाद और निर्वचन, दोनों के लिए ही स्रोतभाषा (Source Language) और लक्ष्यभाषा (Target Language) की पूरी जानकारी होनी चाहिए तथापि अनुवाद और निर्वचन की प्रक्रियाएँ, अपेक्षाएँ; कार्य-जटिलताएँ और अपेक्षित परिणाम भिन्न होने से ये दोनों विधाएँ अलग-अलग रूप में सामने आती है।

7.9 निर्वचन, भावानुवाद और सारानुवाद

यह भी स्पष्टतः देखा जा सकता है कि निर्वचन (आशु-अनुवाद) भावानुवाद अथवा सारानुवाद से भी एक अलग अनुवाद विधा है। भावानुवाद में जहाँ मूल का केंद्रीय भाव लेकर उसका संदर्भ सहित पल्लवन कर लिया जाता है, वहीं सारानुवाद में मूल के केंद्रीय पाठ को अनुवाद में बनाए रखते हुए उसका प्रत्यक्ष तौर पर संक्षिप्तीकरण किया जाता है; जबकि निर्वचन में यथासंभव मूलपाठ/वाचन को यथावत् दूसरी भाषा में बिना किसी विशेष घटाव-जुड़ाव से प्रस्तुत किया जाता है। यदाकदा निर्वचक वक्ता की गति के आधार के अनुसार सूक्ष्म संक्षेपण कर लेता है और यदि मूलपाठ/वाचन में कुछ कमियाँ (gaps) हों तो उन्हें भी पूरा करने की कोशिश अवश्य करता है। परंतु यहाँ ध्यान देने योग्य है कि निर्वचन प्रक्रिया भावानुवाद या सारानुवाद से विशिष्ट रूप से भिन्न है तथा इसमें सैद्धांतिक रूप से सार या भाव जैसा अंतरण करने का उद्देश्य निहित नहीं होता है। निर्वचक मूल के प्रति निष्ठा, ईमानदारी और तटस्थता के लिए प्रतिबद्ध होता है। संक्षिप्तानुवाद और सारानुवाद नामक इकाई (इकाई 8) में इस पर हम और भी चर्चा करेंगे।

अतः हम कह सकते हैं कि अनुवाद और निर्वचन में काफी समानताओं के साथ-साथ असमानताएँ भी हैं जो इन्हें दो शाखाओं के रूप में अलग-अलग अस्तित्व प्रदान करती हैं।

7.10 निर्वचक से अपेक्षाएँ

निर्वचन की प्रक्रिया निर्वचक-अनुवादक से द्विविध गुणों की अपेक्षा करती है। वह वास्तविक समय में भौतिक और मनोभाषिक स्थिति से जूझता है। अतः उसके कार्य की कुछ विशिष्ट अपेक्षाएँ हैं :

- निर्वचक के लिए आवश्यक है कि उसका स्रोत और लक्ष्यभाषा पर समान अधिकार हो।
- दोनों ही भाषाओं, लक्ष्य एवं स्रोतभाषा में धाराप्रवाह बोलने की क्षमता होनी चाहिए।
- निर्वचक के लिए मूल के प्रति वस्तुनिष्ठता व श्रोता के प्रति सम्मान का भाव आवश्यक है।
- निवर्चक को एक अच्छा आशु अनुवादक होना चाहिए ताकि वह सहज एवं सरल तथा अर्थ वाहक भाषा का प्रयोग करने में सक्षम हो और लक्ष्य या श्रोता वर्ग के मुहावरे, विन्यास तथा अर्थक्षम संप्रेषण में अपने भाव को व्यक्त कर सके।
- निर्वचक को केवल अनुवाद या मूल के प्रति मोहयुक्त नहीं रहना चाहिए।
- निवर्चन में अर्थग्राहक व अर्थक्षम भाषा को होना अपेक्षित रहता है, क्योंकि सभाएँ या चर्चाएँ अक्सर बोझिल हो जाती हैं और भाषणों एवं व्याख्यानों का केवल अनुवाद करने से लक्षित वर्ग में भी बोझिलता का भाव पैदा हो जाता है। इसीलिए निर्वचक अपनी अर्थक्षम व लोचदार भाषा से उसे सरस एवं जीवंत बनाए रख सकता है।
- निर्वचक को सांस्कृतिक संबंधों को प्रगाढ़ करने हेतु नवोन्मेषी एवं नवाचार पद्धतियों के प्रयोग से परहेज नहीं करना चाहिए। विशेष नव-वैश्विक दौर में विश्वनागरिक के दृष्टिकोण को बनाए रखना होगा।

7.11 सारांश

अनुवाद का क्षेत्र काफी विस्तीर्ण है, जिसमें निर्वचन का महत्वपूर्ण स्थान है। निर्वचन प्राचीनतम संवाद विधाओं में से एक है तथा संभवतः मौलिक लेखन के समकक्ष या उससे भी प्राचीन काल में विकसित हो गया था। निर्वचन अनुवाद कार्य से अनेक प्रक्रियाओं एवं प्रविधियों में भिन्न है, जहाँ अनुवादक को पर्याप्त अवसर, साधन एवं अन्य सुविधाएँ उपलब्ध रहती हैं, वहीं निर्वचक को तत्काल, बिना सूचना अथवा विषम परिस्थितियों में अपने आपको व्यवस्थित करने की चुनौती बनी रहती है। धार्मिक, सांस्कृतिक, पर्यटन, खेल, व्यापार एवं दौत्य कार्यों और राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय स्तर पर यह सभा सम्मेलनों, संसदीय कार्यों को सुसंपादित करने में अनिवार्य भूमिका का वहन करता है। निर्वचन कार्य अपने में चुनौतीपूर्ण तो है ही यह आपसी हितों को प्रगाढ़ करने का अति-उपयोगी साधन भी है। अलग-अलग स्तरों पर संपादित होने वाली निर्वचन प्रक्रिया में निर्वचक में विभिन्न अपेक्षीय गुणों में उसका स्रोत एवं लक्ष्यभाषा - श्रोता या दर्शक वर्ग की भाषा, उनके स्वभाव, संस्कृति तथा हितों और विशिष्ट अभिव्यक्तियों से सुपरिचय आवश्यक है। निर्वचन कार्य की जटिलताओं के कारण निर्वचक को निश्चय ही तलवार की धार पर चलना होता है; अतः उसमें सद्यः परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार अपने आपको ढालना, नई व्यवस्था, प्रौद्योगिकी और एक अच्छे श्रोता, वक्ता, संप्रेषक की बहु-आयामी भूमिका का वहन करना होता है।

निर्वचन के क्षेत्र का पर्याप्त विस्तार होने से इसमें रोजगार के भी बहुतेरे अवसर सृजित हो रहे हैं। पारंपरिक क्षेत्रों, यथा संसद, संयुक्त राष्ट्र संघ, अन्य सभा सम्मेलनों, एवं पर्यटन के अलावा धार्मिक, आर्थिक एवं मीडिया क्षेत्रों में भी निर्वचकों की भूमिका महत्वपूर्ण सिद्ध हो रही है।

नए वैश्विक दौर में आपसी संबंधों और विकास की गतिविधियों को गति देने तथा परस्पर हित साधन में भी निर्वचन की महती भूमिका है।

इन तथ्यों से स्पष्ट है कि निर्वचन एक गहन और चुनौतीपूर्ण प्रक्रिया है। बहु-भाषिक विश्व में आज के समय में अंतरराष्ट्रीय संबंधों के विकास और स्थायीकरण की प्रक्रिया में संपन्न होने वाली विभिन्न गतिविधियों, बैठकों व सम्मेलनों में यह एक अनिवार्य घटक है।

7.12 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. निर्वचन या आशु-अनुवाद की परंपरा पर प्रकाश डालते हुए उसके प्रयोजन क्षेत्रों का परिचय दीजिए।
2. निर्वचन की आवश्यकता किन-किन क्षेत्रों में सर्वाधिक है? सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. निर्वचन की परिभाषा देते हुए निर्वचन तथा अनुवाद के बीच के अंतर को स्पष्ट करें।
4. निर्वचन की प्रक्रिया के बारे में बताते हुए यह भी स्पष्ट कीजिए कि विकोडीकरण, कोडीकरण तथा बोलने के प्रयास का क्या महत्व है?
5. निर्वचन की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में बताएँ। साथ ही निर्वचक या दुभाषिए का तनाव बढ़ाने वाले कारकों पर भी विचार कीजिए।
6. निर्वचन के कितने प्रकार होते हैं, विस्तार से बताइए।
7. क्रमिक निर्वचन और तात्कालिक निर्वचन में क्या अंतर है? स्पष्ट कीजिए।
8. समसामयिक भारतीय संदर्भ में निर्वचन की संकल्पना, प्रक्रिया और प्रकार पर एक विस्तृत लेख लिखिए।

7.13 शब्दावली

निर्वचन, भाषांतरण, तात्कालिक निर्वचन, क्रमिक निर्वचन, युगपत, क्रमागत, प्रबलता, गति, सारानुवाद, बलाघात, अनुतान।

7.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- कृष्ण कुमार गोस्वामी, 2008, 2012, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।
- कृष्ण कुमार गोस्वामी, अन्नपूर्णा सी. और ओम प्रकाश प्रजापति (सं.), 2014, अनुवाद की नई परंपरा और आयाम, नई दिल्ली, प्रकाशन संस्थान।
- Gargesh, R. & K.K. Goswami (Eds.), Translation and Intepreting, University of Delhi, New Delhi, Orient Longman.
- Garzone, Gwliana, 2002, Interpreting in the 21st Century: Challenges & Opportunities, N. America, John Benjamins Pub. Co.
- Gile, Daniel 2009, Basic Concepts and Models for Interpreter & Translator Training –John Benjamin Pub. Co.
- Interpretation: Concept and Process – Shimla, 2008, Delhi, Frank Bros. & Co.
- James, Roderick 2002, Conference Interpreting Explained–2nd Ed., Manchester, St. Jerome Publishing Co.
- Nolan, James, 2005, Interpretation – Multilingual Matters.
- Pochhacker, F., 2002, the Interpreting Studies Reader, UK, Routledge.
- Pochhacker, Franz 2004, Introducing Interpreter Studies, London, Routledge.

इकाई 8 सारानुवाद और संक्षिप्तानुवाद

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 सारानुवाद

8.2.1 सारानुवाद से तात्पर्य

8.2.2 सारानुवाद की आवश्यकता

8.3 प्रयोजन-क्षेत्र

8.3.1 जनसंचार-पत्रकारिता और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

8.3.1.1 मुद्रित पत्रकारिता

8.3.1.2 इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

8.3.2 संसद

8.3.3 सभा-सम्मेलन आदि के विवरण

8.3.4 प्रशासन एवं विधि

8.3.5 साहित्य

8.3.6 पर्यटन-भ्रमण

8.4 सारानुवाद की प्रक्रिया

8.5 सारानुवाद का वैशिष्ट्य

8.6 सारानुवाद और अनुवाद

8.7 सारानुवाद और भावानुवाद

8.8 सारानुवाद की सीमाएँ एवं संभावनाएँ

8.9 सारानुवाद का एक उदाहरण

8.10 सारांश

8.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

8.12 शब्दावली

8.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.0 उद्देश्य

सारानुवाद अनुवाद की एक विशिष्ट विधा है तथा इसका प्रयोजन क्षेत्र भी व्यापक है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी :

- सारानुवाद एवं संक्षिप्तानुवाद का अर्थ एवं आवश्यकता बता सकेंगे;
- सारानुवाद के प्रयोजन क्षेत्रों से परिचित हो सकेंगे;
- सारानुवाद की प्रक्रिया एवं विशिष्टताओं को समझ सकेंगे;
- सारानुवाद का अनुवाद और भावानुवाद से संबंध स्पष्ट कर सकेंगे; तथा
- सारानुवाद की सीमाओं और आने वाले समय में इसकी उपयोगिता बता सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

अनुवाद प्रक्रिया के खंड एक और दो में आप अनुवाद प्रक्रिया, अनुवाद प्रकार, अन-अनुवाद्यता के साथ-साथ अनुवाद परीक्षण, मूल्यांकन, समीक्षा आदि के विषय में जानकर अनुवाद की प्रकृति, उसकी समस्याओं और अनुवाद की गुणात्मकता जैसे विविध पहलुओं से परिचय प्राप्त कर चुके हैं। इससे आप यह भलीभाँति समझ चुके हैं कि अनुवादक को किस प्रकार अनुवाद की विभिन्न प्रविधियों को अपनाते हुए अनुवाद कर्म में आने वाली सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषिक चुनौतियों से पार पाता है। दो भाषाओं में संरचनागत भिन्नता तो होती ही है; उनके संदर्भगत अर्थ संस्कृति-समाज सापेक्ष होने से अन्यार्थ की प्रतीति भी कराते हैं। अलग-अलग विधियों के आधार पर ही अनुवाद के वर्गीकरण भी सामने आते हैं। अनूदित पाठ की प्रामाणिकता एवं गुणात्मकता का प्रश्न भी महत्वपूर्ण है। इसके लिए आपने पुनरीक्षण, मूल्यांकन तथा समीक्षा के जरिए अच्छे और मानक अनुवाद के महत्वपूर्ण बिंदुओं पर भी जानकारी प्राप्त की। इसी क्रम में इस खंड की प्रथम इकाई में आप अनुवाद की एक अन्य विधा निर्वचन (आशु-अनुवाद) पर आप पहले ही चर्चा कर चुके हैं।

प्रस्तुत इकाई में हम अनुवाद की एक और विधा सारानुवाद पर चर्चा करेंगे। सारानुवाद अर्थात् सार+अनुवाद यानि सार रूप में अनुवाद। सारानुवाद में मूलपाठ के कथ्य, सार अर्थात् प्रमुख कथ्य का अनुवाद किया जाता है। अनुवाद के इस जटिल रूप में स्रोतपाठ में निहित मूल अथवा केंद्रीय बिंदुओं की पहचान कर उनका अनुवाद किया जाता है। मूलकृति का यह संक्षिप्त/सार वास्तव में मूल के संपूर्ण कथ्य को संप्रेषित करता है। संक्षेप किया गय अनूदित पाठ ही सारानुवाद कहलाता है अतः इसे संक्षिप्तानुवाद भी कहते हैं। इस प्रकार एक ही अनुवाद विधा के दो नाम हैं क्योंकि सिद्धांततः सारानुवाद करते समय पहले मूल पाठ के केंद्रीय भाव अथवा कथ्य का संक्षेपण किया जाता है। यानि उसे संक्षिप्त रूप में अर्थवान बनाकर बाद में उसी को विधिवत सार रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस इकाई में हम अनुवाद के इस प्रारूप के तात्पर्य, उसकी आवश्यकता, प्रयोजन क्षेत्र, प्रक्रिया तथा अनुवाद एवं भावानुवाद से तुलना-बिंदुओं आदि पर विस्तार से विचार करेंगे।

8.2 सारानुवाद और संक्षिप्तानुवाद

जब अनुवाद प्रक्रिया में मूलपाठ के समग्र पाठ का अनुवाद करते समय स्थान, समय की तात्कालिकता के अनुसार अनावश्यक विस्तार से बचते हुए अत्यंत सटीक कसे हुए शब्दों में मूलपाठ के कथ्य का सार अथवा केंद्रीय भाव व्यक्त किया जाता है, तो इसे सारानुवाद का नाम दे दिया जाता है। इसे ही संक्षिप्तानुवाद भी कहते हैं। कभी-कभी यह अनुकूलित या संपादित अनुवाद भी कहलाता है। इस प्रकार के अनुवाद में अनुवादक एक प्रकार से मूलपाठ से संबद्ध उद्धरणों, विश्लेषणों और अन्य बिंदुओं को छोड़ पाठक के लिए एक लघु पाठ अथवा संक्षिप्त पाठ तैयार करता है जो एक प्रकार का संक्षेपण ही होता है परंतु यह अनूदित रूप में पाठक को मूलपाठ का सही-सही अंदाजा और केंद्रीय भाव को संप्रेषित करने में समर्थ होता है। शिक्षार्थियों की सुविधा और विषय की केंद्रीयता को ध्यान में रखते हुए यहाँ हम अनुवाद के इस रूप को सारानुवाद के नाम से ही अभिहित करेंगे; जो वस्तुतः संक्षिप्तानुवाद, अनूकूलित अथवा संपादित अनुवाद सभी रूपों का प्रतिनिधित्व करता है। सारानुवाद से क्या तात्पर्य है और उसकी क्या आवश्यकता है, अब हम इन प्रश्नों पर आगे विचार करेंगे।

8.2.1 सारानुवाद से तात्पर्य

सारानुवाद का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है सार के रूप में अनुवाद। दूसरे शब्दों में, सार और अनुवाद दो शब्दों के योग से ही सारानुवाद बना है। मूलभाषा की किसी कृति के पाठ में निहित मुख्य कथ्य का संक्षेपण कर उसमें से सार निर्धारित करना, तदनंतर उसका लक्ष्यभाषा में अनुवाद करना ही सारानुवाद है। इसे यूँ भी कहा जा सकता है कि मूलपाठ का संपूर्ण अनुवाद न करके केवल उसके केंद्रीय विचार का अनुवाद करना। सारानुवाद की प्रक्रिया जाहिर तौर पर सरल प्रतीत होती है परंतु वास्तव में यह सामान्य अनुवाद से अधिक जटिल और दोहरी भी है, क्योंकि प्रत्येक कृति अथवा पाठ किसी विशेष विचार अथवा विवरण के संप्रेषण के उद्देश्य से लिखा जाता है। मूलपाठ के इस केंद्रीय अथवा मुख्य कथन को विकसित करने के लिए अथवा स्पष्ट करने के लिए उसके इर्दगिर्द कुछ उदाहरण

तथ्य और अनेक विचार तानेबाने के रूप में मूल लेखक द्वारा रचे बुने जाते हैं। इन्हें उपविचार भी कहा जाता है जो केंद्रीय भाव या विचार की पीठिका से प्रारंभ होकर उसके विचार और निष्कर्ष आदि में परिणत होते हैं। वास्तव में मूलपाठ के इसी केंद्रीय विचार को लक्ष्यभाषा में क्रमबद्ध और संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करना ही सारानुवाद है। यह सारानुवाद मूल कृति के मुख्य कथ्य को प्रकट करता है। यह भी कहा जा सकता है कि जब मूलभाषा के केंद्रीय भाव को लक्ष्यभाषा में क्रमबद्ध और संक्षिप्त रूप में अनूदित किया जाता है तो यह सारानुवाद कहलाता है। मुद्रित माध्यमों में, विशेष रूप से समाचारपत्रों, पत्रिकाओं और विवरणिकाओं में इस प्रकार के संक्षिप्त साररूपी अनुवाद अक्सर देखे जाते हैं जो सुदीर्घ रचना अथवा समाचार या रिपोर्ट की संक्षिप्त परंतु केंद्रीय भावपरक सूचना प्रस्तुत करते हैं।

8.2.2 सारानुवाद की आवश्यकता

आज विश्व में परिस्थितियाँ बदल रही हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों का विश्व व्यापार राष्ट्रों के मध्य अधिकाधिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक संबंध तथा विश्व मौद्रिक व्यवस्था आदि ऐसे उभरते हुए नवीन क्षेत्र परस्पर हित के कारण एक दूसरे से जुड़ते जा रहे हैं। अब विश्व एक इकाई हो गया है। इस स्थिति में प्रति क्षण हमें यह जानने की आवश्यकता प्रतीत होती है कि कहाँ, किसने क्या कहा, क्या हुआ और क्या लिखा? अनुवाद ही एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा अन्य भाषाओं के साहित्य (गद्य और पद्य) से हम परिचित होते हैं। साथ ही अन्य देशों के विचार, अनुसंधान कार्य, राजनीतिक-हलचल, सामाजिक-सांस्कृतिक विचारधाराएँ भी प्राप्त होती हैं। आज आवश्यकता इस बात की है कि विश्व की सभी भाषाओं के जानकार हमारे देश में हों और जब जिस भाषा से अनुवाद की आवश्यकता हो, करवाया जा सके। मानव जाति दूर-दूर तक फैली हुई है। ऐसे में अनुवाद के द्वारा सभी एक दूसरे के समीप आ जाते हैं और यही अनुवाद की सबसे बड़ी विशेषता बनकर उभरती है।

वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देशों के मध्य विकास, सहयोग, अनुसंधान, वित्तीय सहयोग और अनेक दूसरे अन्योन्याश्रित क्रिया-कलाप अत्यधिक संख्या में क्रियान्वित किए जा रहे हैं। परिणामस्वरूप, अन्य देशों के साथ-साथ अपने ही देश के सुदूर क्षेत्रों से पर्याप्त जानकारी आवश्यक होती है। मनुष्य के पास समय और साधन की कमी है। अनुवादक के द्वारा किया गया कार्य कम समय में सभी को उपलब्ध हो जाता है। अनुवाद नए और पुराने के बीच एक कड़ी का कार्य करता है। एक देश को दूसरे से जोड़ना और एक ही देश के दो अंचलों को जोड़ना अनुवाद के द्वारा ही संभव है। ज्ञान के क्षेत्र में जिस प्रकार से क्रांति आई है उससे भी देशों के बीच सहयोग और परस्पर ज्ञान के आदान-प्रदान की आवश्यकता बढ़ी है। वास्तव में सूचना और ज्ञान के नए सागर को तत्काल ग्रहण योग्य सुलभ स्वरूप बनाने में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह अतीत को वर्तमान से जोड़ने का एक महत्वपूर्ण साधन है।

विश्व संस्थाओं के स्तर पर संसार की प्रमुख भाषाओं - अंग्रेजी, चीनी, जापानी, जर्मन, फ्रांसीसी, रूसी, अरबी से अनुवाद की निरंतर आवश्यकता बनी रहती है। यह भी ज्ञात है कि इतने बड़े वैश्विक फलक के स्तर पर संपन्न, चर्चाओं, गतिविधियों, सम्मेलनों आदि की तत्काल पूरी की पूरी प्रस्तुतियाँ सभी पक्षधारियों को उपलब्ध कराना संभव नहीं है। इस दृष्टि से अनुवाद के साथ-साथ भाषिक विश्लेषण करने वाले विशेषज्ञों का महत्व बढ़ गया है। यानि संक्षिप्त और सारानुवाद का क्षेत्र न केवल व्यापक है अपितु कुछ मामलों में यह केंद्रीय रूप से अपरिहार्य भी है। रिकॉर्ड किए गए भाषणों अथवा आशुलिपि में उपलब्ध लंबे-लंबे वक्तव्यों के सार तैयार कर तात्कालिक आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। सामाजिक दृष्टि से अनुवाद का महत्व अत्यधिक बढ़ जाने के कारण ही सारानुवाद तत्काल सूचनाओं और जानकारियों की उपलब्धता के साधन के रूप में लगातार महत्वपूर्ण होता जा रहा है।

सारानुवाद का एक महत्वपूर्ण ग्रहीता वर्ग है न्यायालयों के वकीलों और न्यायधीशों का। अक्सर न्यायालयों के फैसले विस्तृत और अनेक परिशिष्टों वाले होते हैं। साथ ही न्यायालयों में जब निचली अदालत के मामलों को उच्च अदालत, जैसे कि उच्च न्यायलय अथवा सर्वोच्च न्यायलय में प्रस्तुत किया जाता है तो पिछले मामलों के पूरे दस्तावेज यथावत हर बार प्रस्तुत नहीं किए जा सकते अपितु उनकी संक्षिप्त रिपोर्ट या सार ही अनूदित कर प्रस्तुत किया जाता है। कुछ मामलों में पूरे विवरण न्यायालल के रिकॉर्ड हेतु बाद में प्रस्तुत किए जाते हैं।

इस पृष्ठभूमि के साथ संक्षिप्तानुवाद और सारानुवाद की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। साहित्य, शोध, विधि, न्याय, व्यापार, संस्कृति, कार्यालयी अनुवाद, पर्यटन सम्मेलन, संसद, श्रेष्ठ रचनाएँ, सामान्य ज्ञान पत्रकारिता, वैचारिक आदान-प्रदान आदि की दृष्टि से संक्षिप्तानुवाद या सारानुवाद अनिवार्य हो गया है। हम कम समय में अधिक जानना चाहते हैं। इसका एक मात्र साधन संक्षिप्तानुवाद या सारानुवाद है। कहना न होगा कि सारानुवाद का प्रयोजन क्षेत्र काफी व्यापक है और वर्तमान समाज की आवश्यकता।

8.3 प्रयोजन-क्षेत्र

अनुवाद की हर विधा का अपना-अपना विशिष्ट प्रयोग क्षेत्र है। सारानुवाद का भी अपना विशिष्ट व्यापक प्रयोग क्षेत्र है जिसमें जनसंचार, पत्रकारिता और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, संसद, सभा-सम्मेलन, प्रशासन और कार्यविधि, साहित्य, पर्यटन-भ्रमण इत्यादि तथा दूसरे क्षेत्र जैसे; प्रशासन और न्यायालय सम्मिलित हैं।

8.3.1 जनसंचार-पत्रकारिता और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

सारानुवाद का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है-जनसंचार। जनसंचार में सामान्यतः विस्तृत जानकारियों को क्रमबद्ध और व्यवस्थित रूप में ढालकर पाठक अथवा श्रोता या दर्शक वर्ग की आवश्यकता, रुचि, तात्कालिकता और सामाजिक-सास्कृतिक पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में ढालकर संगत एवं स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया जाता है। जनसंचार के दो महत्वपूर्ण अंग हैं; पत्रकारिता और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया।

8.3.1.1 मुद्रित पत्रकारिता

सूचना के निर्वाध रूप को सुगम बनाने के लिए विश्व स्तर पर आपसी समन्वय और सहभागिता की वचनबद्धता है। परिणामस्वरूप, विश्व के एक भाग से लेकर दूसरे भाग तक सूचनाएँ, जानकारियाँ और घटनाओं के सीधे विवरण संवाददाता, समाचार एजेंसियों अथवा फीचर एजेंसियाँ भेजती हैं। इन सूचनाओं को प्रौद्योगिकी के विभिन्न माध्यमों जैसे टेलीफोन, मोबाइल, फैक्स, ईमेल, इंटरनेट के साथ-साथ डाक अथवा उपग्रह-सहायित अन्य प्रणालियों द्वारा समाचारपत्रों, पत्र-पत्रिकाओं के संपादकीय कार्यालयों तक पहुँचाया जाता है। सूचना भेजने वाली एजेंसियाँ अंग्रेजी, हिंदी अथवा दूसरी राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय भाषाओं का प्रयोग करती हैं। अतः उनका लक्ष्यभाषा के अनुरूप अनुवाद किया जाता है। परंतु यह अनुवाद प्राप्त समस्त मूलपाठ अथवा जानकारी या दस्तावेज़ का न होकर केवल सारानुवाद होता है क्योंकि लक्ष्यवर्ग की अपनी विशिष्ट आवश्यकताएँ होती हैं। भारत में ही देखा जाए तो कुल भारतीय परिदृश्य में अंग्रेजी, हिंदी तथा अनेक दूसरी भारतीय भाषाओं में मूल सामग्री प्राप्त होती है। इसका अनुवाद किया जाता है और पत्र-पत्रिका विशेष के भाषा माध्यम के अनुरूप उसे प्रस्तुत किया जाता है। महत्वपूर्ण है कि समाचारपत्रों में समसामयिक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, विकासात्मक गतिविधियों की जानकारी के साथ-साथ सरकारी संगठनों तथा संसद और विधान सभाओं में संपन्न होने वाली सुदीर्घ चर्चाओं से संबंधित सामग्री छापी जाती है। यह सामग्री काफी साररूप में तथा अनूदित रूप में ही हमारे सामने आती है। अक्सर समाचार पत्रों में हम विभिन्न पृष्ठों के बाईं तरफ समाचार संक्षेप, न्यूज़ डाइजेस्ट और न्यूज़ कैप्स्यूल इत्यादि देखते हैं जो सारानुवाद का एक और उदाहरण है। भारतीय पत्र-पत्रिका जगत में सारानुवाद की परंपरा भारतेंदु हरिश्चंद्र के समय से ही देखने में आ रही है जिन्होंने हिंदी समाचारपत्र, 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' में अंग्रेजी के शीर्षक देने की शुरुआत की और साथ ही समाचारों की संक्षिप्त सूचना 'समाचारावली' को 'समरी ऑफ न्यूज़' के नाम से प्रकाशित किया था। आज यह समस्त समाचारपत्रों, पत्रिकाओं का एक प्रस्तुति रूप बन गया है। पत्रिकाओं में भी अक्सर सारानुवाद देखने को मिलता है जब किसी लंबी समाचार शृंखला को सामग्री के बीच में बॉक्स अथवा रंगीन कॉरीडॉर में दिया जाता है। यही नहीं नई घटनाओं और खोजी समाचारों के साथ उससे संबद्ध पिछली घटनाओं का सार बिंदुवार भी दिया जाता है; इससे अनावश्यक विस्तार से बचते हुए पाठक-लक्षिता वर्ग को सर्वांगीण जानकारी दी जाती है। इस प्रकार जनसंचार में सारानुवाद का प्रयोग व्यापक पैमाने पर होता है।

8.3.1.2 इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के अंतर्गत परंपरागत रूप से रेडियो और टेलीविजन को रखा गया है। इंटरनेट सहायित माध्यम में अब इस श्रेणी में आ रहे हैं। विश्व भर में रेडियो तथा टेलीवीजन के लाखों कार्यक्रम प्रतिदिन प्रसारित किए जाते हैं। इनमें कार्यक्रम तथा समाचार दोनों ही होते हैं। सामान्य कार्यक्रमों के संदर्भ में हम जानते हैं कि उनके निर्माण की लंबी प्रक्रिया व अनुसंधान होता है परंतु प्रसारित कार्यक्रमों में श्रोता अथवा दर्शक 'फिनिश्ड प्रोडक्ट' को ही जानता है न कि उस सारी सामग्री जिसके आधार पर वह 'फिनिश्ड' अथवा दिखाया सुनाया गया कार्यक्रम होता है। समाचारों के मामलों में भी कमोबेश सारानुवाद का सहारा लिया जाता है क्योंकि समाचार एजेंसियों अथवा संवाददाताओं के विभिन्न भाषाओं के माध्यम से तो लंबी-लंबी रिपोर्ट या डिस्पैच प्राप्त होते हैं जिनका संक्षेपण किया जाता है और अनुवाद कर क्षेत्रीय अथवा राष्ट्रीय प्रसारण में सम्मिलित कर लिया जाता है। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन के समाचार कक्ष में यह प्रत्यक्षतः देखा जा सकता है जहाँ मूलपाठ से एक पाठ सारानुवाद के रूप में तैयार कर लिया जाता है और बाद में उसका अनुवाद क्षेत्रीय भाषाओं में किया जाता है। रेडियो न्यूज़रील तथा संसद समाचार इसका उदाहरण है। फीचर तथा दस्तावेजी कार्यक्रमों में भी इसी प्रकार ढेर सारी सामग्री से एक संक्षिप्त पाठ तैयार किया जाता है जो एक बड़े परिदृश्य अथवा व्यापक दृष्टिकोण को समेटता है तथा कार्यक्रम की अवधि, लक्ष्य वर्ग की रुचि तथा आवश्यकता एवं भाषायी माँग के अनुरूप सारीकृत कर प्रसारित कर किया जाता है। ई-माध्यम भी अब समाचारों की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहे हैं क्योंकि आज अधिकांश ई-न्यूज पेपर पढ़ना चाहते हैं जो प्रकाषित पत्रा का प्रतिरूप होता है, परंतु कभी यह अलग संक्षिप्त संस्करण भी होता है। अनेक समाचारों का सार आज विभिन्न केबल माध्यमों तथा इंटरनेट साइट्स और मीडिया की अपनी आधिकारिक साइट्स पर उलब्ध होते हैं।

8.3.2 संसद

संसद की कार्यवाही को आपने सीधे प्रसारित होते देखा होगा। अतः यह तो आपको विदित है कि भारतीय संसद में हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में कार्यवाही होती है। सदस्यों को पूर्व सूचना देने पर भारतीय भाषाओं में बोलने की अनुमति भी होती है। परिणामस्वरूप, हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में प्रस्तुत वक्तव्यों का अंग्रेजी में अनुवाद और अंग्रेजी से हिंदी में तात्कालिक अनुवाद आशु अनुवाद के रूप में किया जाता है। यही नहीं दैनिक बहसों के भा णों का सार तैयार कर अगले दिन सदस्यों ने सभा प्रारंभ होने से पूर्व बाँट दिया जाता है ताकि पिछले दिन की बहसों के बारे में सदस्यों द्वारा उठाए गए मुख्य मुद्दों की जानकारी मिल सके। अक्सर यह सामग्री लंबी बहस का संक्षिप्त रूप होती है जो साररूप में पूरी कार्यवाही पर प्रकाश डालती है तथा हिंदी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में तैयार की जाती है। संसद में कार्यवाही के संक्षेपों और सारानुवाद प्रक्रिया सभा समाप्त होने के तुरंत बाद शुरू होकर देर रात तक चलती रहती है। संसद की कार्यवाही का विधिवत रूप में प्रकाशन भी किया जाता है। अंग्रेजी में भाषणों का सारानुवाद छापा जाता है जबकि हिंदी में इन्हें मूल रूप में छापा जाता है। ज्ञातव्य है कि संसद की यह गतिविधि त्वरित रूप में संपन्न की जाती है और अत्यधिक सतर्कता बरती जाती है ताकि अनूदित सामग्री सार रूप में मूल भाषण की गरिमा और पूरे आषय को व्यक्त कर सके। वास्तव में सारानुवाद के लिए यह एक कसौटी का क्षेत्र है। व्यावहारिक दृष्टि से संसद तथा विधान सभाओं में सारानुवाद का प्रयोग व्यापक पैमाने पर होता है।

8.3.3 सभा-सम्मेलन आदि के विवरण

आपसी सहयोग, समझ-बूझ, विकास, आर्थिक प्रगति आदि परिप्रेक्ष्यों के अंतर्गत विभिन्न सरकारी, निजी और क्षेत्रों द्वारा समायोजित की गई संगोष्ठियों, सभाओं, सम्मेलनों तथा संवाद इत्यादि की कार्यवाहियों का भी अनुवाद आमतौर पर सार के रूप में तैयार किया जाता है। विभिन्न राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय बाध्यताओं (विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोश, एशियाई विकास बैंक तथा अन्य वित्त पोषक एजेंसियाँ) और नियमों के अंतर्गत इनकी जानकारी सभी पक्षधारियों को देना भी आवश्यक होता है। अतः इनका अनुवाद किया जाता है। यह अनुवाद संक्षिप्त रिपोर्ट के रूप में चर्चाओं तथा निष्कर्षों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करता है। विभिन्न संस्थानों द्वारा अपनी वार्षिक रिपोर्ट और प्रोफाइल आदि में भी इसी प्रकार सारानुवाद किया जाता है। अंतरराष्ट्रीय सभाओं यथा संयुक्त

राष्ट्र, विश्व संस्थाओं, वित्त संस्थाओं के संभा   ाणों के भी सारानुवाद सभी मुख्य भाषाओं में किए जाते हैं। यह इस दृष्टि से आवश्यक है कि विश्व संस्थाओं में सभी देशों की भागीदारी बन सके। यही नहीं इन सभाओं में बहुभाषिकता की स्थिति को देखते हुए भी सारानुवाद की आवश्यकता होती है।

8.3.4 प्रशासन एवं विधि

भारत में द्विभाषिकता की स्थिति के अनुरूप विभिन्न कार्यालयों विशेषकर केंद्रीय सरकार और उसके अधीनस्थ कार्यालयों में हिंदी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं का प्रयोग होता है। इसीलिए सारे देश को क, ख और ग क्षेत्रों में भी बाँटा गया है। कई बार कुछ मामलों में पूर्व में हुई लंबी कार्यवाही अथवा विस्तृत संदर्भों का तिथिवार और क्रमवार संक्षेपण तैयार कर संबंधित मामले के संदर्भ में उद्धृत किया जाता है। यह अक्सर सारानुवाद ही होता है, जो पूरी कार्यवाही के मुख्य कथ्य और तथ्य को प्रस्तुत करता है। विभिन्न मामलों पर टिप्पणी और पत्रों के मसौदे बनाते समय भी सारानुवाद का सहारा लिया जाता है, ताकि मामले से संबंधित विभिन्न अधिकारियों और संदर्भों के आलोक में लिए गए फैसलों को एक सुनियोजित भाषायी बंध में तैयार किया जा सके कि वह संबंधित (तों) के लिए निर्णय और उसके भावी परिणामों के प्रति स्पष्ट बयानी कर सके।

विधि और न्यायालयों में भी सारानुवाद की आवश्यकता बढ़ रही है, क्योंकि अब कुछ दस्तावेज अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी में भी आने लगे हैं। परंतु अभी भी कुछ न्यायालयों में इन सब दस्तावेजों को केवल अंग्रेजी में ही प्रस्तुत करने का प्रावधान है। परिणामस्वरूप सार के रूप इन्हें अनूदित कर प्रस्तुत किया जाता है। फैसले देते समय न्यायधीश पिछले संदर्भों पर विस्तृत मनन करते हैं जिसके लिए उन्हें लिए गए फैसलों के सारांश अथवा सारानुवाद अपेक्षित होते हैं ताकि वे वर्तमान मामलों पर पिछले निणयों के आलोक में गौर कर सके। विधि और प्रशासन के इस क्षेत्र में सारानुवाद के लिए अनुवादकों को न केवल तकनीकी शब्दावली का ज्ञान अपेक्षित होता है अपितु कार्यक्षेत्र की संस्कृति, गरिमा और व्यवहार आदि की भी जानकारी अपेक्षित होती है। विधि क्षेत्र की प्रकृति के अनुरूप दस्तावेजों की आवश्यकता सदैव बनी रहती है परंतु इतनी बढ़ी मात्रा में इन्हें सदैव साथ रखना संभव नहीं होता है; अतः मुख्य दस्तावेजों की संक्षिप्ति या सार बनाकर तत्काल संदर्भ हेतु तैयार कर रख लिया जाता है।

8.3.5 साहित्य

साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद भाव प्रधान होते हैं परंतु उसमें भाषायी जादूगरी भी कम महत्वपूर्ण नहीं होती। साहित्य के अनुवाद को सामान्यतः सारानुवाद की श्रेणी में नहीं रखा जाता, परंतु जब किसी साहित्यिक विधा की सामग्री का अनुवाद किसी दूसरी विधा में किया जाता है तो उसे सारानुवाद कहा जा सकता है। साहित्यिक सामग्री का सारानुवाद अपने आप में विशेष चुनौती का क्षेत्र है क्योंकि यह सूचना-प्रधान न होकर भाव संप्रेषण और मूलकृति के तारतम्य को बनाए रखने का कार्य होता है। नाटक, जीवनी, वृतांत, गल्प आदि में सारानुवाद की उपयोगिता होती है जब इन्हें हम किसी दूसरी विधा में प्रस्तुत करते हैं। शेक्सपीयर के नाटकों के कथा अनुवाद सारानुवाद ही हैं। इसी प्रकार देवकी नंदन खत्री के कई खंडों में रचित चंद्रकांता का एक ही खंड में अंग्रेजी अनुवाद भी सारानुवाद का एक उदाहरण है।

8.3.6 पर्यटन-भ्रमण

खेल, यात्रा, रोमांच और साहसिक गतिविधियाँ अक्सर व्यक्ति को अपने निवास क्षेत्र से बाहर जाने के लिए आमंत्रित करती हैं। यही पर्यटन की निर्मिति करता है। जाहिर है भाषायी और सांस्कृतिक भिन्नताएँ पर्यटक को अपरिचित स्थान के विषय में जानने के लिए प्रेरित और विवश करती हैं। पर्यटक तत्काल संक्षेप में अपनी भाषा और फॉर्मेट (प्रारूप) में जानकारी चाहता है। वह अपने यात्रा क्रम में यात्रा के लिए यातायात, आवास, पर्यावरण, मौसम तथा वित-सुविधाओं से संबंधित आवश्यक सूचना एवं निर्देश भी चाहता है परंतु वह उस स्थान, घटना, मौसम की ऐतिहासिकता के विवरण की अपेक्षा सामयिक संदर्भ को अधिक जानना चाहता है ताकि अपने प्रयास को अधिक सुनियोजित कर सके। ऐसे में पर्यटकों के लिए बनाए गए साहित्य में सटीकता, संप्रेषणीयता तथा सारता आदि महत्वपूर्ण बिंदु निहित होते हैं। यही बिंदु पयर्टकों के लिए बनाए गए दृश्य श्रव्य कार्यक्रमों अथवा

सद्य रूप से दी जाने वाली उद्घोषणाओं में भी सम्मिलित रहते हैं। इस प्रकार पर्यटन भी सारानुवाद का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है।

8.4 सारानुवाद की प्रक्रिया

सारानुवाद एक चरणबद्ध प्रक्रिया है जिसमें पाठ के सम्यक् अध्ययन के उपरांत अर्थ ग्रहण किया जाता है तथा एक निश्चित क्रम में व्यक्त किया जाता है। मूलकृति का पठन एक से अधिक बार किया जाना ही अपेक्षित होता है क्योंकि इसी से यह पता चलता है कि पाठ किस संदर्भ में लिखा गया है। संदर्भ का ज्ञान हो जाने पर पाठ के वाक्यों और अनुच्छेदों में अर्थक्रम की अभिव्यक्ति को भी ठीक से ग्रहण किया जा सकता है। यह भी देखा जाता है कि सभी पाठ एक समान नहीं होते। सारानुवाद के लिए उपलब्ध पाठ की भाषा की क्लिष्टता और वाक्यों की जटिलता भी अर्थ ग्रहण में समस्या उत्पन्न करती है। मूलपाठ में मिश्रित वाक्यों के प्रयोग से या निक्षिप्त उपवाक्यों के परस्पर संबंध को पूरी तरह समझे बिना अर्थ ग्रहण मुश्किल होता है। कई बार अभिप्रेत विचार को उपमा, अन्योक्ति आदि अलंकारों अथवा उदाहरणों अथवा किसी घटना के वर्णन के माध्यम से या ऐसे ही किसी अप्रत्यक्ष रूप में अभिव्यक्त करने का प्रयास रहता है। ऐसी अभिव्यक्ति में से अभिप्रेत विचार से केंद्रीय भाव खोजकर निकालना और स्पष्ट करना होता है। इसमें यह भी देखा जाता है कि मूलपाठ के कथ्य का तात्पर्य क्या है, मूल कथ्य में लेखक का उद्देश्य क्या है और मूल कथ्य का विस्तार किस क्रम में किया गया है। अतः मूल अथवा स्रोतपाठ का एकाधिक पठन, मनन आवश्यक हो जाता है।

मूलपाठ को समझने और उसके उद्देश्य की पहचान करने के उपरांत पाठ के प्रमुख कथ्य पर ध्यान दिया जाता है और यह सुनिश्चित किया जाता है कि विषय के प्रतिपादन में कौन सा केंद्रीय विचार किस विचार क्रम में सहायक है अथवा क्या कहा जा रहा है और किस मूलकथ्य का विस्तार किस तात्पर्य के लिए किया गया है। मूल कथ्य में कभी-कभी लाक्षणिक अभिव्यक्तियों में से मूल विचार को खोज निकालने में वाक्य अथवा अभिव्यक्तियाँ सहायक होती हैं और लेखक किसी विचार को उपमा, उद्धरण, अन्योक्तियों आदि से स्पष्ट करता है। अतः इस स्थिति में जिस विचार की ओर संकेत क्रम बनता है उसे सारानुवाद के लिए रख लिया जाता है। सारानुवाद के क्रम में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि मूल पाठ में जोड़ने और छोड़ने की जो स्थिति बनती है उससे समग्र कृति के कथ्य का क्रम बना रहे।

सारानुवाद की इस प्रक्रिया में जिस पाठ या कृति को अनुवाद के लिए चयनित किया जाता है। उसके एकाधिक अध्ययन के बाद ही उसके केंद्रीय विचार अथवा मूलकथ्य को ग्रहण कर सार के रूप में लिख लिया जाता है। एक से अधिक अवतरणों में प्रत्येक के मुख्य विचारों की एक क्रमबद्ध सूची बना ली जाती है जिसे सारानुवाद करते समय सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाता है। सार लिखते समय केवल उन्हीं वाक्यों या पदबंधों को रखा जाता है जो केंद्रीय विचार को स्पष्टतः व्यक्त करते हों। उदाहरण के लिए यदि पर्यावरण संबंधी किसी अवतरण अथवा कृति का सारानुवाद करना हो तो पर्यावरण को परिभाषित और प्रभावित करने वाले वाक्यों को प्रधानता दी जाएगी जबकि उसके सामाजिक पक्षों को गौण रखा जाएगा। सारानुवाद की प्रक्रिया के इस प्रकार दो प्रमुख क्रिया पक्ष सामने आते हैं। प्रथमतः सारानुवाद का प्रारूप तैयार करते समय पहले पाठ का सार मूल रूप में तैयार किया जाता है तदुपरांत उसका अनुवाद लक्ष्यभाषा में किया जाता है। परंतु कभी-कभी प्रबुद्ध अनुवादक मूलपाठ का सार अपने मस्ति क में क्रमबद्ध कर सीधे लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत कर लेता है। सारानुवाद के मूलपाठ के कुछ अंश यथावत रख लिए जाते हैं तथा कुछ को आंशिक सुधार के साथ समन्वित कर लिया जाता है।

महत्वपूर्ण यह है कि सारानुवाद करते समय न केवल कथ्य का संक्षेपण ही हो अपितु उसकी बातें भी लक्ष्य पाठ में आ जाए। यह भी देखा जाए कि कोई अंश न तो छूटने पाए न ही पुनरुक्ति हो इसके लिए लक्ष्य पाठ को रेखांकित अंशों और मुख्य विचारों की सूची से मिलाकर देखा जा सकता है। भाषा सरल तथा सुबोध अवश्य हो परंतु यह अलंकार और शब्दजाल से मुक्त हो। सारानुवाद एक प्रकार का संक्षेपण ही माना जाता है। अतः विद्वानों का ऐसा विचार है कि यह मूलपाठ का लगभग एक तिहाई हो तो पर्याप्त होता है परंतु यह सीमा कोई अंतिम नहीं है। अतः इसमें किंचित हेर-फेर हो सकता है। मूल कृति के कथ्य और उसकी महक बनी रहे इसके लिए

अनुवादक को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है और अंततः यह मूल के अर्थ की सभी दृष्टियों से पूर्ति करने वाला ही चाहिए, परंतु इसमें कृत्रिमता एवं असंबद्धता और असंगतता के लिए कोई स्थान नहीं होता।

8.5 सारानुवाद का वैशिष्ट्य

सारानुवाद मूलकृति या पाठ के केंद्रीय भाव को व्यक्त करता है, अतः उसके विशिष्ट और तकनीकी स्वरूप को बनाए रखने में संक्षिप्तता, सूचना-प्रधानता, विचारों की क्रमबद्धता, भाषाशैली तथा संपादन जैसे गुण महत्वपूर्ण होते हैं।

सारानुवाद में संक्षेपण और अनुवाद दोनों कार्य होते हैं। अतः यह एक दोहरी प्रक्रिया होने से जटिल भी है। संक्षेपण में मूलपाठ के संक्षिप्त अर्थ को लिया जाता है जबकि सारानुवाद करते समय तथ्य के मूल उद्देश्य को भी उद्घाटित किया जाता है। मानक रूप संक्षिप्तता मूलपाठ की एक तिहाई या इससे कम हो तो उत्तम होता है परंतु यह उल्लेखनीय है कि सारानुवाद विषय-विशेष की प्रकृति के अनुसार होता है क्योंकि इसमें घटना के विवरण को सार रूप में दिया जाता है। सारानुवाद का महत्वपूर्ण विषयक्षेत्र सामाजिक विज्ञान के विविध विषयों यथा अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, मनोविज्ञान, न्यायालय अथवा कार्यालय संबंधी विधि और प्रक्रिया, दर्शन, पत्रकारिता जैसे महत्वपूर्ण अनुशासनों के संदर्भ में उल्लेखनीय है तथा संक्षेपण और सार का आकार-प्रकार इन विषय क्षेत्रों की प्रकृति के आधार पर ही तैयार किया जाता है।

सारानुवाद में मूलतः सार अथवा घटना विवरण की सूचना देना अभिप्रेत होता है। अतः लक्ष्यपाठ में सूचनात्मकता के पुट को बनाए रखना महत्वपूर्ण है ताकि पाठक अथवा लक्ष्यवर्ग मूलपाठ के विषय, घटना अथवा गोष्ठी आदि के प्रमुख बिंदुओं या विचारणीय मुद्दों से परिचित हो सकें।

हमने अभी चर्चा में पाया कि सारानुवाद में प्रतिपादित विषय का विचारक्रम मूल कृति अथवा पाठ के अनुसार ही बनाए रखा जाता है। मूल पाठ में प्रतिपादित विचारों के अनुक्रम पर आधारित विषय ही अपने कथ्य की अभिव्यक्ति कर सकता है। अतः सारानुवाद मूलकृति के आशय को आद्योपांत व्यक्त करने का प्रयास रहता है जिससे विचारों के तारतम्य का उद्घाटन सहजता से हो सके। चूँकि सारानुवाद मूलकृति का स्वतःपूर्ण रूप माना जाता है अतः इसे मूल का पर्याय भी कहा जाता है।

सारानुवाद में मूल कृति का आभास बराबर बना रहे, इसके लिए आवश्यक है कि उसमें विषय के अनुरूप और लोक व्यवहार में प्रचलित बोधगम्य सरल शब्दों का प्रयोग किया जाए। लाक्षणिक और अलंकारिक भाषा के स्थान पर नपीतुली और संतुलित भाषा जो संपूर्ण मूलकथ्य को अंतरित करने में समर्थ हो उसका प्रयोग किया जाना अपेक्षित है। उदाहरण के लिए, सूचना प्रौद्योगिकी अथवा शेयर बाजार और आयात-निर्यात गतिविधियों से संबंधित पाठ के सारानुवाद में तकनीकी एवं क्षेत्र-विशेष में प्रचलित शब्दों का प्रयोग उपयोगी है। पारिभाषिक शब्दावली के साथ-साथ लोक व्यवहार के शब्द सारानुवाद में मूल के कथ्य को व्यक्त करने में अधिक सहायक होते हैं। मोबाईल, ई-मेल, इंटरनेट, खाता, बजट, रॉयल्टी और माचिस जैसे शब्द सहज रूप में प्रयोग किए जा सकते हैं, जो लक्ष्यपाठ में अपने संपूर्ण अर्थ को व्यक्त करने में समर्थ होते हैं।

सारानुवाद के लिए चयनित पाठ का संक्षेपण करते समय न केवल उसके आकार प्रकार को स्पष्टतः घटा दिया जाता है अपितु उसके असंगत एवं अनावश्यक वाक्य, उपवाक्यों को हटाकर मूल-कथ्य को सटीक और प्रवाहमान बना दिया जाता है। इससे एक प्रकार के पुनःसृजन की प्रक्रिया शुरू होती है जिसमें अनुवादक के चिंतन और रचना कौशल की भी भूमिका होती है। संक्षेपण के लिए मूलपाठ की काट-छाँट और सार रूप में निर्मित नए पाठ की यह शल्यकर्म जैसी प्रक्रिया संपादन गतिविधि भी कही जा सकती है। सारानुवाद की यह प्रक्रिया अनुवाद से कई मामलों में भिन्न होती है।

8.6 सारानुवाद और अनुवाद

अनुवाद का क्षेत्र काफी व्यापक है और विभिन्न प्रकार के अनुवाद की प्रविधि तथा उद्देश्य की दृष्टि से अपनी विशिष्टता होती है। अनुवाद सामान्यतः एक भाषा की कृति का अर्थ लक्ष्यभाषा में उसी रूप में प्रस्तुत करता है

परंतु यह मूलकृति के सहपाठीय भावों को भी परिलक्षित करता है। सारानुवाद अपने आप में एक विशिष्ट प्रयोजन क्षेत्र है जिसमें मूलपाठ के केंद्रीय भाव को संप्रेषित करने पर बल होता है। मूलकृति के भाव संप्रेषण को सुगठित, सुव्यवस्थित और संक्षिप्त रूप में व्यक्त करते समय भाषा की लाक्षणिकता और भाषा शैली आदि पर ध्यान नहीं दिया जाता। यह सच है कि कोई भी अनुवाद पूर्णतः शब्दों का मात्र अंतरण नहीं होता है परन्तु भाषा की लाक्षणिकता के शब्दों पर आधारित होने के कारण सामान्य अनुवाद में अनुवादक प्रत्येक शब्द और वाक्य को महत्व देता है और सभी पदबंधों के अर्थ को समन्वित रूप से लक्ष्यभाषा में अनूदित करने का प्रयास करता है। मूलनिष्ठता का प्रश्न लगातार बना रहता है। इसके विपरीत सारानुवाद में मूलपाठ में निहित मुख्य कथ्य अथवा विचारसूत्र को ग्रहणकर लक्ष्यभाषा में बोधगम्य शब्दों में व्यक्त किया जाता है। सारानुवाद एक प्रकार का संक्षेपण और संपादन है जिसमें मूलकृति में प्रत्यक्ष तौर पर काट-छाँट की जाती है और क्रमानुसार सुव्यवस्थित कर उसके अर्थ को संप्रेषित करने की कोशिश की जाती है ताकि समय और संसाधनों के अनुरूप सूचना तथा मूल कथ्य का भाव उपलब्ध हो सके, हालाँकि सारानुवाद भावानुवाद से कुछ बिंदुओं में भिन्न होता है।

8.7 सारानुवाद और भावानुवाद

सारानुवाद में मूलकृति अथवा पाठ का केंद्रीय भाव अर्थात् कथ्य ही अंतरित किया जाता है। इस दृष्टि से सारानुवाद एक प्रकार का भावानुवाद ही कहलाता है। सारानुवाद और भावानुवाद दोनों में मूलपाठ की शैली अथवा भाषिक इकाइयों की अपेक्षा उनमें निहित 'कथ्य' भाव को ध्यान में रखा जाता है। मूलपाठ में प्रयुक्त शब्दों, पदबंधों और वाक्यों आदि की भी भिन्न अर्थछायाएँ हो सकती हैं और लक्ष्यभाषा में इन्हीं शब्दों और पदबंधों का अर्थ-व्यंजना के अनुरूप अलग-अलग प्रकार से अनुवाद किया गया अनुवाद अर्थ-व्यंजन पर आधारित होने से भावानुवाद कहलाता है। विचार के विवरणों के विस्तार की अपेक्षा इसमें मूलकृति के विचार क्रम का अनुसरण करना महत्वपूर्ण होता है। सारानुवाद और भावानुवाद दोनों में ही मूलानुवर्ती पर्यायों के स्थान पर मूलभाव को व्यक्त करने वाले पर्याय चुनने का विकल्प रहता है। अभिप्राय यह है कि भावानुवाद में संकेतार्थ प्रस्तुत किया जाता है जबकि सामान्य अनुवाद में समतुल्य शब्दों को प्रमुखता दी जाती है। भावानुवाद में समतुल्य उपलब्ध न होने की स्थिति में लक्ष्यभाषा की रचना प्रकृति और सामाजिक संस्कार के अनुसार मूल भाव व्यक्त करने वाले शब्दों का चयन भी किया जा सकता है। सारानुवाद की अपेक्षा भावानुवाद में एक नई रचना की निर्मिति होती है, जिसमें मौलिकता भी होती है और इसमें भाव का स्वाभाविक विस्तार तथा उतार-चढ़ाव दिखाई देता है। परंतु यह विस्तार स्वच्छंद और मूल संदेश की परिधि से बाहर नहीं होता।

भावानुवाद की तुलना में सारानुवाद में संक्षेपण की प्रक्रिया के फलस्वरूप अभिव्यक्ति के आकार की सीमा होती है और संपादन भी होता है। मूलकृति के प्रत्येक पद या वाक्य की अर्थ-व्यंजना का अंतरण करना संभव नहीं होता। परंतु भावानुवाद में प्रायः आकार की सीमा नहीं होती और साथ ही मूलकृति के अनुरूप निरंतरता बनी रहती है। राजनीति तथा लोक प्रशासन आदि से संबंधी सुदीर्घ वक्तव्यों के भावानुवाद प्रायः मूल से आकार में थोड़े ही छोटे होते हैं परंतु मूल बिंब विधान को और प्रखर रूप में प्रस्तुत किया जाता है जबकि सारानुवाद में इसका आकार विशेष रूप से परिसीमित होकर केवल मूल कथ्य का ही प्रस्तुति करता है। सारानुवाद में मूलपाठ के कुछ पदबंधों अथवा वाक्यांशों को यथावत् भी रख लिया जाता है और कुछ आंशिक रूप से, परंतु भावानुवाद में यह आवश्यक नहीं होता है। सारानुवाद प्रत्येक अनुवाद स्थिति में आदर्श विकल्प नहीं होता। इस प्रकार सारानुवाद की अपनी कुछ सीमाएँ हैं ।

8.8 सारानुवाद की सीमाएँ एवं संभावनाएँ

अनुवाद के क्षेत्र में सारानुवाद एक विशेष प्रयोज्य विधा है जो मूलकृति अथवा पाठ की सूचना देती है। मूलकृति अपनी समग्रता में हमारे सामने नहीं आती, हालांकि उसकी गंध अवश्य होती है। मूलकृति का रूप सामने नहीं होता परंतु उसकी आत्मा की प्रतीति होती है। यह सच है कि मूल कृति में केवल विचार और भाव ही नहीं होते उन विचारों को प्रखरता देने के लिए विशेष शैली का उपयोग भी किया जाता है। सारानुवाद में हमें मूलकृति में निहित रस का ज्ञान होता है परंतु मूल की भाषाशैली और संस्कार नहीं होने से उसका रसास्वादन नहीं हो सकता।

सारानुवाद मूलकृति के उद्देश्य को हमारे सामने रखता है परंतु यह केवल मूलपाठ का संप्रेषण होता है उसके ध्वन्यार्थ उसमें प्रतिबिंबित नहीं होते हैं। मूल वक्ता अपने मन्तव्य को अपने मानसिक क्रम से मूलपाठ में रखता है। सारानुवाद के माध्यम से उसका अभिप्राय जानना मुश्किल हो जाता है।

सारानुवाद मूलतः सूचना-प्रधान होने के कारण शैलीगत सौंदर्य और ओजस्विता की संभावना नहीं देता। अतः शैली प्रधान और ओजप्रधान कृतियों का सारानुवाद नहीं हो सकता। सुभद्रा कुमारी चौहान और शिवराज विजय जैसी कृतियाँ ऐसी ही हैं। इसी प्रकार साहित्यिक रचनाओं का विशेषकर कविता का सारानुवाद संभव नहीं है जबकि नाटक, उपन्यास और संस्मरण आदि का सारानुवाद किसी सीमा तक हो सकता है, क्योंकि इनमें सूचनात्मक पुट भी होता है। राहुल सांकृत्यायन के यायावरी संस्मरणों का सार किया जा सकता है।

पत्रकारिता और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में सारानुवाद का उपयोग कई स्तरों पर होता है। संचार माध्यमों का प्रयोक्ता वर्ग भी विविध प्रकार की सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, भौगोलिक और व्यावसायिक पृष्ठभूमियों से संबंधित होता है। अतः सारानुवाद के माध्यम से उनके लिए संक्षिप्त, सटीक और तात्कालिक रूप से महत्वपूर्ण जानकारियों उपलब्ध कराई जा सकती हैं। परंतु यह जानकारियां केवल सूचनात्मक होती है, इनके माध्यम से किसी प्रकार से संदर्भ अथवा विधि या प्रशासनिक उद्देश्यों की पूर्ति नहीं की जा सकती। सरकारी कार्यालयों में भी अक्सर विभिन्न दस्तावेज़ों का सारानुवाद अपनी टिप्पणी के साथ प्रस्तुत किया जाता है जिसका क्रमवार ब्यौरा दिया जाता है। न्यायालयों में भी इसी प्रकार संक्षेपण अथवा सार अनुवाद के रूप में लंबे-लंबे निर्णयों को लक्ष्यवर्ग की भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। हालांकि सरकारी कार्यालयों तथा न्यायालयों में सारानुवाद के साथ-साथ अनेक अवसरों पर मूलकृति को सांगोपांग रखना भी अपेक्षित होता है। इसी प्रकार जहाँ संसद में सारानुवाद मुख्य रूप से संसद सदस्यों की सूचना हेतु महत्वपूर्ण उपागम है वहीं संसद की कार्यवाही के पूरे प्रारूप भी संसद सदस्यों को यथासमय यथातथ्य रूप में उपलब्ध कराए जाते हैं। अतः सारानुवाद की अपनी सीमाएँ हैं।

सारानुवाद अपेक्षाकृत अनुवाद की एक उभरती हुई अनुवाद विधा है और इसका अपना विशेष प्रयोजन क्षेत्र है। बढ़ते वैश्विक, संबंधों और सूचना क्रांति के कारण आदान-प्रदान में अप्रत्याशित प्रगति और विस्तार से सूचना के निर्वाध व तीव्र गति से प्रसार को सुगमित करना आवश्यक हो गया है। इस दृष्टि से सारानुवाद की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। आज हम अनेक महत्वपूर्ण कृतियों की समीक्षाएँ सारानुवाद के रूप में पढ़ते हैं तथा अपनी दिनचर्या के लिए जानकारियों को संक्षेप में देखना-जानना चाहते हैं। प्रत्येक कार्य क्षेत्र से संबंधित नित नई जानकारी व्यक्ति लेना चाहता है। सारानुवाद के संदर्भ में नई सूचना प्रौद्योगिकी का भी महत्व है, क्योंकि यह सूचना के संप्रेषण में बड़ी भूमिका निभाती है। किसी विशेष भाषा में उपलब्ध ज्ञान साहित्य के तीव्र एवं सटीक समावेश के लिए भी सारानुवाद का प्रयोग संक्षिप्त परिचय देने हेतु किया जा रहा है। यह भी सच है कि सभी कृतियों का सारानुवाद संभव नहीं है तथापि तात्कालिकता और सूचना की शक्ति के आलोक में हम सारानुवाद से बच भी नहीं सकते। अनेक भारतीय भाषाओं के साथ-साथ हिंदी अंग्रेजी में निर्मित विश्वकोश और उनके हिंदी अंग्रेजी संस्करण भी सारानुवाद के उदाहरण हैं। इस प्रकार सारानुवाद एक ऐसी विधा के रूप में स्थापित हो रहा है जो अपनी व्यावहारिक उपयोगिकता के कारण अनुवाद अध्ययन क्षेत्र में महत्वपूर्ण संयोजन है।

8.9 सारानुवाद का एक उदाहरण

सारानुवाद के अभ्यास हेतु एक उदहारण यहाँ दिया जा रहा है। प्रदत्त उद्धरण को आप पहले ध्यानपूर्वक पढ़ें। दो-तीन बार सावधानी से पढने के उपरांत आप जान पायंगे कि **संबोधन किस प्रधान विषय से सम्बंधित है तथा इसका किस और संकेत हैः**

Peace, friendship and cooperation bind nations and peoples together. Recognizing the shared destiny of the Indian sub-continent, we must strengthen connectivity, expand institutional capacity and enhance mutual trust to further regional cooperation. As we make progress in advancing our interests globally, India is also engaged in pro-actively promoting goodwill and prosperity in our immediate neighborhood. It is heartening that the long pending land boundary issue with Bangladesh has been finally resolved.

While we offer our hand willingly in friendship, we cannot stay blind to deliberate acts of provocation and a deteriorating security environment. India is a target of vicious terrorist groups operating from across the borders. Except the language of violence and the cult of evil, these terrorists have no religion and adhere to no ideology. Our neighbors must ensure that their territory is not used by forces inimical to India. Our policy will remain one of zero tolerance for terrorism. We reject any attempt to use terrorism as an instrument of state policy. Infiltration into our territory and attempts to create mayhem will be dealt with a strong hand. .

I pay homage to the martyrs who made the supreme sacrifice of their lives defending India. I salute the courage and heroism of our security forces who are maintaining an eternal vigil to safeguard the territorial integrity of our country and the safety of our people. I also specially commend the brave civilians who boldly detained a hardened terrorist ignoring the risk to their own lives.

(Shri Pranav Mukharjee, the President of India, Address to the Nation on the eve of 69th Independence Day)

उद्धरण को सावधानी से आद्योपांत पढने के उपरांत ऐसा लगता है कि यह किसी भाषण अथवा संबोधन का एक अंश है तथा इसमें देश के समक्ष सुरक्षा, क्षेत्रीय सहयोग एवं बहादुर सैनिकों के योगदान की चर्चा है। **मूल कथ्य यह है कि भारत अपने पड़ोसियों के साथ शांति, सहयोग और क्षेत्रीय सुरक्षा चाहता है, आतंकवाद के प्रति कड़े कदम उठाएगा और अपने साहसी एवं समर्पित बहादुर सैनिकों के प्रति नतमस्तक है।**

Peace, friendship and cooperation bind nations and peoples together. **Recognizing the shared destiny of the Indian sub-continent, we must strengthen connectivity, expand institutional capacity and enhance mutual trust to further regional cooperation.** As we make progress in advancing our interests globally, India is also engaged in pro-actively promoting goodwill and prosperity in our immediate neighborhood. **It is heartening that the long pending land boundary issue with Bangladesh has been finally resolved**

While we offer our hand willingly in friendship, we cannot stay blind to deliberate acts of provocation and a deteriorating security environment. **India is a target of vicious terrorist groups operating from across the borders.** Except the language of violence and the cult of evil, these terrorists have no religion and adhere to no ideology. **Our neighbors must ensure that their territory is not used by forces inimical to India.** Our policy will remain one of zero tolerance for terrorism. We reject any attempt to use terrorism as an instrument of state policy. Infiltration into our territory and attempts to create mayhem will be dealt with a strong hand.

I pay homage to the martyrs who made the supreme sacrifice of their lives defending India. I salute the courage and heroism of our security forces who are maintaining an eternal vigil to safeguard the territorial integrity of our country and the safety of our people. I also specially **commend the brave civilians who boldly detained a hardened terrorist ignoring the risk to their own lives.**

(Shri Pranav Mukharjee, the President of India, Address to the Nation on the eve of 69th Independence Day)

उद्धरण में व्यक्त केंद्रीय विचारों का सूचीकरणः

- उद्धरण महामहिम राष्ट्रपति के राष्ट्र के नाम संबोधन के एक अंश है।
- भारत अपने पड़ोसियों के साथ सहयोग, सुरक्षा एवं परस्पर भरोसे तथा क्षेत्रीय संतुलन के प्रति वचनबद्ध है।
- भारत अपनी प्रगति और आर्थिक निर्भरता का लाभ अपने पड़ोसियों तक पहुँचाना चाहता है।
- इसी नीति के अंतर्गत उसने बंगलादेश के साथ भूमि सीमा सम्बन्धी मुद्दे को भी हल कर लिया है।
- सहयोगात्मक एवं भाईचारे के अपने रवैये के वावजूद भारत पडोसी देशों द्वारा आंतकवाद के प्रोत्साहन को नजरंदाज नहीं कर सकता है।

- आंतकवाद की कोई भाषा अथवा धर्म नहीं होता अतः भारत के पड़ोसियों को अपनी धरती को इस प्रकार की गतिविधियों के प्रयोग से बचना होगा। आतंकवाद के प्रति भारत सख्त कदम उठाने के लिए तैयार है।

दे ा की सुरक्षा और एकता को बनाये रखने के लिए भारत अपने सुरक्षा बलों के साहस और बलिदान के प्रति नतमस्तक है।

सारानुवाद हेतु केंद्रीय कथ्य को यूँ भी प्रस्तुत किया जा सकता हैः

भारतीय उप-महाद्वीप की मुश्किलों के मद्देनजर भारत अपने पड़ोसियों के साथ सहयोग, सुरक्षा और संसाधनों के सहभाजन के लिए वचनबद्ध है। इसी क्रम में उसने हाल ही में बंगलादेश के साथ अपने सीमा विवाद के मुद्दे को भी हल कर लिया है।

दोस्ती की पहल के साथ भारत चाहता है कि उसके पडोसी अपनी भूमि को भारत के खिलाफ आतंकवाद के लिए प्रयोग न होने दें। आतंकवाद का कोई धर्म या भ्**ाा नहीं है। घुसपैठ की गतिविधियों से अपनी सीमाओं की सुरक्षा के लिए भारत कड़े कदम उठा सकता है।

देश की सुरक्षा और अखंडता को बनाये रखने के लिए भारत अपने सुरक्षा बालों के साहस एवं बलिदान के प्रति नतमस्तक है।

8.10 सारांश

हमने जाना कि संक्षिप्तानुवाद और सारानुवाद अनुवाद की एक विशेष प्रयोजन विधा है। प्रक्रियात्मक रूप में हम आम तौर पर पहले पाठ का संक्षेपण ही करते हैं। तत्पश्चात् उस सार रूप में संयोजित करते हैं। अतः सारानुवाद अधिक प्रचलन में होने के कारण इसी का अधिकतर प्रयोग होता है। सारानुवाद से क्या अभिप्रेत है तथा इसकी आवश्यकता कहाँ-कहाँ पड़ती है इस पर हमने इस इकाई में विचार किया। मूल पाठ में कथित ''आशय'' अथवा कथ्य को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने के अनेक प्रयोजन हैं। समाचारपत्रों से लेकर पत्रिकाओं और यहाँ तक कि पाठ्यपुस्तकों में भी 'सार' विशेष रूप से प्रस्तुत किया जाता है। रेडियो, टेलीविजन और अन्य इलेक्ट्रॉनिक एवं कंप्यूटर माध्यमों में समाचारों, वार्ताओं, गोष्ठियों, सम्मेलनों के सार प्रस्तुत किए जाते हैं। सरकारी दफ्तरों संसद तथा न्यायालयों में भी पूरी बात न कहकर 'सार' ही टिप्पणी रूप में प्रस्तुत किया जाता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ से लेकर देश की संसद और विधान सभाओं में भी विभिन्न भाषाओं में संपन्न लंबी-लंबी बहसों के सार प्रस्तुत किए जाते हैं। सारानुवाद की अपनी विशिष्टताएँ हैं और इसलिए सारानुवाद करते समय एक चरणबद्ध एवं नियमबद्ध प्रक्रिया अपनाई जाती है। अतः सामान्य अनुवाद से संबद्ध होने के बावजूद इसकी अपनी विधात्मक विशेषता है। चर्चा में यह भी स्पष्ट हो गया कि सारानुवाद केवल स्थिति विशेष अथवा चुनिंदा प्रयोजनों के लिए अनिवार्य तो हो जाता है परंतु इसकी सीमाएँ भी हैं; साहित्य के क्षेत्र में हम लंबी कृति का संक्षेपण मात्र संदर्भ के लिए तो दे सकते हैं; परंतु उसका रसास्वादन सारानुवाद के माध्यम से नहीं कर सकते हैं।

इकाई में हमने यह भी जाना कि सारानुवाद एक चरणबद्ध अनुवाद प्रक्रिया है, जिसमें मूल कथ्य के अर्थ को ठीक से ग्रहण करते हुए पूरे पाठ के किन-किन अंशों को रखना या छोड़ना है इसका निर्णय सावधानी से किया जाता है। पुनः प्रस्तुति के लिए शब्द संयोजन में अतिरिक्त सतर्कता अपेक्षित होता है, जिससे मूल का आशय बना रहे और साथ ही अतिशय वर्णनात्मकता से भी बचा जा सके। सारानुवाद भावानुवाद से भी किन्हीं पक्षों में अलग है, क्योंकि इसमें निर्मित पाठ का आकार-सीमा एवं प्रस्तुति का ध्यान रखना अनिवार्य होता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सारानुवाद एक विशिष्ट अनुवाद विधा है, जिसका अपना विशेष प्रयोजन, प्रयोजन क्षेत्र और विधात्मक स्वरूप होता है। यह उभरते वैश्विक मामलों की समझ बनाने और समय एवं संसाधनों की कमी को भी पूरा करने का एक विकल्प बन कर उभर रहा है।

8.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. सारानुवाद अथवा संक्षिप्तानुवाद को परिभाषित कीजिए तथा स्पष्ट कीजिए कि दोनों एक ही प्रक्रिया के दो चरण हैं।
2. सारानुवाद की आवश्यकता पर विचार कीजिए।
3. सारानुवाद के प्रयोजन-क्षेत्रों का सोदाहरण परिचय दीजिए।
4. सारानुवाद की प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का उल्लेख कीजिए।
5. सरानुवाद के वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।
6. सारानुवाद का सामान्य अनुवाद और भावानुवाद के साथ अंतर्भेद स्पष्ट कीजिए।
7. सारानुवाद की सीमाओं और संभावनाओं पर चर्चा कीजिए।

8.12 शब्दावली

सांगोपांग, अन्योक्ति, तारतम्य, अर्थव्यंजना, समतुल्य, पुनःसृजन, संक्षेपण, संसक्ति।

8.13 कुछ उपयोग पुस्तकें

- सुरेश कुमार, अनुवाद सिद्धांत की रूपरेखा, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
- कृष्णकुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
- भोलानाथ तिवारी, अनुवाद विज्ञान, दिल्ली : शब्दकार।
- कैलाशचंद्र भाटिया, भारतीय भाषाएँ और हिंदी अनुवाद, नई दिल्ली : वाणी प्रकाशन।
- रवींद्रनाथ श्रीवास्तव, एवं कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद सिद्धांत और समस्याएँ, दिल्ली : आलेख प्रकाशन।

इकाई 9 अनुसृजन और अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 अनुसृजन से तात्पर्य

9.3 अनुसृजन का महत्व

9.4 अनुसृजन और अनुवाद

9.5 अनुसृजन और भावानुवाद

9.6 सर्जनात्मक साहित्य और अनुसृजन

- 9.6.1 कविता का अनुवाद और अनुसृजन
- 9.6.2 कथा-साहित्य और अनुसृजन
- 9.6.3 नाटक और अनुसृजन

9.7 तकनीकी साहित्य और अनुसृजन

9.8 विज्ञापन और अनुसृजन

9.9 सारांश

9.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

9.11 शब्दावली

9.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.0 उद्देश्य

अनुवाद की दो विधाओं निर्वचन और सारानुवाद के विषय में आपने पिछली दो इकाइयों में पढ़ा। प्रस्तुत इकाई 'अनुसृजन और अनुवाद' के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी :

- अनुसृजन का अर्थ एवं आवश्यकता बता सकेंगे;
- अनुसृजन की विशिष्टताओं को समझ सकेंगे;
- अनुसृजन तथा अनुवाद और भावानुवाद के बीच अंतर भेद स्पष्ट कर सकेंगे; तथा
- सृजनात्मक साहित्य, तकनीकी साहित्य तथा विज्ञापन के संदर्भ में अनुसृजन पर विचार कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली दो इकाइयों में अनुवाद की दो विधाओं; निर्वचन आशु-अनुवाद और तथा सारानुवाद पर चर्चा में यह स्पष्ट हुआ कि अनुवाद के विशेष प्रयोजन-क्षेत्र होते हैं। इन क्षेत्रों की आवश्यकता, लक्ष्य अथवा गृहीता वर्ग की विशिष्ट समय एवं स्थान की अपेक्षाओं के अनुरूप ही हम अनुवाद द्वारा जानकारी (सूचना) एवं अर्थ 'कथ्य' का अंतरण-संप्रेषण करते हैं। केवल संप्रेषण ही नहीं, तात्कालिकता के अनुरूप कुल पाठ का निर्वचनादि में समयानुकूल शब्दानुवाद या फिर किंचित काँट-छाँट के साथ तत्काल मूल वक्ता का अनुकरण करते हुए श्रोता वर्ग को वक्ता के साथ जोड़ने का कार्य करते हैं। मूल वक्ता द्वारा सहज भाव से संक्षिप्त संकेत का उद्घाटन अथवा छोड़े गए पाठ प्रतिपूर्ति और संप्रेष्य पाठ हेतु अलग भाषा विधा भी अपनाई जाती हैं। इसी प्रकार सारानुवाद में

किसी लिखित पाठ अथवा वृति का उल्लेखनीय रूप से संक्षिप्त पाठ जो मूल के विचार-क्रम के अनुरूप हो और कुछ-कुछ मूल शब्दों को बनाए रखते हुए 'मूल का पूर्णतः प्रतिनिधि' पाठ तैयार करते हैं। पिछली चर्चा में हमने यह भी पाया कि अनुवाद और भावानुवाद से ये दोनों ही अनुवाद विधाएँ अलग हैं। न केवल शब्द-बिंब, विधा और अलंकारिक चमत्कार इनमें अनुपस्थित होते हैं, बल्कि मूलपाठ और अनूदित पाठ में एक प्रकार की समानता लगातार बनी रहती है जो प्रत्यक्षतः आकार प्रकार में पूर्णतः भिन्न होती है।

प्रस्तुत इकाई में हम अनुसृजन पर चर्चा करेंगे। पुनर्सृजन और अनुसृजन भी अनुवाद की एक विशेष विधाएं है, जिसमें अनुवादक मूल के भाव-बोध को अपनी भाषा, शैली, शब्द-आडंबर और अलंकारिता से प्रयोक्ता वर्ग को अनुकूलित एवं आकर्षित करने वाले पाठ का निर्माण करता है। यह काव्य, तकनीकी साहित्य, बाल-साहित्य एवं विज्ञापन के साहित्य के अनुवाद में विशेषकर द्रष्टव्य है। हम इस बात की चर्चा भी करेंगे कि अनुसृजन और पुनर्सृजन एक ही प्रक्रिया के दो चरण हैं, क्योंकि पारंपरिक रूप से अनुसृजन और पुनर्सृजन भारतीय साहित्य में अलग-अलग रूपों में होता रहा है। वर्तमान समाज की अपेक्षाओं और तात्कालिकताओं के अनुरूप इस अनुवाद विधा की उपयोगिता है। अनुवाद में सृजनशीलता एवं चमत्कारिकता की जहाँ-जहाँ गुंजाइष रहती है; वह विधा अनुसृजन कहलाती है। इस इकाई में हम इस अनुवाद विधा के इन पक्षों पर चर्चा करेंगे, साथ ही अनुसृजन तथा अनुवाद और भावानुवाद के बीच अंतरभेद भी स्पष्ट करेंगे। अनुसृजन के विषय क्षेत्रों यथा साहित्य, तकनीकी साहित्य और विज्ञापनादि पर भी इकाई में विस्तार से चर्चा की जाएगी।

9.2 अनुसृजन से तात्पर्य

अनुसृजन की व्युत्पत्तिपरक व्याख्या की जाए तो अनु का अर्थ होता है-'के पश्चात्' अर्थात् मूलकृति अथवा रचना को फिर से लक्ष्यभाषा की प्रकृति एवं बिंब-विधान आदि के अनुरूप अर्थ छायाओं को प्रस्तुत करने हेतु मूलभाव पर आधारित पाठ का निर्माण करना अनुसृजन है। अनुसृजन मूल का अनु-पश्चानुगामी होता है (मूलपाठ का छाया रूप में अनुकरण करना होता है) अर्थात् मूलकृति की भावना पर आधारित फिर से रचा गया पाठ। यह मूल का अनुगामी होता है और मूलकृति के मूलभाव को सुरक्षित रखता है कुछ विद्वान इसे पुनर्सृजन भी कहते हैं जिसमें पुनः का अर्थ है 'फिर से', 'दोबारा से' अर्थात् पुनः अर्थात् दोबारा रचा जाए और तत्पश्चात् मूल की भावना के अनुरूप उसे लक्ष्यपाठक के लिए एक नए पाठ के रूप में तैयार किया जाए तो वह पुनर्सृजन कहलाता है।

भाषा एक संरचनात्मक व्यवस्था है। भाषा के कुछ पक्ष ऐसे हैं जो सभी भाषाओं में सार्वभौमिक रूप से मिलते हैं। भाषा में शब्द-संयोजन व्यवस्थापरक होता है। अनुवाद की प्रक्रिया में भाषा-व्यवस्था के सार्वभौमिक पक्ष का अंतरण तो हो जाता है किंतु भाषा विशेष की अपनी संरचनात्मक विशेषता के कारण ही दो भाषाओं में समतुल्यता की प्रतिस्पर्धा एवं घात-प्रतिघात की स्थिति होती है, क्योंकि भाषा ही हमारे बाह्य जगत और भाव जगत के बीच सेतु का कार्य करती है।

यह विदित है कि सर्जनात्मक साहित्य अर्थात् काव्य, कहानी, उपन्यास, नाटक इत्यादि का अनुवाद करना मुश्किल काम होता है। कविता के अनुवाद के लिए कहा भी जाता है कि यह एक असंभव कार्य है और लगभग कविता अनुवाद में खो ही जाती है। अतः कविता का एक प्रकार से जब अनुवाद किया जाता है तो वह अनुवाद न रह कर अनुसृजन ही हो जाता है, जबकि उपन्यास, कहानी अथवा नाटक आदि का किसी सीमा तक पुनर्सृजन तो होता है परंतु वह भी मूल का अनुगामी होने से अनुसृजन ही होता है। किसी भी मूलपाठ के पुनर्सृजन में अनुवाद की मौलिकता अंतर्निहित होती है और यह प्रक्रिया केवल अंतरभाषिक स्तर पर ही नहीं होती है अपितु अंतरसांस्कृतिक स्तर भी कार्यरत रहती है, क्योंकि जिन मूल्यों की व्यापक सामाजिक व्यवस्था होती है वे उसकी भाषिक व्यवस्था के प्रतीक-अंग होते हैं। बृहद् संदर्भ में अनुवाद एक सामाजिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों के अंतरण की प्रक्रिया होती है। इसलिए उसमें सर्जनात्कता और अलौकिकता जैसे विशिष्ट गुणों का होना स्वाभाविक रूप से अपेक्षित होता है। यही गुण अनुवाद के इस विशेष संदर्भ में सृजनात्मकता का रूप धारण कर लेते हैं। अनुवाद में यह सृजन एक प्रकार से मूलपाठ के बाद फिर से रचा गया पाठ होता है जो पुनर्सृजित होता है तथा जब एक स्वतंत्र पाठ के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है तो अनुसृजन कहलाता है। सृजनात्मक साहित्य से इतर ज्ञान-प्रधान साहित्य, तकनीकी-साहित्य, बाल-साहित्य और संचार माध्यमों के लिए तैयार किए जाने वाले विज्ञापन

के संदर्भ में भी अनुसृजन का विशेष महत्व है। इस प्रकार के साहित्य के अनुवाद में ज्ञानात्मक उपस्करों को देश, काल और परिवेश के अनुरूप समायोजित करना आवश्यक होता है क्योंकि इसी से उसकी ग्राह्यता, सार्थकता एवं उद्देश्यपरकता को सिद्धि मिलती है। बाल-साहित्य के संदर्भ में अनुसृजन की भूमिका अत्यंत अहम् है क्योंकि बालकों की वय, रुचि और मानसिक स्तर के अनुरूप न केवल मूलपाठ का सही-सही अंतरण ही आवश्यक है अपितु उसे उनकी रुचि एवं ग्राह्यता के अनुरूप विधांतरण एवं लय-पद्यात्मकता आदि के क्रम में भी पुनर्सृजित करना पड़ता है। विज्ञापन के अनुवाद में तो केवल मूल के उद्देश्य को खंडित न करते हुए उसका क्लेवर, भाषा, शब्दावली, अलंकारिकता एवं ध्वनि-व्यंजनात्मकता आदि अनेक परिवर्तन कर दिए जाते हैं ताकि वह उद्देश्यपरक बन सके।

9.3 अनुसृजन का महत्व

विभिन्न विद्वानों ने साहित्य की कुछ विधाओं के अनुवाद के संदर्भ में किए गए अनुवाद को अनुवाद न कहते हुए उसे रसात्मक प्रक्रिया, पुनर्रचना, पुनर्सृजन, अनुसृजन तथा अर्थग्रहण आदि कहा है क्योंकि काव्य सृजन एक विशिष्ट व्यवहार है जिसमें संस्कृति का समग्र रिक्थ, व्यक्तिगत चेतना के पारंपरिक और नवीन स्तर जैसे अंतस्केंद्र और सामूहिक चेतन और अचेतन की सभी शक्तियाँ भाव उद्वेलन में संक्रियात्मकता करती हैं। कवि की चेतना और उद्दीप्त अनुभूति अपनी अभिव्यंजना के लिए समुचित भाषिक प्रयोग के अन्वेषण के कारण जटिल प्रक्रियाओं में प्रवृत्त हो जाती है। पॉस्टर हर्बर के संदर्भ में गांधी जी ने भी कहा है-Poet can never be confined in the cages of their own construction; poets writes for eternity, their words are charged with a meaning of which they have no conception when they write or utter them; अर्थात् कवि सार्वकालिक होता है तथा स्व से भी मुक्त होता है। वह स्वयं भी यह नहीं जानता कि उसके शब्दों या वाणी से क्या प्रस्फुटित या उद्‌घटित हो जाएगा। ऐसे में कवि का भाषा प्रयोग बहुस्तरीय होना स्वाभाविक है और ऐसी लाक्षणिक एवं व्यंजना प्रधान बिंबात्मक भाषा हमारे सामने आती है कि उसका अनुवाद विशेष रूप से विषम प्रकृति की भाषाओं में असंभव हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में अनुसृजन का महत्व स्पष्ट हो जाता है अर्थात् मूलभाव अथवा पाठ की रूपपरक समतुल्यता की खोज में अनुवादक भाषायी परिधि से ऊपर उठता हुआ मूल के मर्म को पकड़ने की कोशिश करता है। अपने सफल प्रयास के बाद जब अनुवादक लक्ष्यभाषा में उसे पुनः ढालने का यत्न करता है तो वह स्रोतभाषा के केंद्रीय अर्थ को लक्ष्यभाषा के आंतरिक अर्थ से जोड़ने और समप्रकृतिस्थ करने का यत्न भी करता है। इस प्रकार फिर से रचे हुए इस पाठ को अंतिम रूप देने से पहले अनुवादक मूल भाव का संश्लेपण करता है और यदि उसे लक्ष्यभाषा में समान अभिव्यक्ति प्रतीत होती है वह उसे एक स्वतंत्र रूप में रच देता है। स्वाभाविक है कि इससे अर्थांतरण की यह प्रक्रिया सरल और लक्ष्य पाठक के लिए सुग्राह्य हो जाती है।

वास्तव में कोई कृति अपने भावों में विशिष्ट कल्पना शक्ति, लय-विधान, छंद-विधान, अलंकार-विधान और दूसरे अनेकानेक भावों को उद्वेलित करने वाली होती है। इन सभी रचना वैशिष्ट्यों का अनुवाद आमतौर पर असंभव प्रतीत होता है। अनुवादक जब इन सभी का समन्वय भाव ग्रहण कर लेता है और एक नए पाठ की सृष्टि फिर से करता है तो यह पुनर्सृजन का रूप धारण कर लेता है और मूल पाठ के लिए नवनिर्मित होता हुआ उसका अनुगामी अनुसृजित पाठ होता है। यह प्रक्रिया इसलिए महत्वपूर्ण है कि किसी एक मूल भाव को व्यक्त करने के लिए किसी एक विषयवस्तु में उससे जुड़े अन्य प्रसंगों, अर्थ छवियों, लय और बिंब विधान आदि का समन्वयन कर लक्ष्यभाषा में उसकी शैली के अनुरूप एक नया रूप सृजित हो जाता है ताकि मूलपाठ की आत्मा बरकरार रहे परंतु लक्ष्यभाषा के अंतस् में वह रच बस कर सर्व-स्वीकृत होने की योग्यता प्राप्त कर सके। भारतीय साहित्य में रामकथा का रामायण के संदर्भ में विशेष महत्व है अथवा यह उसकी केंद्रीय विषयवस्तु है। रामायण में दशरथ पुत्र राम का चरित्र एक आदर्श माना जाता है। इसी आदर्श चरित्र को लेते हुए संस्कृत साहित्य में ही उत्तररामचरित एवं अध्यात्म रामायण रचे गए क्योंकि अन्य भारतीय भाषाओं में भी रामायण के अनेक पाठ जैसे आनंद रामायण, रामचरितमानस, कृतिवास रामायण, कम्ब रामायण, साकेत आदि अनेक रूप प्रणीत हुए। कृष्ण कुमार गोस्वामी ने इन रामायणों की चर्चा करते हुए कहा है कि इन सभी की विषयवस्तु और समूची रामकथा तो एक ही है किंतु कवि की सृजनशीलता और कल्पना शक्ति से उसकी काव्यवस्तु अलग-अलग हो गई है। सृजनकारों ने देश, काल और अपने परिवेश के कारण अलग-अलग कृतियों की रचना की गई है। संभवतः यह इन रचनाकारों की

Scanned with CamScanner

सृजनशीलता का ही परिणाम है कि ये कृतियाँ अमर हो गईं और अपनी कालगत एवं परिवेशगत विशिष्टताओं को संजोए रखते हुए भी मूल रामकथा का व्याख्यान करती हैं। रामायण, महाभारत, पंचतंत्र और बड्डकहा (वृहत्कथा) ये चारों ग्रंथ वैश्विक साहित्य के अजस्र प्रेरणा स्रोत हैं इनके बाद जो भी ग्रंथ सृजित किए गए वे इन्हीं पर आधारित अनुसृजन हैं। इस प्रकार किसी भी मूल कथा अथवा आख्यान पर आधारित पुनः लिखे गए ग्रंथों को हम पुनर्सृजित-अनुसृजित साहित्य कह सकते हैं। शेक्सपीयर, यीट्स और दूसरे अंग्रेजी रोमांटिक कवियों की रचनाओं तथा उमर खय्याम की रुबाइयों के अनुवाद भी एक प्रकार के अनुसृजन ही हैं, क्योंकि वे देशकाल और परिवेशगत भाषिक संसार में पूरी तरह-घुल मिल गए हैं परंतु मूल आख्यान/आत्मा की सुरक्षा करते हैं। भारतेंदु, श्रीधर पाठक, महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा रामचंद्र शुक्ल ने भी अपने अनुवादों को केवल भाषिक कर्म तक सीमित न रखकर उन्हें लक्ष्यभाषा की संस्कृति और मर्म के साथ जोड़ते हुए एक नए पाठ के रूप में अनूदित अथवा अनुसृजित किया।

9.4 अनुसृजन और अनुवाद

अनुसृजन को परिभाषित करते हुए यह आपने पाया होगा कि अनुसृजन किसी एक मूलकृति का मूल अर्थ सहित एक अलग संस्करण होता है। पिछली इकाइयों में आपने यह भी पढ़ा कि अनुवाद के केंद्र में एक स्रोतपाठ होता है और एक क्रम में उसके शब्दों, पदबंधों और वाक्यों का अनुवाद होता है। स्रोतभाषा की कृति का अर्थ लक्ष्यभाषा में यथासंभव प्रस्तुत करने का यत्न किया जाता है। भाषिक मूल्यों को बनाए रखते हुए मूलकृति के भावों को भी प्रतिबिंबित किया जाता है। जैसा कि अनेक अनुवादविज्ञानियों ने कहा है कि अनुवाद में मूल भाषा और प्रतिपाद्य विषय अनुवादक के लिए केंद्रीय होता है और अनूदित पाठ में मौलिक रचना जैसी सहजता एवं स्वाभाविकता होनी चाहिए। इस स्थिति में अनुवादक के पास और कोई विकल्प नहीं है कि वह स्रोत पाठ के प्रति निष्ठा बनाए रखे और यथासंभव बिना किसी विशेष हानि के लक्ष्यभाषा में मूल के आशय को संप्रेषित करे। अनुसृजन के केंद्र में कोई एक विशिष्ट मूलकृति होती तो है परंतु उसकी केवल विषयवस्तु को ही आधार देकर अन्य कृतियों अथवा घटनाओं से भाव या प्रसंग लेकर उस रचना को अपनी विशिष्ट शैली में संप्रेषित करता है। भारतेंदु ने 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का हिंदी अनुवाद करते हुए काल देश, समाज और संस्कृति की छाप देकर भारतीयता के अनुरूप पात्र, स्थान और दृश्य आदि का समावेश किया। संभवतः वे मूलकृति के आधार भाव को लेते हुए उसे समकालीन परिवेशगत गुणों से जोड़कर मौलिक रचना जैसा आनंद लक्ष्य पाठक को देना चाहते थे। उन्होंने इसे अपनी सृजनात्मक प्रतिभा और कल्पना शक्ति से संपन्न किया, क्योंकि उनका पाठ युगीन सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से जुड़कर हुआ। कवि के अपने दृष्टिकोण के कई तत्वों से भी अनुस्यूत होता हुआ मूल पाठ एक नई रचना के रूप में सामने आया। हरिवंशराय बच्चन ने भी मूल पाठ के आदर्श संप्रेषण के लिए सृजनात्मक मनोस्थिति को महत्वपूर्ण बताया है।

स्पष्ट है कि अनुसृजन केवल अनुवाद नहीं है अपितु मूल कथ्य पर आधारित कवि द्वारा अपनी प्रतिभा से रचा एक (नया) पाठ होता है जो मूल के भाव को तो संप्रेषित करता है परंतु स्वयं में भी (अनेक) सहपाठों (पाठों) का प्रेरक बन जाता है। कुछ विद्वानों के मतानुसार मूल पाठ के पुनर्सृजन में ही अनुवाद की मौलिकता अंतर्निहित रहती है। यह जटिल प्रक्रिया न केवल अंतरभाषिक स्तर पर होती है वरन् अंतर सांस्कृतिक संदर्भ में भी काम करती है। वस्तुतः व्यापक रूप में जिन मूल्यों की सामाजिक व्यवस्था है वे उसके भाषिक प्रतीक के अंग है। इसलिए अनुवाद में सर्जनात्मकता और अलौकिकता का होना स्वाभाविक है और इसी कारण अनुवाद सृजन और पुनर्सृजन के रूप में होता है। यही पुनर्सृजन वास्तव में अनुसृजन है।

9.5 अनुसृजन और भावानुवाद

अब तक की गई चर्चा में आपने अनुभव किया होगा कि अनुसृजन सामान्य अनुवाद, भावानुवाद अथवा छायानुवाद से भिन्न अनुवाद-प्रक्रिया द्वारा संपादित होता है। जब मूल पाठ के मात्र भाव या अर्थ छाया का विस्तार या ग्रहण ही किया जाए परंतु अन्यथा रूप से किसी प्रकार का प्रसंगात्मक अथवा घटनात्मक संदर्भों का समावेश न हो तो यह केवल भावानुवाद की परिधि में सीमित रहेगा। अनुसृजन की प्रक्रिया न केवल मूल के भाव को विस्तार ही

Scanned with CamScanner

देती है अपितु मूल अंश या मूलभाव के किन्हीं पक्षों को अर्थ व्यंजना भी देती है। यह पर्याप्त स्तर पर मूल की भाषिक शैली और अभिव्यंजनात्मक छाया से भी मुक्त अलग मूलानुगामी (कथ्यानुगामी) पाठ सृजन की प्रक्रिया है। आवश्यकतानुसार मूल कृति के कुछ पक्षों को संक्षिप्त किया जा सकता है अथवा उनका संकेत मात्र दिया जा सकता है और यदि अपेक्षा हो तो उन्हें पाठ के सिलसिले में अन्य संदर्भों से जोड़कर विस्तार किया जा सकता है। भावानुवाद में मूल पाठ में दिए गए भाव, विचार तथा आलंकारिकता और चमत्कारिता के गुणों की रक्षा करने का दायित्व तो है परंतु अपनी तरफ से इन्हें अतिरंजित करने का अवकाश अनुवादक के पास नहीं रहता। अनुसृजन नई-नई उपमाओं, नए भावों, सार्वभौम विचारों और कवि की कल्पनीय दृष्टि के क्षितिजों को छूने का अवसर देता है। रामायण के विविध अनुवाद इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं कि वे लोक संस्कृति में जाकर ओजस्विता, हर्षोल्लास, संवेदना और अवसाद आदि गुणों का सहज ही समावेश कर लेते हैं। अनुसृजन में मूल कृति के पात्रों एवं स्थानों इत्यादि के नामों को भी भिन्न सांस्कृतिक दृष्टि से पर्याप्त रूप में पुनर्नवा करने का अवसर देता है। अनुसृजन करते समय मूल पाठ के सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का समरूपी अंतरण भी हो सकता है और यदि आवश्यक हो तो उसमें परिवर्तन युगीन परिस्थितियों के अनुरूप किया जा सकता है। आधुनिक रामलीला में यह दिखाई देता है। रामकथा के तमिल, मलयाली, मैथिल तथा असमी आदि रूपों में इस तरह के परिवर्तन सहज लगते हैं जो मूलकथा को बनाए रखते हुए भी स्थानीय होने के कारण सुग्राह्य बन जाते हैं।

अनुसृजन वास्तव में कवि की स्वाभाविकता को संपूर्णता में बनाए रखने का अवसर अनुवाद क्रम में सुरक्षित रखता है। नई विचारधारा और नई संकल्पना मूल भाव के साथ जोड़कर पाठ को पुनः प्रस्तुत कर देने से वह सार्वभौम मूल्यपरक हो जाता है इससे कृति कालजयी भी हो जाती है। भारतीय कालजयी साहित्य इसका प्रमाण है जहाँ एक ही मूल कथा पर अनेक स्वतंत्र कृतियाँ दिखाई देती हैं। अनुवाद में इस प्रकार की छूट की संभावना कम होती है और मूल से हटने की आशंका बनी रहती है। अनुसृजन में अनुवादक-सर्जक की रचनाधर्मिता सक्रिय हो जाती है और वह कुछ-कुछ मूल पाठ के रूप में अपनी अनूदित कृति को पुनरर्सृजित करता है। विज्ञान एवं गणित की क्लिष्ट तकनीकी संकल्पनाओं को स्पष्ट करते हुए अनेक उदाहरण देकर एक अच्छा अनुवादक-शिक्षक उन्हें दैनंदिन जीवन से जोड़ता हुआ मूल को सुरक्षित रखता है परंतु साथ ही कोमल बुद्धि छात्रों के लिए ग्रहण योग्य नए पाठ का निर्माण भी करता है। इसी प्रकार बालकों के लिए मूल पाठ से अनूदित किए जाने वाले साहित्य में विज्ञान की गहन और उलझी गुत्थियों को सरल, सहज, प्रवाहमान और परिवेशीय उदाहरणों से जोड़कर छोटी-छोटी कविताओं एवं शब्दावलियों में अनुर्सृजित कर प्रस्तुत किया जाता है। क्लिष्ट शोध-संकल्पनाओं के अनुवाद में भी पुनर्सृजन की यह प्रक्रिया शोध को अपने शैक्षिक, सामाजिक-उद्देश्यों को पूरा करने में सहयोग करती है।

9.6 सर्जनात्मक साहित्य और अनुसृजन

कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक तथा अन्य सर्जनात्मक साहित्य की अपनी विशिष्ट अभिव्यंजनात्मक प्रकृति के कारण इनका अनुवाद सामान्यतः सृजनात्मक अनुवाद माना जाता है। इसका प्रधान कारण है कि इन विधाओं का न तो पूर्णतः शाब्दिक अनुवाद व्यावहारिक रूप में स्वीकार्य होता है और न ही भावानुवाद, अपितु कुछ-कुछ मूल का अनुगमन करता हुआ सर्जक अनुवादक की अपनी कुशलता से एक नए पाठ के रूप में समुत्पन्न होकर सामने आता है। यह समसामयिकता से भरपूर होकर मूल का आभास बराबर बनाए रखता है। अतः अनुसृजन में सर्जनात्मक साहित्य के अनुवादों को सदैव एक विशिष्ट पाठ के रूप में देखा जाता है। अनुवाद की अपेक्षा अनुसृजन में 'सृजन' एक मूल संकल्पना के रूप में सदैव उपस्थित रहता है, अर्थात् अनुवादक का सर्जनात्मक बोध अनुवाद करते समय इस बात के लिए प्रयासशील रहता है कि वह ऐसे पाठ का निर्माण करे जो मूल का बोध कराता रहे परंतु उसकी परिधि तक सीमित न रहे अपितु स्वयं को एक ऐसे पाठ के रूप में स्थापित करे जो देशकाल और परिस्थितियों के मूल्यों के साथ समन्वय स्थापित करता हुआ अपनी रचनाधर्मिता के उद्देश्य की पूर्ति करे।

9.6.1 कविता का अनुवाद और अनुसृजन

कविता को तो शब्दों के विशिष्ट चयन और नियोजन से उत्पन्न उत्कृष्ट सौंदर्य तत्त्वात्मक कल्पना माना गया है। किसी ने कविता में भाषा प्रयोग की मूल एवं केंद्रीय स्थिति के अनुरूप उसे 'उत्कृष्ट' शब्दों का उत्कृष्ट क्रम कहा

Scanned with CamScanner

है। सर्जनात्मक साहित्य में कवि की अनुभूति और अर्थ-व्यंजना सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। काव्य अनुवाद करते समय यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि मूलकृति की अर्थ-व्यंजना के साथ-साथ अलंकार, प्रतीक, बिंब, सांस्कृतिक शब्दावली, रस-योजना और छंद-योजना आदि को लक्ष्यपाठ में बनाए रखा जाए। अतः जब तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना की तो उन्होंने वाल्मीकि रामायण को अपना आधार ग्रंथ बनाया परंतु कई और अन्य ग्रंथों के अंशों का अनुवाद कर अपने पाठ में तथा अपनी भाषा में इस प्रकार संयोजित एवं सुव्यवस्थित रूप में ढाल लिया कि मानस एक कालजयी मौलिक रचना के रूप में आज भी हमारे सामने है। उल्लेखनीय है कि इस ग्रंथ का सरोकार और प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। ऐसा इसीलिए संभव हुआ कि रचनाकार ने भले ही वाल्मीकी रामायण में वर्णित रामकथा को आधार बनाए रखा परंतु उसे सामयिक सामाजिक-सांस्कृतिक चिंतन से इस प्रकार समन्वित किया कि यह आज भी हमें नई कृति जैसा ही प्रतीत होता है। तुलसी ने इस महाकाव्य में अनेक प्रकरणों, घटनाओं और प्रसंगों को लेते हुए उनका सार-स्वरूप ग्रहण किया और उसे अपनी विलक्षण कवित्व प्रतिभा से नए रूप में पुनर्सृजित कर पाठकों के लिए प्रस्तुत किया।

धृत्वा धैर्य गृहः प्राह विषादं त्यज साम्प्रतम्।
त्वं सुमंत्रा सदा विद्वान धैर्य धर परार्थवित्।।

(आनन्द रामायण, अयोध्या कांड)

धीरज धरि तब कहहि निषादू। अब सुमंत्रा परिहरहु विषादु।
तुम्ह पंडित परमारथ ग्याता। धरहु धीर लखि बिमुख विधाता।।

(रामचरितमानस, बालकांड, 1, 120, 3-4)

इस उदाहरण से यह स्पष्ट होता है कि दोनों उक्तियों में साम्य होते हुए भी कवि ने मूल के अनुरूप छंद को अपनी सर्जनात्मकता से चौपाई छंद में मूल के भाव को बनाए रखते हुए रघुवंश के राज परिवार के संदर्भ और घट रही घटनाओं को बड़ी ही कुशलता से अपने भाव और शब्द शैली में अनुसृजित किया।

सर्जनात्मक साहित्य और विशेष रूप से पद्य साहित्य में अर्थात् कविता में अनेक प्रकार के संदर्भ, समाज और संस्कृति जुड़ी होती हैं। उसके साथ मिथक, पौराणिक संदर्भ, सामाजिक मान्यताएँ, ऐतिहासिक घटनाएँ एवं पात्र आदि की बिंबात्मक प्रस्तुति प्रतीक और अलंकार के माध्यम से होती है। इन सब बिंदुओं को शब्दशः अंतरित करना संभव नहीं होता न ही कविता का केवल भाव दिया जा सकता है। यह इसलिए भी होता है कि कविता की अपनी विशिष्ट योजना, मिथकीय संस्कृति, प्रतीक योजना और बिंब योजना अर्थगत तत्व के संप्रेषण को सरलता से अनूदित होने में व्यवधान उत्पन्न करती है। अनेक अवसरों पर ध्वनि, छंद और रस योजना भी कविता के अनुवाद में अननुवाद्यता जैसी स्थिति उत्पन्न कर देती है। इस परिस्थिति में उसका केवल अनुसृजन किया जा सकता है, क्योंकि अनुसृजन के माध्यम से भावों को सफलता से अपनी शैली और बिंब विधान में अंतरित किया जा सकता है। अंग्रेजी में let us part, on drooping brows तथा weary sad souls के स्थान पर 'आओ हम आज विदा लें', 'अधभीगी पलकों पर', तथा 'मन उदास है', 'प्राण थके हैं', 'जी भारी है' जैसा अनुवाद शब्दानुवाद अथवा भावानुवाद न होकर कवि की सर्जनात्मकता के अनुरूप पुनर्सृजित अनुसृजन है जिसमें बिछुड़ने की पीड़ा, प्रेम, अलसायी पलकों और विरह से व्याकुल मन की पीड़ा आदि को भिन्न प्रतीकों, बिंबों और रचना विधान द्वारा समर्थ रूप से व्यक्त किया जा सका है।

संस्कृत साहित्य में भी अनुसृजन का प्रचुरता से प्रयोग होता रहा है। उत्तररामचरित में भवभूति ने अनेक ऐसे प्रसंग इस नाटक में समाविष्ट किए हैं जहाँ मूल संस्कृत पाठ का प्राकृत अथवा प्राकृत का संस्कृत में अनुसृजन किया गया है। यहाँ मूलभाव को संदर्भानुसार पल्लवित एवं समन्वित किया गया है। संस्कृत गद्य और पद्य में भी यह सृजनात्मक प्रक्रिया लगातार सभी अनुवादों में दिखाई देती है; जैसे-

(क) त्रयाणामपि लोकानां राममयं जीवितत्त्वाद् रामजीवने तज्जीवनमिति भावः।

(ख) रामो रामो राम इति प्रजानामभवद् यथा रामभूतं जगदभूद्रामे राज्यं प्रशासति

यहाँ तीनों लोकों का राममय होना, और तीनों लोक राम ही आधार है; यह भाव गद्य और पद्य दोनों में ही

Scanned with CamScanner

अलग-अलग भाव से अत्यंत मनोहर रूप में व्यक्त हुआ है। अनुसृजन का एक और उदाहरण भवभूति द्वारा स्वचग्नि महावीरचरित, मालतीमाधव तथा उत्तररामचरित में समान (किंचित परिवर्तन के साथ) श्लोकों में दृष्टिगोचर होता है। प्राकृत पद्य से संस्कृत तथा हिंदी में अनुसृजन का एक और उदाहरण देखना भी रुचिकर होगा :

प्राकृत - पच्चुसागअ रंजिदेह पिबालोअ लोअणानन्द
अन्यत्र खवि असिव्विरी णह भूसण दिणवई णमो हे।

संस्कृत - प्रत्यूपागत रंजितदेह प्रयोलोक लोचनानन्द
अन्यत्र क्षणित शर्वरीक नमो (नख) भूषण दिनपते नमस्ते।

हिंदी अनुवाद

रंग रंगीले
तनु वाले हो
प्रिया लोक तुम
नयनानंद बढ़ाने वाले
पता नहीं तुम कहाँ बिताते?
निशि प्रतिदिन हो
दो नभभूषण या नखभूषण
हो दिनकर दिनपति
या दिनभर के पति तुम
नमन तुम्हें है
नमन तुम्हें है।

कुछ स्थितियों में पाठ का अनुवाद पुनर्रचना के रूप में पुनर्सृजित किया जाता है। यतीन्द्र कुमार द्वारा जॉन कीट्स की कविता 'Ode to a nightingale' का अनुवाद इस संदर्भ में अवलोकनीय है :

...where men sit and hear each other groan,
Where palsy shakes a few, sad, last grey hairs,
Where youth grows pale, and spectre thin and dies
Where but to think is to be full or sorrow
And laden-eyed despairs,
Where beauty connot keep her lustrous eyes
Or new Love pine at them beyond tomoroow.

(Ode to a Nightingale-John Keats)

.....जहाँ कान में भरता,
मनुजों का दल बैठ व्यथाएँ अपनी और पराई,
कंपवात है जहाँ कंपाता, अंतिम और दर्दीले
जरा-जीर्ण भूरे बालों को, पीला पड़ता यौवन,
प्रेत सरीखा होता है, और भर जाता जहाँ कि चिंतन
होता है केवल विषाद-भावों से भरते जाना,
चरम निराशा से पलकों का भारी होते आना,
जहाँ न रूप नयन अपने रख सकता है चमकीले,
और न नवल प्रणय ही भावी कल के परे सिसकता।

(महाकवि कीट्स का काव्यलोक-यतीन्द्र कुमार)

इस अनुवाद को सृजन के उदाहरण के रूप में देखने पर प्रतीत होता है कि यतीन्द्र कुमार ने पाठ की काव्यात्मकता और सर्जनात्मकता को बनाए रखने के लिए विशेष अभिप्राय वाले शब्दों का प्रयोग किया है; जैसे- अपनी पराइ

Scanned with CamScanner

व्यथा, कंपवात और कंपाता तथा अंतिम और दर्जीले जराजीर्ण वाले बालों और पीला पड़ता यौवन तथा रूप और चमकीले आदि। ये शब्द मूल पाठ के groan, palsy, a few, sad, last gray, youth grows pale, तथा beauty एवं lustrous के स्थान पर प्रयुक्त हुए हैं जो पूर्णरूप से अनुवादक की सृजनात्मकता के परिणामस्वरूप अनुवाद को अनुसृजन अथवा पुनर्रचना के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

एक और अत्यंत लोकप्रिय अनुवाद अनुसृजन के रूप में भगवद्गीता के श्लोक का अनुवाद है।

यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम् धर्मस्य तदामानं स जाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाषाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे।। (4.7)

इस श्लोक के भाव को मानस में इस प्रकार व्यक्त किया गया है :

जब-जब होइ धर्म की हानि। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।
तब-तब हरि धरि विविध सरीरा। हरहिं व्याधि सज्जन की पीरा।। (1-120.6.8)

तुलसीदास ने देश और काल की परिस्थितियों के अनुसार गीता के उपदेश के मूलाधार को परखते हुए अपनी नीर-क्षीर विवेक दृष्टि से इस महत्वंपूर्ण श्लोक का अनुवाद तो किया परंतु लोकभाषा के भाव और संदर्भ को अपनी शब्द-संयोजना में फिर से सृजित रूप में एक अलग क्लेवर और कृति के रूप में स्थापित कर दिया है।

कविता के अनुवाद का कार्य एक असंभव और असाध्य कार्य प्रतीत होता है जिसे पूर्णतः अपनी विषयवस्तु और शैली के रूप में अंतरित करना संभव नहीं होता है। क्रोचे के मतानुसार विश्व के साहित्य में ऐसे काव्य अनुवाद अत्यंत विरल है जिन्हें 'दूसरी कृति' न कहा जा सके अर्थात् केवल अनुवाद या भावानुवाद नहीं अपितु एक नए पाठ के रूप में अनुसृजन। यही कारण है कि काव्यानुभूति का संप्रेषण या व्यंजना दुसाध्य कार्य है, क्योंकि कवि मूल रचना का रूपांतरण नहीं अपितु अनुसृजन करता है। इस दृष्टि से भी विशेषज्ञों ने काव्य अनुवाद को अनुसर्जना अथवा सर्जनात्मक अनुकरण कहा है। संभवतः यही अनुसृजन की मूल भावना भी होली है।

9.6.2 कथा-साहित्य और अनुसृजन

सर्जनात्मक साहित्य में कविता के अनुवाद के समान ही कथा एवं उपन्यास साहित्य का अनुवाद भी कोई सरल कार्य नहीं है। कथा-साहित्य में अनुवादक को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उसे भाव-भंगिमाओं, शैली की सूक्ष्मताओं, अर्थ-छायाओं, लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ, प्रतीकों, बिंबों, अंलकारों एवं काव्यात्मक प्रयोगों के रूप में उपस्थित अनेक ऐसे श्लिष्ट पहलुओं से जूझना पड़ता है जिनका अनुवाद करना कठिन होता है। कथा-साहित्य के अनुवाद में मूलनिष्ठता, वर्णनात्मकता, सांस्कृतिक परिवेश, आंचलिक संस्कृति एवं भाषा प्रयोग मुहावरे और दूसरे ऐसे अनेक साहित्यिक उपादान मूल लेखक द्वारा प्रयुक्त किए जाते हैं जिनके अनुवाद की गुंजाइश कम होती है। यही कारण है कि मौलिक कृति जैसी सहजता और स्वाभाविकता को बनाए रखने के लिए कथा-साहित्य के अनुवाद में सृजनात्मकता की अपेक्षा सर्वाधिक होती है। अनुवादक मूल से छूट लेता है तथा लक्ष्यवर्ग के परिवेश के अनुसार भाषा का चयन करता है और मूल कथा-साहित्य में घटनाओं, पात्रों, उनके क्रिया-कलापों और वेषभूषा एवं परिवेश इत्यादि को यथासंभव सरस बनाकर मूल पाठ के अनुगामी के क्लेवर में एक प्रकार से नए पाठ का सृजन करता है। कथा-साहित्य में सांस्कृतिक साहित्य सर्वाधिक होता है और विदेशी भाषाओं से अनुवाद करते समय स्थानीय लोगों के धर्म, आस्था एवं चिंतन पद्धति के साथ साम्य बिठाने में अनुवादक को कई स्तरों पर जूझना पड़ता है तथा गंभीरता से काम करना होता है। मराठी साहित्य पर ध्यान देने पर पता चलता है कि मराठी के अनेक शब्दों के हिंदी अर्थ मराठी में प्रचलित अर्थ से भिन्न होते हैं। ताई, बर्तन, मंडली, शिक्षा, हलबल, राजकीय, गकर्तवगार आदि ऐसे ही शब्द हैं। अनुवादक को ऐसे शब्दों के स्थान पर अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा से उनके लिए लक्ष्यभाषा मे प्रचलित सार्थक शब्द प्रयुक्त करने होते हैं। मलयालम के तैडिन एवं तोघू ऐसे ही शब्द हैं जो विशेष अर्थ लिए प्रयुक्त होते हैं। इनके अर्थ नारियल की बगिया होते हुए भी शीतल, मंद, सुगंध और सुवासित परिवेश के द्योतक हैं। हिंदी के कुशल, होशियार तथा साहसी आदि शब्द व्युत्पत्तिपरक रूप में अन्यार्थ के द्योतक हैं।

Scanned with CamScanner

कथा-साहित्य में सामाजिक संबंध अथवा संस्कृति की प्रचुरता होती है। रिश्ते नातों के अनेक संश्लिष्ट एवं सामाजिक संबोधन होते हैं। विभिन्न अवसरों पर खुशी, नाराजगी, स्वागत और लांछन एवं व्यंग्य आदि के लिए विशिष्ट शब्दों का प्रयोग किया जाता है। अपनी भाषा-भंगिमाओं और विशिष्ट सामाजिक सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के कारण कृष्णा सोबती के 'मित्रों मरजानी' उपन्यास का अनुवाद भारतीय भाषाओं के लिए भी दुष्कर प्रतीत होता है; जैसे कि-'तेरा भाई गुस्से में सौदाई, हुआ बैठा है', 'चलके उसे ठंडा कर', 'अरे, इसी शीरे में तेरी जान को डंक मारते सर्पों की फौजें पलती हैं'। विदेशी भाषाओं के लिए तो यह एक कठिन कार्य है ही। प्रेमचंद की कहानी ईदगाह का अनुवाद भी देखने योग्य है। इसमें केवल शब्द अथवा वाक्य रूपांतरित नहीं हुए हैं, बल्कि समूचे पाठ की प्रक्रिया के क्रम में प्रतिस्थापन दिखाई देता है। अंग्रेजी भाषा की विशिष्ट प्रकृति और उसकी सामाजिक सांस्कृतिक संरचना के अनुरूप यह जो नया पाठ प्रतीत होता है वह अनुवाद तो है, लेकिन अनृसृजन है।

> अमीना ने छाती पीट ली। यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पिया। लाया, क्या चिमटा। सारे मेले में तुझे और कोई चीज न मिली जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया? हामिद ने अपराधी भाव से कहा-'तुम्हारी अंगुलियाँ तवे से जल जाती थीं इसीलिए मैंने इसे लिया'। बुढ़िया का क्रोध तुरंत स्नेह में बदल गया और स्नेह भी वह नहीं जो प्रगल्भ होता है और अपनी सारी कसक शब्दों में बिखेर देता है।
>
> Amina wrung her hands; what a foolish boy he was! It was noon, and he had nothing to eat or drink. What did he get? Tongs!
>
> 'Couldn't you get anything else at the whole fair since you had to pick up these tongs?' Hamid said guiltily, 'Your fingers burn on the griddle, so I bought these'. The old woman's annoyance changed into love, and not alone love which is wasted in words, but one that is silent, deep and filled with sweetness.

अनुवाद क्रम में इस पाठ के आलोक में स्पष्टतः देखा जा सकता है कि अनुवादक लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुकूल शब्द, पदबंध अथवा वाक्य स्तर पर अंतर वाक्य संरचना और संसक्ति एवं अर्थ संगति को बनाए रखने के लिए अपने सृजनात्मक कोशल से मूल पाठ के भाव को लक्ष्यभाषा के कुछ ही शब्दों में संप्रेषित कर देता है। इस प्रकार साहित्यिक पाठ अनुवाद होते हुए भी उसमें अनुसृजन जैसे तत्व मिल जाते हैं। टैगोर, प्रेमचंद तथा सत्यजीत रे की कृतियों के सिनेमा रूपांतरणों में इस प्रकार के भरपूर प्रयोग भी अनुसृजन के अच्छे उदाहरण हैं। रामचंद्र शुक्ल ने बुद्धचरितम् में एडविन ऑर्नल्ड के काव्य 'लाइट ऑफ एशिया' के एक अत्यंत संश्लिष्ट अंश को केवल नौ शब्दों में अनूदित कर दिया। जैसे :

अंग्रेजी पाठ

> … in the brake now fierce
> The war of wead and strong! In the what plots!
> No refuge e'en in water?

हिंदी पाठ

> 'सबल निबल को समर चलत जल थल में ऐसो'

स्पष्ट है कि लक्ष्यभाषा का अनूदित पाठ स्रोतभाषा के मूल पाठ का सहपाठ भी होता है और साथ ही यह एक अलग कृति के रूप में अनुसृजन भी लगता है।

9.6.3 नाटक और अनुसृजन

सृजनात्मक साहित्य में नाटक की विधा एक महत्वपूर्ण साहित्यिक विधा है। नाटकों के अनुवाद में जहाँ पात्र, संवाद, नाटकीयता एवं मंचीयता जैसे गूलभूत गुण होते हैं वहीं इसमें ध्वनि, प्रकाश, नाटक की सोदेश्यता एवं भौगोलिकता जैसे नाटकीय पक्ष भी होते हैं। संवादों की भाषा, भौगोलिकता, पात्रों की मनःस्थिति एवं साधारणीकरण जैसे तत्वों का अनुवाद करना कभी-कभी असंभव प्रतीत होता है। नाटक जनसाधारण की विधा है और उसे केवल मंच पर

Scanned with CamScanner

हीं अभिनीत किया जा सकता है। नाटकों के अनुवाद में पात्रानुकूल भाषा एवं स्रोतभाषा की भावगत और शिल्पगत विशेषताएँ इसे अनुवाद के लिए दुरूह बनाती हैं। सूज़न बेसनेट ने अपने एक लेख में नाटक की विभिन्न अनुवाद संबंधी पेचीदगीओं से निबटने के लिए कुछ समाधान प्रस्तुत किए हैं। उनके अनुसार नाटक का अनुवाद करते समय मूलकृति एक साहित्यिक कृति के रूप में स्वीकृत की जानी चाहिए तथा स्रोतभाषा की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को आधार पर मानकर नाटक की अभिनेयता का अनुवाद किया जाना चाहिए। स्रोतभाषा में प्रयुक्त काव्य शैली का अनुवाद लक्ष्यभाषा की शैलियों के अनुरूप होना चाहिए जैसे कि यूनानी त्रासदियों अथवा भारतीय कामुदियों के अनुवाद। बेसनेट का मानना है कि नाटक के अनुवाद में सहयोग प्रेरित अनुवाद से अत्यंत संतोषजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। मूलकृति के प्रति निष्ठता का पक्ष भी नाटकों के अनुवाद में महत्वपूर्ण है। शरदचंद्र की रचनाओं के जो अनुवाद अंग्रेजी से हिंदी में हो रहे हैं उन पर प्रश्न चिह्न के साथ-साथ विदेशी भाषाओं से अंग्रेजी और फिर हिंदी में होने वाले अनुवादों पर भी यह प्रश्न चिह्न लगाए जा रहे हैं। मूल प्रश्न यह है कि इन कृतियों के अनुवादों में मूल के प्रति निष्ठता का निर्वहन हो पाया है अथवा नहीं। मूल निष्ठता का प्रश्न एक पक्षीय नहीं हो सकता क्योंकि यदि केवल मूल के प्रति निष्ठता ही विचारणीय विषय रहेगा तो नाटक अपने रस से दर्शकों को सराबोर नहीं कर सकता और यह मूलानुगामी होकर केवल शब्दांतरण का भाव देता रहेगा। अतः यह आवश्यक है कि नाटक के अनुवाद में पात्र, स्थान, वातावरण आदि इस प्रकार से अंतरित किए जाए कि नाटक की मूल भावना, विषयवस्तु एवं शिल्पगत विशेषता बनी रहे। इसके लिए अनुवादक को सृजनात्मक कोशल का परिचय देना होता है। भारतेंदु द्वारा अनूदित 'मुद्राराक्षस' और मोहन राकेश द्वारा अनूदित 'मृच्छकटिकम्' आज भी अनुसृजित नाटकों के रूप में उपयोगी उदाहरण हैं।

साहित्यिक अनुवाद के विषय में आपने देखा कि सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद अन्य विधाओं से सर्वथा भिन्न है, क्योंकि इसमें अर्थ की व्यंजना एक महत्वपूर्ण तत्व होता है। यह भिन्नता बिंब, प्रतीक, व्यंग्य, ध्वनि, अलंकार और सांस्कृतिक तत्वों के प्रयोग से साहित्य में उत्पन्न होता है। सृजनात्मक लेखक अपने पाठ में ऐसी उक्तियों का प्रयोग करता है जो भाषा की व्यंजना में वृद्धि करती हैं तथा परिवेश विशेष की संस्कृति उनका स्रोत होती है। मुहावरे और लोकोक्तियाँ भाषा की सांस्कृतिक चेतना और क्षेत्र-विशेष की अस्मिता के वाहक होते हैं। यही अभिव्यक्ति को सशक्तता और स्वाभाविकता प्रदान करते हैं। इनमें युग-युगांत के लोकानुभव सहेजे हुए रूप में हमारे सामने उभर आते हैं। इनके प्रयोग से लेखन में न केवल प्रखरता आती है अपितु इस प्रकार की रचना अधिक सांस्कृतिक, आलंकारिक और प्रामाणिक भी हो जाती है। मुहावरों और लोकोक्तियों के अनुवाद में मूल व्यंजना को सुरक्षित रखना, लोक पृष्ठभूमि को बनाए रखना तथा शब्द-संयोजन और उसकी अर्थगत तथा शैलीगत विशेषताओं को लक्ष्यभाषा में बनाए रखना महत्वपूर्ण है। सबसे कठिन तो यह है कि स्रोतपाठ के समान प्रभाव वाला लक्ष्यपाठ तैयार हो इसके लिए अनुवादक को पर्याप्त रूप से लक्ष्यभाषा की भाषिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तथा भौगोलिक पहचान होनी आवश्यक है। आमतौर पर मुहावरों का शाब्दिक अनुवाद अपवाद स्वरूप ही होता है। इनका अनुवाद करते समय अधिकांशतः समानार्थक और निकटार्थक मुहावरा ही खोजा जाता है। भावानुवाद एवं व्याख्यानुवाद की पद्धति का प्रयोग भी होता है। लोकोक्तियों के अनुवाद में भी सृजनात्मकला का भरपूर प्रयोग अनुवादक करता है। विशुद्ध रूप से लोक के अनुभवों और मूल्यों से अनुप्राणित होने के कारण लोकोक्तियाँ जब दूसरे परिवेश के लिए अंतरित होती हैं तो उनके लिए एक नए पाठ का सृजन भी किया जाता है। जैसे कि 'बूढ़ा तोता राम-राम नहीं पढ़ता' के लिए अंग्रेजी में Old dog will not learn new tricks अथवा 'सब कुछ दाँव पर लगाने' के लिए To have all your eggs in one basket अपने में एक नया पाठ सृजित हुआ है। 'न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी' का शाब्दिक अनुवाद नहीं हो सकता। इस उदाहरणों में भारतीय और अंग्रेजी परिवेश की लकीर साफ दिखाई देती है। अतः इन स्थितियों को ध्यान में रखते हुए अनुवादक अपनी सृजन-शक्ति से यथासंभव लक्ष्यभाषा में मूल जैसी अभिव्यंजना वाला अनूदित पाठ की अनुसर्जना करता है।

9.7 तकनीकी साहित्य और अनुसृजन

वर्तमान युग सूचना और संचारक्रांति का युग है। सूचना ही शक्ति है यह प्रतिष्ठित हो चुका है। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में लगातार सहयोग, विकास और परस्पर सहभागिता बढ़ती जा रही है दिन-प्रतिदिन नए आविष्कार तथा

Scanned with CamScanner

ज्ञान की नई-नई शाखाएँ उभर कर सामने आ रही हैं। नई परिस्थितियों में ज्ञान और सूचना का वैश्विक संवाद अनिवार्य हो गया है। आज कोई भी राष्ट्र नितांत अलगाव की स्थिति में आगे नहीं बढ़ सकता। अतः अपनी सामाजिक, भौगोलिक और पारंपरिक रूप से परिवेशीय तथा पर्यावरणीय सूचना एवं ज्ञान की प्राप्ति के लिए उसे दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। परंतु सृजित ज्ञान 'दूसरी' या 'अन्य' (other) भाषा में होने के कारण उसकी उपलब्धता का एक मात्र विकल्प अनुवाद ही है। अनुवादविज्ञानियों का मत है कि तकनीकी साहित्य का केवल शाब्दिक अनुवाद करने से इतर समाज, राष्ट्र अथवा समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा नहीं किया जा सकता क्योंकि विभिन्न समाजों की भाषिक और सांस्कृतिक अपेक्षाएँ एवं मूल्य अलग-अलग होते हैं तथा अन्य परिवेश की मान्यताओं को उसी रूप में स्वीकार करना संभव नहीं होता। यही कारण है कि तकनीकी साहित्य के अनुवाद के लिए अनुसृजन पर बल दिया गया है ताकि उसे लक्ष्य परिवेश में प्रयोगजन्य एवं स्वीकरणीय बनाया जा सके। उल्लेखनीय है कि ज्ञान-साहित्य का निर्माण काल, स्थिति एवं परिवेश-सापेक्ष होता है।

तकनीकी साहित्य की विषयवस्तु और वैज्ञानिकता विशिष्ट होती है तथा उसके अनुवाद में व्यवहारपरकता एवं प्रयोजनमूलकता का तत्व प्रमुख होता है। अतः कई अवसरों पर उसका शाब्दिक अनुवाद भाषा-शैली के स्तर पर अस्वाभाविक और अस्पष्ट लगता है। इसीलिए उसे वर्णानात्मक रूप में भी व्यक्त किया जाता है ताकि गूढ़ संकल्पनाओं को सरल एवं सहज रूप से लक्ष्य परिवेश में व्यक्त किया जा सके। गणित एवं भौतिकी तथा रसायन विज्ञान एवं विज्ञान की उभरती शाखाओं में निर्मित तकनीकी एवं ज्ञान साहित्य इसका उदाहरण है। जाहिर है कि इस कार्य को अनुवादक अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा से लक्ष्य परिवेश के अनुसार नए पाठ का सृजन कर ही संपन्न कर सकता है। साहित्यिक और तकनीकी क्षेत्र में अनुसृजन का महत्व इसीलिए भी है कि अनुसृजन एक प्रकार की कलात्मक कृति के रूप में परिणत होता है क्योंकि यह अपने आप में एक सहपाठ बन जाता है। अतः अनुसृजन व्यापक और सर्जनात्मक होने से अपनी प्रभावशीलता और कल्पनाशीलता के कारण अनुवाद की विशिष्ट विधा बन जाता है। सूचना साहित्य का भी अनुवादक देशकाल और परिस्थिति के अनुसार पुनर्सृजन करता है तथा संगतता प्रदान करने के लिए लक्ष्य परिवेश के साथ समन्वयन करता है। सूचना सामग्री का एक गुण यह भी होता है कि वह लक्ष्य परिवेश के लिए संगत हो। ज्ञान प्रधान साहित्य का विकास किसी समाज विशेष में उसकी अपनी जरूरतों एवं योग्यताओं पर विकसित होता है परंतु उसके वैश्विक संदर्भ एवं प्रयोग तभी संभव हो पाते हैं जब उसे लक्ष्य परिवेश की संस्कृति से जोड़ा जाए। अनेक अवसरों पर पाया गया है कि ज्ञान प्रधान साहित्य के असफल होने का मुख्य कारण उसे लक्ष्यभाषा के अनुसार ग्राह्य न बनाना ही रहा है। बाल-साहित्य के संदर्भ में तो यह स्पष्ट ही हो चुका है कि उसे लक्ष्य अर्थात् बालकों की वय, मानसिक क्षमता एवं उनके परिवेश में घुलने-मिलने की योग्यता से संपन्न कर एक अलग क्लेवर तथा शैली में प्रस्तुत करना ही श्रेयस्कर होता है, अर्थात् उसका पुनर्सृजन कर बालकों की अभिरुचि के अनुसार ढालकर एक नए पाठ के रूप में अनुसृजित पाठ उपलब्ध कराया जाता है।

तकनीकी साहित्य और ज्ञान-प्रधान साहित्य तथा वैज्ञानिक साहित्य किन्हीं रूपों में समता लिए हुए होते हैं। ज्ञान प्रधान साहित्य में कभी-कभी मूल संदर्भों का अभाव/अस्पष्टता सामने आती है। इस प्रकार का साहित्य मानव सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ-साथ अनुभूतियों और घटनाओं का समावेश करता हुआ अपना स्वरूप ग्रहण करता है। उचित परिप्रेक्ष्य का अभाव तथा किसी राष्ट्र अथवा स्थान विशेष में वैज्ञानिक लेखन के अभाव में भी इस प्रकार के साहित्य को अनूदित करते समय पहले से स्थापित परंपरा न होने के कारण अनुवादक अक्सर द्विविधा में उलझ जाता है। यह भी देखा गया है कि वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य जिसमें सूचना, ज्ञान एवं सहज शिक्षण आदि सम्मिलित होता है उसकी अपनी विशिष्ट शैली होने के कारण प्रत्येक लक्ष्य परिवेश की भाषाओं में समतुल्य पर्याय मुश्किल से मिलते हैं। इन परिस्थितियों के दृष्टिगत तकनीकी साहित्य का लक्ष्य परिवेश में केवल पुनर्सृजन द्वारा ही मूल पाठ के कथ्य को संप्रेषित किया जा सकता है और उसे ग्रहण योग्य बनाया जा सकता है। इस प्रक्रिया में अनुवादक की सर्जनात्मक प्रतिभा ज्ञानात्मक साहित्य को किसी परिवेश के लिए न केवल उपयोगी बना सकती है बल्कि उस परिवेश में उपलब्ध तकनीकी और अनुभवजन्य ज्ञान को सहज एवं सुलभ रूप से मूल पाठ के साथ समावेशी पाठ तैयार कर तकनीकी और वैज्ञानिक साहित्य को सोद्देश्य बना देती है। इस प्रकार तकनीकी साहित्य के अनुवाद में सृजन की पर्याप्त संभावना के कारण अनुसृजन व्यापक रूप में परिलक्षित होता है।

Scanned with CamScanner

9.8 विज्ञापन और अनुसृजन

जैसा कि 'विज्ञापन' शब्द से अभिहित है; किसी वस्तु अथवा सेवा या विचार की उपयोगिता एवं उसके गुणों तथा अवगुणों के बारे में दूसरों को जानकारी देना, यानी विशेष रूप से ज्ञापित अथवा प्रचारित करना। विज्ञापन की इस परिभाषा के आलोक में यह स्पष्ट हो जाता है कि विज्ञापन एक प्रकार की बिक्री अथवा किसी की राय को प्रभावित करना अथवा अपनी सूचना को दूसरों तक पहुचाने की गतिविधि है। इस नाते यह एक प्रकार की वाणिज्यिक और व्यावसायिक गतिविधि भी है। विशिष्ट स्वार्थ यहाँ निहित होते हैं। विज्ञापन के साथ उत्पादनकर्ता, उत्पाद, प्रायोजक और विचारधारा सम्मिलित रहती है। अभिप्राय यह कि विज्ञापन के माध्यम से हम कई कार्य एक साथ कर रहे होते हैं। यही कारण है कि विज्ञापन की अपनी विशिष्ट भाषा होती है और इसका प्रयोग अलग-अलग उद्देश्यों से होता है। विज्ञापनों की भाषा की अपनी शब्दावली तथा वाक्य-सरंचना होती है। विज्ञापन में जितना महत्व विज्ञापित की जाने वाली वस्तु अथवा उत्पाद या सूचना का होता है उतना ही महत्व उसके प्रचार में प्रयुक्त की जाने वाली भाषा का भी होता है। विज्ञापनों की भाषा में देखा गया है कि आमतौर पर बोलचाल और सामाजिक मुहावरे की भाषा का प्रयोग अधिक होता है। इसी से विज्ञापनों की भाषा में कुछ सहजात गुण आ जाते हैं। इनमें भाषायी आकर्षण के तत्व, सुगम्यता एवं पाठ्यता, स्मरणीयता और उत्पाद को विक्रय के लिए योग्य बनाने की शक्ति शामिल है। भाषा के इस प्रयोग में कई प्रकार के आकर्षक तत्व दिखाई देते हैं जिसमें **ऐसा, क्यों, सिर्फ, सुझाव** एवं **प्रश्नवाचक** तथा विस्मय आदि की अभिव्यक्तियाँ रहती हैं; जैसे कि '**सिर्फ एक चम्मच ताजा चाय**', '**जब इंजन करे इकरार तो क्या करेंगे आप** (टू टी ऑयल)', '**सेरीडॉन की टिकिया एक, फायदे अनेक**' आदि विज्ञापन द्रष्टव्य हैं।। विज्ञापनों की भाषा सुनने में और पढ़ने में न केवल आसान लगती है बल्कि वह अभिप्राय को भी व्यक्त करती है, **हिमालय जैसी सफेदी; सिर्फ सर्फ एक्सेल से** इसका अपना शब्द बिंब और विन्यास है जो उत्पाद को असीम ऊँचाइयों पर होने का काल्पनिक अहसास देता है। विज्ञापनों की भाषा में एक और गुण जो उत्पाद अथवा सेवा को उपभोक्ता के मन में सदैव बनाए रखता है वह है विज्ञापन की भाषा का विशिष्ट प्रयुक्ति रूप; यानी छोटे-छोटे सरल वाक्य जो नारानुमा होते हैं तथा अचानक ही हमारी याद्दाश्त में बस जाते हैं। जैसे '**ये मन माँगे मोर, 'चुटकी भर टीनॉल'**। विज्ञापन के अनुवाद में अनुवादक अधिकांशतः वह मूलकथ्य को पुनर्सृजित कर उसका अनुसृजन अधिकाधिक करता है। क्योंकि यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो विज्ञापन अपने उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर पाएगा। अंग्रेजी में **Dunlop is Dunlop** और **hourly chimes** के लिए '**डनलप है लाजवाब**' तथा '**हर घंटे सुहानी घंटी**' आदि पूर्णतः अलग शब्दावली के अनुवाद उदाहरण निश्चित रूप से अनुवादक की सर्जनात्मक प्रतिभा के परिचायक हैं। इस प्रकार विज्ञापनों की अनुसर्जना ही एक मात्र विचारणीय बिंदु होता है जिसके कारण विज्ञापन सजीव और संप्रेषणीय बन जाते हैं। सर्जनात्मक प्रतिभा का धनी अनुवादक अपनी योग्यता से कभी-कभी अनूदित विज्ञापन को मौलिकता और प्रभावोत्पादकता से संपन्न कर उसे मूल से कहीं अधिक रोचक और उद्देश्यपरक बना देता है।

9.9 सारांश

अनुवाद की प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार के पाठों की प्रकृति और लक्ष्यभाषा की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए अनुवादक अलग-अलग अनुवाद प्रविधियों को अपनाता है। वह शब्दानुवाद, भावानुवाद, सारानुवाद, निर्वचन अथवा आशु-अनुवाद आदि के माध्यम से मूल के कथ्य को लक्ष्यभाषा की सांस्कृतिक और भाषिक परिवेश में अंतरित (संप्रेषित) करता है। अनेक अवसरों पर यह देखा गया है कि मूल पाठ का शब्दानुवाद अथवा भावानुवाद या सारानुवाद लक्ष्यभाषा अथवा प्रयोक्ता वर्ग की आवश्यकताओं एवं उपादेयताओं को पूरा नहीं करता है। इस परिस्थिति में अनुवादक अपने अनुभव एवं संचित ज्ञान के आधार पर पाठ का विश्लेषण, अंतरण एवं पुनर्गठन करता है और उसे अपनी अनुसर्जनात्मक प्रतिभा से एक अलग पाठ के रूप में सृजित कर सोद्देश्य एवं संप्रेष्य रूप दे देता है। इस दृष्टि से अनुसृजन अनुवाद की विधा होने के साथ-साथ अपने में विशिष्ट विधा भी है। साहित्य अनुवाद में सर्जनात्मकता एवं अर्थ अभिव्यक्ति के लिए अनेक बिंबों, अलंकारों, प्रतीकों और अन्य युक्तियों को प्रयोग किया जाता है। इससे मूल पाठ का न तो शब्दानुवाद संभव होता है न ही कविता जैसी सर्जनात्मक विधा का सारानुवाद अथवा भावानुवाद किया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में यदि अनुवाद किया जाना हो तो मूल की अक्षुण्णता

Scanned with CamScanner

के साथ-साथ भाव पल्लवन एवं विस्तार आदि अनुवादक की सर्जनात्मक प्रतिभा से संभव हो पाता है, अर्थात् काव्य के अनुवाद में अनुसृजन और पुनर्सृजन की भूमिका को नजर-अंदाज नहीं किया जा सकता। इकाई में चर्चा के दौरान यह भी स्पष्ट हुआ कि काव्यात्मक साहित्य के साथ-साथ उपन्यास, कथा एवं नाट्य साहित्य के अनुवाद में भी अनुवादक यदि कवि की मूल भावना तक पहुचना चाहता है तो उसे स्रोतपाठ के केंद्रीय कथ्य को लक्ष्यभाषा एवं पाठक की भाषिक और सांस्कृतिक चेतना के साथ जोड़ने के लिए अपने अनुभव और प्रतिभा से सिंचित कर एक स्वतंत्र पाठ के रूप में सृजित करना पड़ता है। इसमें पाठ का विस्तार, सामयिक संदर्भों का समावेश एवं लक्ष्य परिवेश के मूल्य के साथ सहसंयोजन अपेक्षित रहता है। परिणामस्वरूप अनुवादक की सृजनात्मक प्रतिभा से अनूदित पाठ तैयार होता है जो कभी-कभी अनुसृजन का रूप ले लेता है।

वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य के अनुवाद में अनुसृजन की अपेक्षा बड़ी तीव्रता से अनुभव की जा रही है। इसका कारण है कि वैश्विक स्तर पर ज्ञान-प्रधान साहित्य में अनुसंधान और विकास आज वैश्विक दृष्टि का विचारणीय पक्ष है और कोई राष्ट्र विलगता अथवा अलगाव में विकास एवं शोध में आगे नहीं बढ़ सकता। परिणामतः ज्ञान, सूचना एवं संकल्पना आदि से संबंधित साहित्य का द्रुतगति से प्रचार-प्रसार यदि सार्थक रूप में किया जाना है तो उसे लक्ष्य परिवेश, भाषा एवं संस्कृति से जोड़कर पुनः सृजित करने की आवश्यकता है। उसके सार्वभौम उपयोग हेतु उसे लक्ष्य के अनुरूप बनाने में अनुवादक की सर्जनात्मक प्रतिभा महत्वपूर्ण उपागम होता है।

विज्ञापन के अनुवाद में भी संप्रेषणीयता, सहजता, सरलता, पठनीयता, सुग्राह्यता, सोद्देश्यता एवं विक्रयशीलता आदि महत्वपूर्ण भाषिक तत्व अनुवादक के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न करते हैं। अनूदित विज्ञापन के इन सभी गुणों को मूल पाठ के अनुरूप ही बनाए रखने के लिए अनुवादक अपनी प्रतिभा से एक अलग पाठ का अनुसृजन कर देता है जिसमें मौलिकता प्रवाह और लय तो होती ही है साथ ही उसकी संप्रेषण शक्ति एवं विज्ञापन की सोद्देश्यता और भी प्रखर हो जाती है। इस प्रकार आपने यह अनुभव किया होगा कि अनुसृजन मूल से हटकर एक सर्वथा नए पाठ की निर्माण प्रक्रिया न होकर मूलभाव को केंद्रीयता प्रदान करते हुए लक्ष्यभाषा एवं परिवेश के भाषिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप ऐसे पाठ का निर्माण करना है जो विधा-विशेष की अपेक्षाओं पर खरा उतरे और केवल मूल की प्रतिकृति अथवा नकल मात्र न होकर एक सार्थक पाठ के रूप में स्वतंत्र रूप से भी स्वीकरणीय हो।

9.10 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. अनुसृजन का तात्पर्य स्पष्ट करते हुए इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।
2. अनुसृजन और अनुवाद में अंतरभेद स्पष्ट कीजिए।
3. साहित्य के अनुवाद में अनुसृजन की भूमिका एवं उपादेयता पर विचार कीजिए।
4. ज्ञान-प्रधान एवं बाल-साहित्य में अनुसृजन से होने वाले पाठपरक प्रभाव की विवेचना कीजिए।
5. विज्ञापन के अनुवाद में किस प्रकार की प्रविधि सबसे अधिक अनुकूल समझी जाती है। अपना मत उदाहरण सहित व्यक्त कीजिए।
6. 'अनुसृजन केवल मूल का अनुगमन नहीं होता है', इस कथन की समीक्षा कीजिए।

9.11 शब्दावली

अनुसृजन, पुनर्सृजन, विधांतरण, सार्वभौम, मिथकीय, पुनर्रचना

9.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- गार्गी गुप्ता, अनुवाद चिंतन के ऐतिहासिक आयाम, नई दिल्ली, भारतीय अनुवाद परिषद।
- कृष्ण कुमार गोस्वामी, 2008, 2012, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन।

Scanned with CamScanner

- नगेंद्र (सं.) अनुवाद विज्ञान, सिद्धांत एवं अनुप्रयोग, दिल्ली, हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय।
- कैलाशचंद्र भाटिया, अनुवाद कला : सिद्धांत और प्रयोग, नई दिल्ली, तक्षशिला प्रकाशन।
- कृष्ण कुमार रत्तू, अनुवाद का नया चेहरा।
- सुरेश सिंहल, 2006, अनुवाद संवेदना और सरोकार, दिल्ली, संजय प्रकाशन।
- Filming Fiction: Tagore Premchand Ray (ed.), M. Assduddin and Anuradha Ghosh, Oxford.

Scanned with CamScanner

इकाई 10 रूपांतरण और अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 रूपांतरण : अर्थ और स्वरूप

10.3 पाठपरक प्रस्तुति

10.4 पाठ से पाठ रूपांतरण

10.5 पाठ से मंच रूपांतरण

10.6 पाठ से स्क्रीन या फिल्म रूपांतरण

10.7 अनुवाद और रूपांतरण में अंतर और संबंध

10.8 सारांश

10.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

10.10 शब्दावली

10.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- रूपांतरण एवं पुनर्सृजन के बीच अंतर स्पष्ट कर सकेंगे;
- रूपांतरण से जुड़े चरणों की सूची बना सकेगें;
- भिन्न प्रकार के रूपांतरणों की व्याख्या कर सकेंगे;
- रूपांतरण के भिन्न-भिन्न रूपों में मौजूद प्रक्रियाओं को जान सकेंगे; और
- सांस्कृतिक रूपांतरणों की प्रक्रियाओं को पहचान सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई के अध्ययन से आप जान चुके हैं कि अनुसृजन या पुनर्सृजन क्या है और उसमें कौन-सी प्रक्रियाएँ सम्मिलित होती हैं। इससे पूर्व आप निर्वचन और सारानुवाद के बारे में भी जान चुके हैं। अनुवाद की अनेक विधाओं में रूपांतरण (adaptation) भी एक विशिष्ट विधा है। इसका अपना विशेष उद्देश्य और प्रयोज्य क्षेत्र है। इस इकाई में हम रूपांतरण एवं उसके विभिन्न रूपों तथा भिन्न प्रकार के रूपांतरणों में प्रयुक्त विभिन्न पद्धतियों पर विस्तार से चर्चा करेंगे। सबसे पहले हम अनुसृजन एवं रूपांतरण की समानताओं एवं मुख्य भिन्नताओं की पहचान करते हैं ताकि रूपांतरण की संकल्पना से आप परिचित हो सकें।

10.2 रूपांतरण : अर्थ और स्वरूप

रूपांतरण शब्द रूप+अंतरण के योग से बना है। इस शब्द का प्रयोग कई विषयों या विधाओं या माध्यमों के संदर्भ में होता है। वनस्पतिशास्त्र में किसी अलग स्थिति या वातावरण में पेड़-पौधों का विकास करना रूपांतरण है। समाजशास्त्र में विद्यमान सांस्कृतिक परिवेश के अनुरूप व्यवहार में क्रमिक परिवर्तन लाना भी रूपांतरण है।

आजकल इसका अधिकतर प्रयोग सर्जनात्मक संदर्भ के रूप में हो रहा है। उपन्यास, कहानी, नाटक विधा में अथवा नाटक विधा को कहानी या उपन्यास में परिवर्तित या रूपांतरित किया जाता है। इसके अतिरिक्त, साहित्यिक विधाओं के कथ्य या कथावस्तु को फिल्म, थिएटर, वीडियो, धारावाहिक (सीरियल) आदि माध्यमों की संरचना रूप और प्रकार्य के अनुरूप ढाला जाता है जो उस कथावस्तु को एक नया रूप प्रदान करता है। यह अंग्रेजी शब्द adaptation का हिंदी पर्याय है जिसे कुछ विद्वान अनुकूलन, रूपांतर, समायोजन आदि भी कहते हैं।

अनुवाद में अनुसृजन (Transcreation) और रूपांतरण (adaptation) दो आयाम हैं। इन दोनों आयामों में बहुत ही सूक्ष्म अंतर है। अनुवाद के इन दोनों रूपों में समानता यह है कि ये दोनों ही लक्ष्य संस्कृति के दिए गए संदर्भ में मूलपाठ या स्रोतभाषा पाठ की पुनर्रचना या पुनर्गठन करते हैं। पुनर्गठन की प्रक्रिया के बिंदु के निष्कर्ष स्वरूप हम इन दोनों के मध्य एक और समानता देख सकते हैं कि अनुसृजन एवं रूपांतरण की प्रकृति को समझने और व्याख्या करने में लक्ष्य संस्कृति की प्रकृति और स्वरूप निर्णायक है। अनुसृजन और रूपांतरण दोनों के संदर्भ में प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि यह पाठ के संदर्भ से अधिक संस्कृति-सापेक्ष होती है, जिसे दिए गए ऐतिहासिक संदर्भ के अनुसार पुनर्सृजित और रूपांतरित किया जाता है। इन समानताओं के बावजूद अनुसृजन और रूपांतरण अनेक प्रकार से भिन्न है। यह अंतर सामान्यतः स्रोतभाषा पाठ से लक्ष्यभाषा पाठ में परिवर्तन के अंश और प्रकृति पर आधारित होता है। उदाहरण के लिए, 19वीं तथा प्रारंभिक 20वीं शताब्दी में अंग्रेजी नाटकों, विशेषकर शेक्सपीयर के नाटकों का भारतीय मंचन के लिए रूपांतरण किया गया। इन नाटकों को दर्शकों के समक्ष, शेक्सपीयर के नाटकों के रूप में ही प्रस्तुत किया गया, किंतु मंच पर जो सामाजिक या सांस्कृतिक वातावरण प्रस्तुत किया गया वह भारतीय था। दूसरे शब्दों में कहें तो पात्रों का स्थानीयकरण कर दिया गया। इसके अतिरिक्त रूपांतरण सिनेमा के लिए साहित्यिक पाठ के प्रयोग में सामान्यतः उपयोग किया जाने वाला साधन है। यहाँ रूपांतरण एक माध्यम से दूसरे माध्यम अर्थात् साहित्यिक से सिनेमा में है। इस प्रक्रिया में 'वर्णन की प्रकृति' (The nature of description) में परिवर्तन किए जाते हैं।

पिछली इकाई में आप जान चुके हैं कि रूपांतरण की अपेक्षा अनुसृजन की प्रक्रिया में स्रोतभाषा पाठ में परिवर्तन की मात्रा अधिक होती है। ऐसे भी उदाहरण सामने आते हैं कि जब दिए गए पाठ पर सिनेमा बनाने के दौरान दोनों के बीच का संबंध ढीला पड़ गया। दूसरे शब्दों में कहें तो पाठ एक विचार के व्यापक दिशा निर्देशक के रूप में विद्यमान होता है तथा सिनेमा में यह विचार पूर्णतः एक नए रूप और विषयवस्तु में ढाला जाता है। यद्यपि ऐसे संदर्भ भी हैं जहाँ अनुसृजन और रूपांतरण के बीच का अंतर बहुत कम रह गया। उदाहरण के लिए, दक्षिण एशिया में महाकाव्य संस्कृति के विस्तार में प्रायः ऐसा देखा जा सकता है। जैसे कि रामकथा परंपरा में रामायण का मूल ढाँचा तो वही रहता है किंतु विवरण चाहे चरित्र-चित्रण का हो, कहानी की स्थानीयता, भाषा, वेशभूषा हो या व्यवस्थापन प्रारूप तथा कहानी के अन्य विवरण का हो; ये एक रामायण से दूसरी रामायण में विशेष रूप से भिन्न होते जाते हैं। दूसरे शब्दों में कहानी लक्ष्य संस्कृति में अनुकूलित की जाती है, और साथ ही साथ रूपांतरण की प्रक्रिया में पुनसृजन भी किया जाता है।

पिछली चर्चा में हमने रूपांतरण और अनुसृजन में मूल समानताओं और भिन्नताओं को पहचानने की कोशिश की है। इस तुलना से हमने जाना कि रूपांतरण क्या है। अब रूपांतरण के साथ सूक्ष्म भिन्नता लिए हम अनुकूलन की प्रक्रिया में शामिल चरणों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। विभिन्न प्रकार के अनुकूलनों में विभिन्न चरण होते हैं। रूपांतरण का प्रथम चरण है रूपांतरित किए जाने वाले पाठ का चयन। **पाठ का चयन** पाठ की प्रकृति और रूपांतरण के उद्देश्य पर आधारित होता है। यहाँ पाठ की प्रकृति और पाठ का उद्देश्य दोनों अंतर्संबंधित हैं। पाठ की प्रकृति तथा पाठ के चयन के पीछे उद्देश्य का होना आवश्यक है। रूपांतरण का उद्देश्य ही स्रोतभाषा पाठ को लक्ष्यभाषा की संस्कृति से जोड़ना है। लक्ष्यभाषा संस्कृति में रूपांतरण की आवश्यकता या भूमिका उपर्युक्त बिंदु से निर्धारित होती है। **दूसरे चरण** में स्रोतभाषा पाठ में किए जाने वाले परिवर्तनों की प्रकृति के साथ अनुकूलन के उद्देश्य भी शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक साहित्यिक पाठ का पटकथा में रूपांतरण किया जाता है तो, साहित्यिक पाठ और सिनेमा की विशिष्टताएँ पहचानी जाएँगी और एक प्रकार की विशिष्टताओं का दूसरे प्रकार की विशिष्टताओं में रूपांतरण किया जाएगा। इस संबंध में अवधि का प्रश्न निर्णायक है क्योंकि उपन्यास के विपरीत फिल्म का एक निश्चित समय (सामान्यतः 30 मिनट से ढाई घंटे होता है) जिसके दौरान वर्णन पूरा

करना होता है। **तीसरे चरण** में रूपांतरण का मूल्यांकन किया जाता है। इस चरण में यह अध्ययन किया जाता है कि किए गए परिवर्तनों ने स्रोतभाषा पाठ के अर्थ को प्रभावित किया है या नहीं और तत्पश्चात् निर्णय लिए जाते हैं। मूल्यांकन के आधार पर अंतिम उत्पाद स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है। व्यापक रूप से सभी प्रकार के अनुकूलनों में इन तीन चरणों का अनुसरण किया जाता है। जैसा कि हमने पहले भी चर्चा की थी कि ये बारीकियाँ विशिष्ट रूपांतरणों के अनुसार भिन्न होती हैं।

10.3 पाठपरक प्रस्तुति

पिछले भाग में आपने यह जान ही लिया होगा कि रूपांतरण क्या है और सामान्यतः रूपांतरण की प्रक्रिया में कौन-कौन से चरण होते हैं। इस भाग में हम रूपांतरण के ही एक प्रकार, पाठपरक प्रस्तुति की विस्तार से चर्चा करेंगे। जब साहित्यिक पाठों का उद्देश्य केवल पढ़ा जाना ही नहीं अपितु दर्शकों के सम्मुख मंचित या अभिनीत किया जाना हो तो उन्हें **पाठपरक प्रस्तुति** कहा जा सकता है। पाठपरक प्रस्तुति का क्षेत्र बहुत व्यापक है। भारत में सामान्यतः पाए जाने वाले और अभिनीत किए जाने वाले पाठपरक अभिनय के प्रकारों में से एक ऐतिहासिक महाकाव्यों की परंपरा भी रही है। रामायण, महाभारत और श्रीमद्भगवदगीता तीन ऐसे ग्रंथ हैं जो केवल पढ़े ही नहीं जाते अपितु अभिनीत भी किए जाते हैं। संपूर्ण दक्षिण एशिया में महाकाव्यों के इन पाठपरक अभिनयों में यद्यपि कथा का व्यापक ढाँचा वही समान रहता है किंतु चरित्र-चित्रण, भाषा, स्थानीयता का वर्णन, संगीत की प्रकृति और प्रयोग अथवा सामाजिक व्यवस्था के आधार पर ये एक दूसरे से पूर्णतः भिन्न होते हैं। जैसा कि हमने प्रस्तावना में ही संकेत किया था भारत में ऐतिहासिक रूप से पाठपरक अभिनयों ने लक्ष्य संस्कृति और समाज के दिए हुए संदर्भ में कथाओं को रूपांतरित और पुनर्सृजित किया। स्रोतभाषा में किए गए परिवर्तनों के कुछ माध्यमों को आगे बताया गया है।

'साबिन आलुन' की कार्बी रामायण (असम के कार्बी समुदाय की तुकबंद रामायण) में रामायण का स्थानीयकरण छोटी पहाड़ियों के अनुरूप है क्योंकि कर्बी समुदाय के लोग ब्रह्मपुत्र नदी के दक्षिण में कार्बी पहाड़ियों के निवासी रहे हैं। इस रामायण में लोगों के आर्थिक जीवन का मुख्य आधार झूम कृषि या सीढ़ीदार खेती है। सीता झूम खेती में कुशल थी। ये सब बाल्मीकि रामायण की तुलना में भिन्न है जो उस क्षेत्र की अधिकतर रामायण कथाओं का मूल आदर्श है जो मैदानी और स्थानाधारित कृषि पर आधारित है। सामाजिक-आर्थिक संदर्भ के अतिरिक्त भी कहानी में अन्य कई रूपांतरण हैं। उदाहरण के लिए विश्वकर्मा के निर्देश पर देवी लक्ष्मी मोर के अंडे का रूप लेती है और गड़रियों को मैदान में मिलती है। वे उस अंडे को पुजारी हेम्फू के पास ले जाते हैं (वाल्मीकि रामायण के राजा जनक) जो उसे एक टोकरी में रख देता है। एक दिन वह अंडा फूटता है तथा टोकरी में सीता पाई जाती है। विवरण में और भी कई अंतर है। रावण के बारह सिर है (रावण के प्रायः दस सिर माने जाते हैं)। राम, लक्ष्मण और सीता का निर्वासन स्थानीय लोक नारायण नामक पहाड़ी पर होता है। हनुमान कई अवसरों पर दोनों भाइयों की जान बचाते हैं और वह भी राम को हथियार लाकर देते हैं जिससे रावण को मारा जा सकता है और राम उसी हथियार से रावण को मारते हैं। यहाँ हमने रूपांतरण के कुछ विवरणों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। यही स्थिति हिन्दी में तुलसीकृत 'रामचरितमानस', तमिल में 'कंब रामायण', बंगला में 'कृतिवास रामायण' और तेलुगु में 'रंगनाथ रामायण' में भी देखी जा सकती है।

इन उदाहरणों के आधार पर आप रूपांतरण की प्रक्रिया में स्रोतभाषा पाठ में किए गए उन परिवर्तनों की सूची बना सकते हैं ताकि इन्हें चर्चा में लाया जा सके। जब हम परिवर्तनों को पहचानने का प्रयास करते हैं तो हमें कुछ बिंदुओं को अव य ध्यान में रखना चाहिए। सबसे पहले जिस स्रोतभाषा पाठ की हम बात कर रहे हैं वह कोई ऐसा पाठ नहीं है जैसाकि हम सामान्यतः समझते हैं। यह एक मान्य पुस्तक या पांडुलिपि है। यहाँ स्रोतभाषा पाठ रामायण एक परंपरा है। अनुवाद के इतिहास एवं परंपराओं पर आधारित अपने पाठों में इस संबंध में हम पहले ही भारतीय महाकाव्यों का उदाहरण देख चुके हैं। इस प्रकार परिवर्तन के साथ किया गया रूपांतरण एक परंपरा है। इसका अर्थ यह हुआ कि परंपराएँ रूपांतरित की जा सकती हैं अथवा प्रदत्त लक्ष्य संस्कृति में ऐतिहासिक रूप से रूपांतरित की गई है। दूसरा, स्रोतभाषा पाठ की विषयवस्तु या विवरण में परिवर्तन करके रूपांतरण किया जाता है। इस परिवर्तन का उद्देश्य पाठ को कार्बी समुदाय के लिए स्थानीय बनाना है, किंतु विवरण में परिवर्तन के

परिणामस्वरूप राम या सीता जैसे चरित्रों की प्रकृति भी रूपांतरित हो जाती है। यहाँ रूपातंरण यह है कि ये चरित्र अब अपने स्रोतभाषा पाठ की प्रकृति से बहुत कम मेल खाते हैं। क्या इसका अर्थ यह है कि ये पूर्णतः भिन्न या नए चरित्र हैं? ये चरित्र नए चरित्र नहीं हैं क्योंकि ये स्रोत पाठ से ही व्युत्पन्न हुए हैं और अपने नामों द्वारा स्रोतभाषा पाठ से संबंध रखते हैं। ये रूपांतरित चरित्र कहे जाते हैं। रूपांतरण का किसी न किसी प्रकार में स्रोत (पाठ) से संबंध सदा रहता है चाहे वह अप्रत्यक्ष ही क्यों न हो। तीसरा, यहाँ माध्यम का भी रूपांतरण है। असम की घाटियों एवं पहाड़ियों में रामायण परंपरा का मूल आधार लिखित वाल्मीकि रामायण है। माधव कंदली या दुर्गावर रामायण जैसी असम की कुछ और रामायण परंपराएँ भी लिखित ग्रंथ या पांडुलिपियाँ हैं। किंतु कार्बी रामायण एक मौखिक रामायण है जो गायन पद्धति के द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही है। इसे 20वीं शताब्दी में ही लिखित रामायण का रूप दिया गया। किंतु यहाँ प्रश्न उठता है कि रामायण को मौखिक माध्यम में क्यों रूपांतरित किया गया। इसका उत्तर है कि कार्बी लोग अधिकतर इतिहास को मौखिक भाषा रूपों में संप्रेषित करते रहे हैं। अधिकतर आरंभिक समाजों की तरह ही ज्ञान की संचयन पद्धति और संप्रेषण के मौखिक रूप को विकसित किया गया और प्रयोग में लाया गया, अर्थात् व्यवस्थित तौर पर मौखिक रूप में परंपराओं एवं रीतिरिवाजों को संरक्षित किया गया। इस प्रकार कार्बी रामायण मौखिक माध्यम में रूपांतरित होने के बावजूद आधुनिक काल में एक व्यवस्थित रूप में आ पहुँची।

आपने अवश्य ही ध्यान दिया होगा कि हम पाठपरक रूपांतरण के इस खंड में एक मौखिक रामायण कार्बी रामायण की चर्चा कर रहे हैं। क्या आप इस भाग में इसे सम्मिलित करने के कुछ कारणों को बता सकते है? तथ्य यह है कि पाठपरक रूपांतरण एक पाठ है जो केवल पढ़ा ही नहीं जाता अपितु अभिनीत भी किया जाता है। अब तक आप समझ चुके होंगे कि पाठपरक रूपांतरण एक आधुनिक उपन्यास या 'किताब' से बहुत भिन्न है जो अधिकतर लोगों के पढ़ने के लिए बाजार में प्रकाशित एवं उपलब्ध कराया जाता है। पूर्व आधुनिक दक्षिण एशिया में पाठपरक रूपांतरण संप्रेषण का एक महत्वपूर्ण रूप था। उस समय जब साहित्य और शिक्षा कुछ वर्गों में परिरक्षित थी तब पाठपरक अनुपालन बड़े जनसमुदाय के बीच साहित्य को संप्रेषित करने और यहाँ तक कि संदेश संप्रेषण का भी महत्वपूर्ण माध्यम था, किंतु पाठपरक अनुपालन में यह आवश्यक नहीं कि पाठ केवल लिखित रूप में ही अर्थात् पांडुलिपि हो। सरल शब्दों में कहें तो किसी भी विचार, सूचना या ज्ञान के एक विशिष्टसमूह में गठन का सिद्धांत वणर्नात्मक संरचना के साथ-साथ स्मृति तथा अंतरण के विशिष्ट नियमों पर आधारित था। यदि कार्बी रामायण की बात दोबारा करें तो वाल्मीकि रामायण के लिखित रूप में पाठ होने के अपने विशिष्ट नियम की तरह ही कार्बी रामायण की वर्णनात्मक संरचना के भी विशिष्ट नियम थे जो पाठ का मौखिक रूप था। इस प्रकार वाल्मीकि रामायण का कार्बी रामायण में रूपांतरण विषयवस्तु और विवरण के साथ-साथ वर्णन के नियमों एवं लिखित रूप से मौखिक का भी परिवर्तन था।

कार्बी रामायण के उदाहरण की चर्चा के सारांश में हम पाते हैं कि पाठपरक अनुपालन में केवल विषयवस्तु का ही नहीं अपितु माध्यम का भी रूपांतरण होता है। साथ ही हमने यह भी देखा कि रूपांतरण के परिणामस्वरूप केवल अर्थ का ही परिवर्तन नहीं होता अपितु माध्यम में परिवर्तन के कारण वर्णनात्मक संरचना का भी परिवर्तन हो जाता है। भारत के अन्य क्षेत्रों में भी रामायण के अनेक संस्करण जैसे कि रामायण, मैथिल रामायण आदि प्राप्त होते हैं तथा लगभग सभी में इस प्रकार के प्रयोग दिखाई देते हैं।

10.4 पाठ से पाठ रूपांतरण

पिछले भाग में हमने रूपांतरण और पाठपरक प्रस्तुति पर चर्चा की थी। क्या अब आप पाठपरक प्रस्तुति और पाठ में अंतर बता सकते हैं जो हमने पिछली चर्चाओं में रेखांकित किए थे? इस भाग में हम एक पाठ से दूसरे पाठ में रूपांतरण पर चर्चा करेंगे। यहाँ पाठ से तात्पर्य लिखित विवरणों तथा पुस्तकों से हैं। अपनी चर्चा के इस भाग में हम एक पाठ से दूसरे पाठ में रूपांतरण के दौरान प्रयोग में लाई जाने वाली कुछ तकनीकों पर विचार करेंगे।

पाठ से पाठ रूपांतरण भी दो प्रकार का होता है-(क) स्रोतभाषा के पाठ का अंतरविधात्मक रूपांतरण, (ख) स्रोतभाषा के पाठ का लक्ष्यभाषा में रूपांतरण। स्रोतभाषा के अंतरविधात्मक रूप से अभिप्राय एक विधा से दूसरी विधा में रूपांतरण, उदाहरण के लिए; किसी उपन्यास अथवा कहानी का रूपांतरण नाटक में या पद्य का गद्य में

अथवा गद्य का पद्य में। पद्य से गद्य रूपांतरण के दौरान वर्णनात्मक, संरचना में किए गए आवश्यक परिवर्तन के जो आयाम हमने यहाँ देखे वह चार्ल्स लैंब और मैरी लैंब कृत शैक्सपीयर के नाटकों (Tales of Shakespear, 1807) के गद्य अनुवाद में भी देखा जा सकता है। 'टेल्स ऑफ शेक्सपीयर' बच्चों के लिए लिखी गई थी। इस संबंध में हम दो बातों को ध्यान में रख सकते हैं। अंग्रेजी में निबंध की शैली को उत्तम बनाने का श्रेय चार्ल्स लैंब (मैरी लैम्ब उसकी बहन थी) को दिया जाता है। निबंध शैली की बढ़ती हुई लोकप्रियता, 19वीं शताब्दी के यूरोप में गद्य साहित्य की बढ़ती हुई लोकप्रियता से घनिष्ठ रूप से संबंधित थी। किंतु चार्ल्स लैम्ब ने यह भी तर्क दिया कि शेक्सपीयर को और भी अच्छी तरह समझना है तो इनके नाटकों की प्रस्तुति को देखने के बजाय पढ़ा जाए। केवल पढ़े जाने पर ही उसकी बारीकियों को समझा जा सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यदि 19वीं शताब्दी में शेक्सपीयर के नाटकों के संबंध में वर्णनात्मक संरचना और वर्णन की तकनीक का जो रूपांतरण हो रहा था उसका बृहत्तर कारण - किताबों के लिए बाजार का अस्तित्व में आना, गद्य लेखन का बढ़ता हुआ महत्व और गद्य में नाटकों को पढ़ने के लिए इच्छुक पाठ समुदाय की मौजूदगी जैसे ऐतिहासिक परिवर्तन थे। स्रोतभाषा के पाठ का लक्ष्यभाषा में रूपांतरण में भारतीय महाकाव्य रामायण का उदाहरण लेंगे। सी. राजगोपालाचारी द्वारा लिखित ग्रंथ आधुनिक काल में रामायण के सबसे प्रसिद्ध रूपांतरणों में से एक रहा है। उनके द्वारा लिखित रामायण अंग्रेजी में रामायण का एक संक्षिप्त संस्करण है जिसका बाद में कई अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ। यह सबसे पहले वर्ष 1957 में प्रकाशित हुआ था। राजगोपालाचारी की रामायण केवल एक संक्षिप्त अनुवाद ही नहीं अपितु दो तरीकों से रूपांतरण भी था। पहला 19वीं शताब्दी से प्रकाशित होने वाली कई अन्य रामायणों की तरह ही यह पांडुलिपि से एक पुस्तक के रूप में रूपांतरित हो चुकी थी। यह पाठ निर्माण के आधार पर रूपांतरण था। दूसरा, यद्यपि रामायण के कई अन्य संक्षिप्तानुवाद मौजूद थे; जैसे-रमेश चंद्र दत्त का अनुवाद (1899) पुस्तक रूप में होने के बावजूद पद्य रूप में था, तथापि राजगोपालाचारी की रामायण गद्य में थी। दूसरे शब्दों में कहें तो रामायण का वर्णन करने के लिए प्रयुक्त वर्णनात्मक संरचना का रूपांतरण हुआ। राजगोपालाचारी की रामायण को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करने का तात्पर्य यह है कि पाठ से पाठ रूपांतरण में केवल विषयवस्तु का ही अंतरण होना आवश्यक नहीं है। यह समान रूप से वर्णन की तकनीकों तथा वर्णनात्मक संरचना के साथ-साथ पाठों के उत्पादन की तकनीकों के बारे में भी है।

यहाँ यह याद रखना आवश्यक है कि पाठपरक प्रस्तुति के (उदाहरण के लिए कार्बी रामायण) साथ ही साथ पाठ से पाठ रूपांतरण जैसे दोनों ही रूपों में केवल अंतर्वस्तु का ही परिवर्तन नहीं होता। यह वर्णन की तकनीक और जिस वर्णनात्मक संरचना में यह रूपांतरित किया गया है उसका भी रूपांतरण हो सकता है। इसके अतिरिक्त एक प्रदत्त ऐतिहासिक संदर्भ में वर्णन की तकनीक तथा वर्णनात्मक संरचना का चुनाव उस समाज में प्रचलित विचारधारा पर निर्भर करता है जो रूपांतरण की और भी तकनीकें हो सकती हैं, जिस पर हम अगले भागों में चर्चा करेंगे।

10.5 पाठ से मंच रूपांतरण

अब हम पाठ से मंच रूपांतरण के कुछ महत्वपूर्ण लक्षणों पर चर्चा करेंगे, किंतु इस चर्चा को शुरू करने से पहले हम इस संबंध में पाठ क्या है और 'रंगमंच' क्या है अतः आवश्यक है कि हम इसकी व्यापक रूपरेखा प्रस्तुत करें। पाठ से मंच रूपांतरणों की किसी भी व्यापक रूपरेखा में रूपांतरण के दो रूप रखे जा सकते हैं - यह लिखित या मौखिक साहित्यिक विवरण का मंच प्रस्तुति के माध्यम में रूपांतरण हो सकता है। और यह पहले से विद्यमान नाटक का (अर्थात् जो मूलतः मंच प्रस्तुति के लिए लिखे गए वर्णन हैं) एक भिन्न सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भ में तथा एक भिन्न अर्थ के साथ नाटक रूप में ही रूपांतरण हो सकता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि दोनों ही मामलों में 'पाठ' का अर्थ भिन्न होता है। प्रथम उदाहरण में पाठ मूलतः मंच प्रस्तुति के लिए नहीं है। किंतु द्वितीय उदाहरण में यह मंच प्रस्तुति के लिए निर्मित पहले से मौजूद पाठ का एक भिन्न रूप में किया गया रूपांतरण है, जिसका मंचन भी किया गया। यदि एक लघुकथा का एक नाटक में रूपांतरण और मंच प्रस्तुति होती है तो इसे प्रथम संदर्भ के रूप में लिया जा सकता है। जयशंकर प्रसाद के नाटक 'चंद्रगुप्त' का मंचन दूसरे संदर्भ का

रूपांतरण है। इसी प्रकार 19वीं तथा 20वीं शताब्दियों में भिन्न अर्थों और अंतर्वस्तु के साथ शेक्सपीयर के नाटकों का विभिन्न भारतीय भाषाओं में रूपांतरण और मंचन दूसरे संदर्भ के उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है।

प्रथम संदर्भ के उदाहरण में अर्थात् एक साहित्यिक वर्णन का नाटक और मंच रूपांतरण में साहित्यिक और मंच प्रस्तुति जैसे दो भिन्न माध्यम मौजूद हैं। इस प्रकार के रूपांतरण में व्यापक रूप से स्वीकार्य दो नियमों का सहारा लिया जाता है (क) पाठ विस्तार बनाम पटकथा विस्तार और (ख) वर्णन से रंगमंच निर्देशन। क्या आप बता सकते हैं कि पाठ विस्तार या पटकथा विस्तार और वर्णन से रंगमंच निर्देशन का क्या अर्थ है? कोई भी साहित्यिक कृति कई पृष्ठों की होती है। उदाहरण के लिए, एक उपन्यास 200 पृष्ठों का हो सकता है। यह उस उपन्यास का पाठ विस्तार होगा। किंतु जब एक उपन्यास का मंचन किया जाता है तब पटकथा 200 पृष्ठों की नहीं हो सकती है। इसलिए उस नाटक की पटकथा मंच के लिए उपयुक्त समय विस्तार पर आधारित होती है। सामान्यतः एक पटकथा की लंबाई लगभग 20-25 पृष्ठों की होती है। लंबाई के अतिरिक्त कहानी के वर्णन का प्रश्न भी उठता है। पाठ अर्थात् उपन्यास के वर्णन में साहित्य के उपकरण, साहित्यिक विधाएँ, लेखन के साधन और समकालीन प्रक्रियाओं का प्रयोग किया जाता है। किंतु नाटक के वर्णन में मंच के उपकरण जैसे कि परिधान एवं रूप-सज्जा (मेकअप), प्रकाश, मंच, विशेष प्रभावों के लिए ध्वनिक और तकनीकी सहायताएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार रूपांतरण के भाग के रूप में वर्णन की शैली और तकनीक दोनों मूलभूत रूपांतरण से गुजरते हैं। अब हमारे पास कहानी को कहने या वर्णन करने वाले वाचक का प्रश्न है। पाठ में लेखक वाचक होता है जो कहानी का वर्णन अन्य पुरुष या प्रथम पुरुष के रूप में करता है। जब लेखक अपनी स्वयं की कथा न कहकर किसी अन्य व्यक्ति की कथा का वर्णन करता है तब उसे अन्य पुरुष वर्णन कहा जाता है। इस प्रकार जब लेखक अपनी स्वयं की कथा का वर्णन करता है तब उसे प्रथम पुरुष वर्णन कहा जाता है। परंतु रंगमंच नाटक में वाचक तीन वर्गों में विभाजित हो जाता है अर्थात् रंगमंच निर्दे ाक, नाटककार और वाचक जो वर्णन के लिए रंगमंच पर उपस्थित रहता है (इसे भारतीय नाट्यशास्त्र में सूत्रधार भी कहा जाता है)। एक साहित्यिक पाठ में निर्देशक और नाटककार में अंतर नहीं होता। कई बार सूत्रधार का चयन पाठ से रंगमंच रूपांतरण में एक और आयाम अर्थात् चरित्र-चित्रण का रूप ले लेता है। यहाँ पर दो प्रश्न उठते हैं कि क्या एक सूत्रधार वाचक या पात्र है और एक निर्देशक या नाटककार नाटक में चरित्र-चित्रण पर वैसा ही अधिकार रखता है जैसा कि साहित्यिक पाठ उपन्यास में एक लेखक रखता है। सूत्रधार वाचक के साथ-साथ पात्र भी हो सकता है। एक निर्देशक पटकथा के चरित्र-चित्रण का अनुसरण कर सकता है या इसकी पुर्नव्याख्या कर सकता है किंतु यह सब पटकथा के बृहत्तर ढाँचे में ही संभव है और अभिनेता निर्देशक द्वारा उपलब्ध कराए गए विवरणों का अनुसरण कर सकता है या स्वयं ही इसमें महत्व जोड़ सकता है पर केवल नाटक के संपूर्ण ढाँचे में ही यह किया जा सकता है। ये भिन्नताएँ अभिनय या निर्देशन के विभिन्न सिद्धांतों पर आधारित है। यद्यपि यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि किसी भी पाठ के रंगमंच नाटक के रूपांतरण में कई ऐसे तात्विक अंतर हैं जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। ये सभी तत्व पाठ से मंचन में अर्थ परिवर्तन नहीं करते हैं। एक भिन्न माध्यम के द्वारा पाठ के अर्थ के संप्रेषण के लिए इन तत्वों की आवश्यकता होती है।

अब हम एक उदाहरण के माध्यम से उपरोक्त मुद्दों को और अधिक सुस्पष्ट करने का प्रयास करेंगे। हिंदी नाट्यकला में सामान्यतः यह माना जाता है कि देवेन्द्र राज अंकुर ने पाठ से रंगमंच रूपांतरणों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उदाहरण के लिए, पाठ की लंबाई को पटकथा की लंबाई में रूपांतरित करना रूपांतरण का एक व्यापक अनुसरित नियम है। एक लेखक या वाचक एक कथा या उपन्यास को 100 पृष्ठों से अधिक में वर्णित कर सकता है, किंतु एक पटकथा इतनी विस्तृत नहीं हो सकती। देवेन्द्र नाथ अंकुर ने एक ऐसी तकनीक का प्रयोग किया है जिसमें मंचन के दौरान भी एक कहानी रहती है और यह कहानी मंच पर वाचकों द्वारा वर्णित की जाती है इसलिए 100 पृष्ठों की कहानी भी पैंतालीस मिनट में मौखिक रूप से वर्णित की जा सकती है, किंतु वाचक रंगमंच पर केवल वाचक नहीं होते हैं, विभिन्न अभिनेता भी कथा के वाचक की भूमिका निभाते हैं। किसी भी कथा में विभिन्न पात्र होते हैं। जब एक दृश्य प्रस्तुत किया जाता है तो उनमें से एक अभिनेता दृश्य को वर्णन करने की भूमिका अदा करता है, जबकि संवाद की भूमिका या अभिनय अन्य अभिनेताओं द्वारा किया जाता है। इस प्रकार ये वाचक वर्णनकर्त्ता की भूमिका अदा करते हैं जो एक साहित्यिक पाठ में लेखक निभाता है। जहाँ तक कथा की

प्रस्तुति का संबंध है, मंच के विभिन्न तत्वों; जैसे परिधान और मेकअप, विशेष मंच के विशेष प्रभाव, प्रकाश, ध्वनियाँ, वाइस ऑवर, और मंच सज्जा या रूपरेखा को कहानी के भौतिक और शारीरिक आयामों की कल्पना के लिए प्रयोग किया जाता है। एक कथा या उपन्यास में दृश्य समाप्ति नहीं होती। इसी प्रकार के रूपांतरणों में मंच पर सदा एक वाचक मौजूद रहता है, इसलिए दृश्य समाप्ति की स्थिति से पार पाया जा सकता है जिसका नाटकों में अक्सर अनुसरण किया जाता है। परिणामस्वरूप मंच पूरे समय प्रकाि ात रह सकता है और अभिनेता वाचक द्वारा **माध्यित** कथा का अभिनय कर सकता है।

अब तक आपने देखा कि रंगमंच के लिए एक साहित्यिक पाठ का कैसे रूपांतरण होता है और इस प्रकार के रूपांतरण में किस प्रकार की प्रविधि मौजूद होती है। इसी प्रविधि के कारण श्रीलाल शुक्ल के उपन्यास 'राग दरबारी' का रंगमंच की दृष्टि से जो रूपांतरण हुआ, उसे संगीत और अभिनय से उसे उत्कृष्ट बना दिया। इसी का बाद में सफल टी.वी. सीरियल भी बना। 'रंगनाथ की वापसी' के नाम से अब हम यह बताएंगे कि किस प्रकार एक नाटक का लक्षित समाज और संस्कृति के संदर्भ के आधार पर रूपांतरण किया जाता है। भारत में इसका सबसे अच्छा उदाहरण शेक्सपीयर के नाटक हैं, जिनका 19वीं और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में विभिन्न रंगमंच समुदायों द्वारा भारतीयकरण और संपूर्ण देश में मंचन किया गया। क्या आप बता सकते हैं कि शेक्सपीयर के नाटक क्यों लोकप्रिय हुए? शेक्सपीयर अपने नाटकों की महानता के साथ-साथ भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के बनने और उसके परिणामस्वरूप ब्रिटिश सांस्कृतिक रूपों के विस्तार के कारण लोकप्रिय हुए। किंतु जब उनके नाटकों का भारत में मंचन किया गया तब उन नाटकों का स्थानीय स्थिति के अनुसार रूपांतरण किया गया। 'भ्रांतिविलास' नाम से दि 'कॉमेडी ऑफ ऐररस' (1869) का विद्यासागर का (बांग्ला) अनुवाद शेक्सपीयर के नाटकों के भारतीयकरण की प्रक्रिया का एक अच्छा उदाहरण हो सकता है। उन्होंने इसे भारतीय दर्शकों हेतु उपयुक्त बनाने के लिए नाटक के शीर्षक, स्थानों के नामों, जैसे विदेशी तत्वों को बहुत ही सावधानी से हटाया और पश्चिमी रीति-रिवाजों को भारतीय रीतिरिवाजों के साथ बदल दिया। उदाहरण के लिए, ''दि केपन बर्नस : दि पिग फॉल्स दि स्पिट'' (1.2.44) प्रसंग को हटा लिया गया, क्योंकि यह हिंदू और मुस्लिम दोनों की भावनाओं के लिए आपत्तिजनक था। ''मीट इज कोल्ड'' को आहार सामग्री (भोजन) में परिवर्तित कर दिया गया, क्योंकि इसका शब्दानुवाद भिन्न अर्थ की ओर इंगित कर सकता था। 'टेमिंग ऑफ शियु' के तमिल अनुवाद में चुंबन और विलासिता के कुछ दृश्य हटाकर उनकी जगह स्थानीय तौर पर खेले जाने वाले कुम्मी व कोलाट्टम जैसे कुछेक घरेलू खेल रख दिए गए।

इन दृष्टांतों को एक उदाहरण के तौर लिया जा सकता है कि कैसे भिन्न लक्षित सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में रूपांतरित करने पर नाटकों की अंतर्वस्तु को बदला जा सकता है। अब इस पाठ से मंच रूपांतरण के प्रकारों तथा पूर्व में चर्चित प्रकारों में क्या कोई अंतर है? यहाँ जो हमने प्रयास किया है वह पहले की तुलना में माध्यमों के रूपांतरण (साहित्यिक से मंच), वर्णन की पद्धति (लेखन से मंचन) और वर्णनात्मक संरचना में था। रूपांतरण की प्रक्रिया में उसका अर्थ आवश्यक रूप से नहीं बदला था, किंतु दूसरे वाले रूपांतरण में वर्णन की पद्धति का उतना परिवर्तन नहीं था जितना उसकी अंतर्वस्तु अर्थात् नाटक के अर्थ का था। परिणामस्वरूप, शेक्सपीयर का मूल अंग्रेजी नाटक एक 'पाठ' बन गया जो भारतीय संदर्भ में रूपांतरित एवं मंचित किया गया।

हम एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जो इस संबंध में माध्यम और संस्कृति के दोनों ही स्तरों पर रूपांतरण है। पीटर ब्रुक द्वारा फ्रांसीसी मंच एवं पर्दे पर महाभारत का रूपांतरण इसका एक सजीव स्पष्टीकरण है। मंच रूपांतरण के लिए पटकथा का लेखन (साथ ही साथ फिल्म के लिए भी) जीन क्लाउड कैरियर ने किया था। रूपांतरणों के निर्माण पर अपनी पुस्तक 'इन सर्च ऑफ दि महाभारत : नोट्स ऑफ ट्रैवल्स इन इंडिया विद पीटर ब्रुक 1982-1983' में कैरियर करते हैं कि वृहत् महाभारत काव्य को फ्रांसीसी दर्शकों के लिए छः घंटे समयावधि की एक पटकथा में कैसे रूपांतरित किया गया। इस महाकाव्य को तीन भागों में बाँटा गया। पहले भाग में जुए का खेल (एक घंटे चलने वाला दृश्य) और साथ में जन्म, बाल्यावस्था, प्रतियोगिता, विवाह आदि को प्रदर्शित किया गया। दूसरे भाग में (पांडवों का) वनवास, वन से वापसी, युद्ध की निश्चितता जानते हुए भी कृष्ण द्वारा इसे रोकने का प्रयास और अन्य समानांतर कथाएँ थी। तीन घंटे की समयावधि का तीसरा भाग युद्ध पर केंद्रित था। विभिन्न शिविरों और युद्ध और स्वर्ग के बीच की गतिविधियों की प्रस्तुति से यह भाग बहुत ही कठिन था। चूँकि धर्म इस

महाकाव्य के केंद्र में है इसलिए इस छः घंटे के नाटक में फ्रेंच दर्शकों को इसका अर्थ समझाने के लिए एक अतिरिक्त दृश्य का निर्माण करना पड़ा। रूपांतरण का एक और उदाहरण वह दृश्य है जिसमें झील का यक्ष पांडव बंधु युधिष्ठिर से धर्म पर प्रश्न करता है। स्वयं कैरियर के शब्दों में "मुझे उस काव्य से अलग प्रश्नों की आवश्यकता थी। मैंने प्लुटार्च को बार-बार पढ़ा, खासतौर पर उस भाग को जिसमें अलेक्जेंडर के जीवन का उल्लेख है, जहाँ वह नवविजय के पश्चात् यूनानी दार्शनिकों से घिरा होता है और उसी समय एक भारतीय साधु उससे मिलने आता है तथा साधु एवं युनानी दार्शनिकों के बीच वाद-विवाद होता है।" (कैरियर : 1.5) यहाँ यह भी ध्यान देने की आवश्यकता है कि इस महाकाव्य के चरित्र पूर विश्व से चुने गए थे; जैसे; द्रोपदी भारतीय थी और भीम अफ्रीकी था। इसके पीछे विचार यह था कि प्रत्येक चरित्र स्वयं में एक मूलभूत और सार्वभौमिक विशेषता रखता हो तथा इस नाटक के सार्वभौमिक तत्व को ग्रहण करने के लिए कलाकारों का इसके अनुरूप ही चयन करना आवश्यक था। इस प्रकार पीटर ब्रुक के महाभारत को आज मंच और स्क्रीन रूपांतरण जैसे दोनों क्षेत्रों में क्लासिक माना जाता है। यह मात्र माध्यमों अर्थात् पाठ से मंच का रूपांतरण नहीं था अपितु यह संस्कृति का, भारतीय से फ्रेंच-वैश्विक संदर्भ में भी रूपांतरण था। पीटर ब्रुक के महाभारत को हम अगले भाग पाठ में स्क्रीन रूपांतरण की चर्चा में भी देख सकते हैं।

10.6 पाठ का स्क्रीन या फिल्म रूपांतरण

पाठ से मंच रूपांतरण, खासतौर पर इन रूपांतरणों के क्रियान्वयन के विस्तृत अध्ययन के पहचान आप पहले ही यह बता पाने की स्थिति में होंगे कि पाठ से पर्दे अर्थात् सिनेमा रूपांतरण के लिए कौन से संभव माध्यम हो सकते हैं। किंतु कैमरा एक ऐसा उपकरण है जो मंच और स्क्रीन रूपांतरणों में एक बहुत बड़ा अंतर ला देता है। कैमरे के पश्चात् सिनेमा के उत्पादन केंद्र अर्थात् फिल्म स्टूडियो आता है। अपनी चर्चा के दौरान हम पाएँगे कि रंगमंच का स्टूडियो फिल्म स्टूडियो से बिल्कुल भिन्न होता है।

यदि आपने किसी डिजिटल कैमरे का प्रयोग किया हो, जिससे वीडियो एवं स्थिर दोनों प्रकार के चित्र खींचे जा सकते हों अथवा यदि आपने केवल चित्र खींचने वाले कैमरे का ही प्रयोग किया हो तो भी आपने अवश्य देखा होगा कि कैमरे के द्वारा विभिन्न कोणों से चित्र खींचना, चित्र का आकार बदलना, अर्थात् छोटा या बड़ा करना, प्रकाश के स्तर को नियंत्रित करना संभव है (इस प्रकार की सुविधा अधिकतर डिजिटल कैमरों में उपलब्ध होती है।) और विशेषतर यदि वीडियो शूट हो तो एक निर्धारित समय तक ही बनाया जा सकता है जिसकी अवधि कुछ सेकेंड से लेकर कुछ मिनट तक होती है। इस तरह की सुविधा वर्तमान में कैमरे वाले मोबाइल फोन में भी उपलब्ध है। रंगमंच और प्रदर्शन दोनों पटकथा के द्वारा कार्य करते हैं। यह साहित्यिक पाठ से भिन्न होता है जो केवल वर्णन के साथ कार्य करता है। वह पटकथा जिस पर अंततः फिल्म फिल्माई जाती है उसे स्क्रीनप्ले कहा जाता है। किंतु एक स्क्रीनप्ले नाटक की पटकथा से भिन्न होता है। क्या आप इसका कारण बता सकते हैं? ऐसा इसलिए है कि स्क्रीनप्ले कैमरे की भूमिका पर आधारित होता है। इस बिंदु के सरल प्रतिपादन हेतु हम मोनटेज़ का संपादन क्लोज़-अप और लॉग शॉट इन तीनों को तकनीक के रूप में समझते हैं। कोई भी कैमरा वीडियो फुटेज को निगेटिव या डिजिटल मेमोरी में आलेखित करता है। यह प्रयोग किए जा रहे कैमरे के प्रकार और क्षमता पर निर्भर करता है।

कोई भी फिल्म, चाहे वृत्तचित्र हो या फीचर फिल्म, स्क्रीनप्ले के अनुरूप प्रथम से अंतिम दृश्य तक क्रमवार रूप से नहीं फिल्माई जाती है। फिल्म के विभिन्न दृश्य समय की उपलब्धता, वित्त की सुसाध्यता एवं संपूर्ण फिल्म कलाकारों और कर्मीदल इत्यादि की सुविधा के आधार पर फिल्माए जाते हैं। एक बार संपूर्ण फिल्म को फिल्माने के पश्चात् निर्देशक या संपादक द्वारा मोनटेज की तकनीक से दृश्य को क्रमवार रूप में रखा जाता है। मोनटेज की प्रक्रिया के दौरान स्क्रीनप्ले में निर्धारित अनुक्रम को बदला भी जा सकता है। फिल्माए गए दृश्यों में से जो दृश्य पूरी फिल्म के अनुरूप महत्वपूर्ण नहीं पाए जाते उन्हें हटा दिया जाता है। मोनटेज के अलावा हमने क्लोजअप और लाँग शॉट का भी उल्लेख किया था। नजदीक से फिल्माए गए दृश्य को लाँग शॉट कहते हैं। दृश्य को फिल्माने का कोण (ऐंगल) कैमरे की क्षमता तथा संचालन के उपकरण पर निर्भर करता है। इस तरह के संचालन उपकरणों के महत्व का उदाहरण देने के लिए हम डॉली शॉट और ट्रैकिंग शॉट का उल्लेख कर सकते हैं। कैमरे को जब डॉली (या ट्राली) पर संचालित किया जाता है तो वह डॉली शॉट कहलाता है और जब कोई दृश्य स्थिर या

चलायमान अवस्था में फिल्माया जाता है तब उसे ट्रैकिंग शॉट कहते हैं। इस तरह की तकनीकों को प्रयोग में लाने का उद्देश्य बृहत्तर दृश्य प्रभाव उत्पन्न करना है जो कैमरे के संचालन उपकरणों द्वारा संभव बनाया गया है। अल्फ्रेंड हिचकॉक (अंग्रेजी भाषा सिनेमा) एवं विजय आनंद (हिंदी भाषा सिनेमा) जैसे फिल्म निर्माताओं ने लॉग ट्रैकिंग शॉट का बड़े पैमाने पर प्रयोग किया है। नाट्य कला में ये सुविधाएँ उपलब्ध नहीं है क्योंकि नाट्य कला वर्तमान समय में अभिनय पर आधारित होती है। आई-लाइन शॉट फिल्म निर्माण की एक अन्य तकनीक है। यह एक काल्पनिक कोण है जो दर्शकों के समक्ष स्क्रीन पर वास्तविकता को देखने का भ्रम उत्पन्न करता है। दर्शक यह नहीं समझ पाता कि वह उस कोण के कारण भ्रम को वास्तविकता के रूप में केवल अनुभव कर रहा है। आजकल ये सभी तकनीकें फिल्म निर्माण के बुनियादी सिद्धांत बन गए हैं। इनमें से अधिकतर 1930 से 1940 ई. के दौरान परिष्कृत की गई।

आपको पहले ही यह ज्ञात हो चुका होगा कि स्क्रीनप्ले अैर सिनेमा के रूप में जो उभरा है वह मंच की पटकथा से महत्वपूर्ण रूप से अलग है जो इसके विपरीत साहित्यिक वृत्तांतों से भिन्न है। जब एक साहित्यिक पाठ/वृत्तांत को स्क्रीनप्ले के रूप में रूपांतरित किया जाता है तो जहाँ तक फिल्म वृत्तांत के विकास की तकनीकों का प्रश्न है वह पाठ महत्वपूर्ण बदलाव अनुभव करता है। यह परिवर्तन आवश्यक है ताकि साहित्यिक माध्यम के पाठ का अर्थ सिनेमा के माध्यम द्वारा संप्रेषित किया जा सके। पाठ को स्क्रीनप्ले बनाने में कई महत्वपूर्ण बदलाव होते हैं। सर्वप्रथम पाठ का विस्तार स्क्रीनप्ले में परिवर्तित हो जाता है। इस कारण लगभग 300 पृष्ठों के उपन्यास को 120 से कुछ अधिक पृष्ठों में रूपांतरित करना पड़ता है ताकि उससे लगभग दो घंटों की फिल्म बनाई जा सके। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए स्क्रीनप्ले लेखक को उपन्यास को समझना होगा और पाठ के मुख्य मुद्दों की रूपरेखा बनानी होगी। उसके बाद स्क्रीनप्ले लेखक को यह जोड़ना होगा कि दृश्य और संवाद के प्रभाव को बढ़ाने के लिए पटकथा के किन भागों में नेपथ्य संगीत होगा। हमें यहाँ यह भी ध्यान रखना होगा कि 1950 और 1960 के दौरान न्यू वेव सिनेमा ने नेपथ्य संगीत का कम प्रयोग करते हुए फिल्म के प्रभावों को बढ़ाने के लिए अदृश्य कथावाचक के स्वर को लोकप्रिय बनाया। इसका उद्देश्य यह था कि दर्शकों को फिल्म देखने में वास्तविकता न प्रतीत होकर पर्दे पर वास्तविकता का वर्णन प्रतीत होता हो। इस संबंध में उन्होंने आई-लाइन शॉट से मुक्त होने का भी प्रयास किया। चूँकि पाठ के सुदीर्घ वृत्तांत को पटकथा के रूप में ढालना पड़ता था। अतः एक दृश्य में विचार को संप्रेषित करने के लिए अन्य तकनीकों को सम्मिलित करना पड़ता था। इसी कारण क्लोज-अप और लॉग शॉट जैसी तकनीकें और डॉली जैसे उपकरण अत्यंत सुविधाजनक रूप में प्रस्तुत हुए। नेपथ्य संगीत व वॉइस ओवर वर्णन से इसकी पूर्ति की गई तब से साहित्यिक पाठ में नित्य परिस्थिति की व्याख्या फिल्म रूप में परिवर्तित हो गई है। इस प्रकार के रूपांतरणों के कुछ उत्कृष्ट उदाहरण जिनमें कैमरे की भूमिका, मोनटेज, संवाद संगीत की भूमिका और सिनेमा के माध्यम के अन्य तत्व जो पाठ से स्क्रीन रूपांतरण में महत्वपूर्ण रूप से पाए जाते हैं जो डेविड लीन की उत्कृष्ट फिल्में जैसे 1965 की डॉ. जीवागो बोरिसपस्तरनेक के इसी नाम के उपन्यास पर आधारित और 1984 की 'ए पैसेज ऑफ इंडिया' (इसी नाम से ई. एम. फोस्टर के उपन्यास पर आधारित) और सत्यजीत रे द्वारा 1955 की 'पाथेर पंचाली' अर्थात् 'छोटी सड़क का गीत' इसी नाम से विभूति भूषण के उपन्यास पर आधारित हैं।

यहाँ अनूदित पाठ का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है कि किस प्रकार पर्दे के लिए पाठ का रूपांतरण होता है। यह उदाहरण असमिया नाटक 'सीमांतर प्रहरी' (सीमा का जवान) से लिया गया है जो मशहूर संगीतज्ञ और रंगमंच कलाकार विष्णु प्रसाद राभा द्वारा लिया गया है। विष्णु प्रसाद राभा ने स्वयं इसका पटकथा में भी रूपांतरण किया है।

(1) नाटक के प्रारंभिक दृश्य से उद्धरण

''असम का एक सीमांत क्षेत्र। ब्रिटिश काल में यह बालीपारा सीमांत क्षेत्र था। वर्तमान में यह नेफा का एक भाग कोमेंग सीमांत क्षेत्र है। पर्वत श्रेणी की ऊँची चोटियाँ, उच्च शृंखला और तीव्र पर्वतीय नदी का खूबसूरत किनारा, देवदार के पेड़ों और बुरांश (रोडोडेंड्रम) की सघनता से भरा क्षेत्र हिमाच्छादित चट्टानें। यह सौंदर्य स्वर्ग जैसा प्रतीत होता है।

नीचे की छावनी लोकरा सीमा पर तैनात सैनिकों की है -

प्रातःकाल
बैरक
सभी सैनिक दैनंदिन कार्यों में व्यस्त हैं
एक आवास। यह मोहेन्द्र सूबेदार का आवास है।'' (राभा 434)

(2) नीचे हम स्वयं राभा द्वारा स्क्रीनप्ले रूप में प्रस्तुत उसी प्रारंभिक दृश्य का उदाहरण प्रस्तुत करेंगे

लॉग-पैन शॉट : पैन : असम का एक सीमांत क्षेत्र। ब्रिटिश काल में यह बालीपारा सीमांत क्षेत्र था, वर्तमान में यह नेफा का एक भाग कामेंग सीमा है। पर्वतश्रेणी की ऊँची चोटियों, उच्छृंखल और तीव्र पर्वतीय नदी का खूबसूरत किनारा सघन बड़े देवदार की पेड़ों और रोडोडेंड्रम् के स्वर्ग जैसा प्रतीत होता है।

मिडशॉट : चोटी पर सैनिक पहरे पर तैनात है। अगला दृश्य बिग क्लोज अप : पहरे पर तैनात सैनिक पूरी वर्दी में, हाथ में बंदूक लिए विश्राम की मुद्रा में तैनात हैं। उनके पैरों के मध्य खाली जगह से ऊपर का नजारा पैन शॉट द्वारा दिखाया जाता। दिखता है।

लैप डिज़ाल्व : पहाड़ी दृश्य में समा जाती है।

लॉग शॉट - इनर लाइन : पर्वतीय शृंखलाएँ।

पैन : टिल्ट डाउन लॉग शॉट : परेड का मैदान और परेड करते सैनिक (सावधान की ध्वनि)।

कट :

मिड शॉट : रंगरूटों का प्रशिक्षण, सिपाहियों की परेड, बंदूक प्रशिक्षण में सैनिक।

क्लोज मिड शॉट : चौकसी संतरी ग त लगा रहा है।

लॉग पैन शॉट : अधिकारी निवास क्षेत्र

क्लोज मिड शॉट : फूलों के बगीचे के बीच एक अधिकारी का आवास। आवास के बरामदे से एक कुत्ता भौंकता है। (भौंकने की ध्वनि)''

अब तक हमने चर्चा की, कि पाठ से पर्दे पर रूपांतरण में क्या-क्या तकनीकें शामिल है। इसी संदर्भ में प्रेमचंद की 'सद्गति' और 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानियों का फिल्मांकन करते हुए सत्यजीत राय ने स्क्रनप्ले के अनुसार जो पद्धति और तकनीक प्रयुक्त की, इससे फिल्म में जीवंतता और रोचकता आ गई इसी प्रकार भीष्म साहनी के 'तमस' उपन्यास में भारत विभाजन के जो चित्र फिल्माए गए वे सजीव और मार्मिक चित्र बन गए। फणी वरनाथ रेणु की 'मारे गए गुलफाम' पर बनी 'तीसरी कसम' फिल्म को संवाद, संगीत, सिनेमा शिल्प, राजकपूर के अभिनय ने उत्कृष्ट और जीवंत बना दिया। इसके अतिरिक्त पर्दे पर जो रूपांतरण होता है वह भी पाठ से मंच रूपांतरण की तरह अंतर-सांस्कृतिक हो सकता है। (पूर्व खंडों में प्रयुक्त शेक्सपीयर के उदाहरण की तरह)। उदाहरण स्वरूप, प्रसिद्ध जापानी फिल्म निर्माता अकीरा कुरोसावा की क्लासिकल फिल्म 'कुमोनोसू-जॉ' या 'थ्रोन ऑफ ब्लड' 1957 शेक्सपीयर के नाटक 'मैकबेथ' पर आधारित है, जबकि उनकी 'डॉनजोको' या 'द लोअर डेप्थस' (1957) मैक्सिम गोर्की के समान शीर्षक वाले नाटक 'लोअर डेप्थस' पर आधारित है। शेक्सपीयर का मैकबेथ 17वीं शताब्दी के सामंती यूरोप पर आधारित है। और गोर्की का 'लोअर डेप्थ्स' 20वीं शताब्दी में रूस में व्याप्त गरीबी और सामाजिक गंदगी पर आधारित है। किंतु कुरोसावा ने दोनों फिल्मों को जापान के तोकुगावा (17वीं से 19वीं शताब्दी) के संदर्भ में फिल्माया। दूसरे शब्दों में, उसका रूपांतरण माध्यम (साहित्य से सिनेमा) और अंतर्वस्तु दोनों में हुआ। कुरोसावा ने कैसे दूसरा रूपांतरण किया? यद्यपि कुरोसावा ने कथानक और संदेश दो प्रतिष्ठित यूरोपियन नाटकों से लिए और उससे जापानी फिल्में बनाई 'थ्रोन ऑफ ब्लड' के संदर्भ में कथानक तोकूगावा जापान से लिया गया। अतः सेट, वेष-भूषा संवाद और पात्रों की नैतिकता को निर्देशित करने वाली मान्यताएँ और संगीत तोकूगावा काल पर आधारित था। फिल्म के पात्रों में समुराई नैतिकताएँ प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं। दूसरे शब्दों में, फिल्म मात्र जापानी अभिनेताओं के होने के कारण ही जापानी नहीं थी। बल्कि, फिल्म का संदर्भ संपूर्णतः तोकूगावा काल में ऐतिहासिक वैशिष्ट्य पर आधारित था। उसी तरह 'द लोअर डेप्थस' भी रूस में अनुभूत गरीबी और गंदगी

की जगह जापान की पारिस्थितिक अनुभव के आधार पर बनाई गई हे। इसके अनुरूप ही फिल्म के सेट, परिधान, संवाद, घटनास्थल और दूसरे तत्त्व जो अभिनेताओं के साथ जोड़े गए वे जापानी थे। इस प्रकार अंतिम परिणाम एक जापानी फिल्म के रूप में सामने आया। कुरोसावा की प्रारंभिक क्लासिकल फिल्मों में एकर 1954 की 'सेवन समुराई' है। हमारे लिए महत्वपूर्ण यह है कि इसने मुख्य रूप से हॉलीवुड शैली माने जाने वाले 'पश्चिमी' सिनेमा को बहुत अधिक प्रभावित किया। इस फिल्म का प्रभाव विषयवस्तु के अतिरिक्त, स्क्रीनप्ले, फिल्म-संपादन, कैमरा-संचालन या सिनेमा-शिल्प की दूसरी तकनीकों जैसे क्षेत्रों पर पड़ा। सिनेमा जगत में इस प्रकार के प्रभाव भी रूपांतरण विषयवस्तु के रूपांतरण नहीं है, अपितु पूर्णतः भिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ में फिल्म बनाने की तकनीकों के रूपांतरण हैं।

अब हम रूपांतरण के आयामों पर विचार करेंगे। आज विश्व भर में टेजीविजन, विशेषकर बच्चों पर केंद्रित चैनल ऐनिमेटिड कार्टूनों से भरे पड़े हैं। यहाँ तक कि भारत में भी खासकर पिछले दो दशकों में टेलीविजन चैनलों में ऐनिमेटेड कार्टूनों की बाढ़ सी आ गई है। यदि ध्यान से देखें तो, हम पाएँगे कि यह यूरोप और अमेरिका की कॉमिक परंपराओं से लिए गए ऐनिमेटेड कार्टून नहीं है, बल्कि ये भारतीय परंपराओं से लिए गए हैं। यह भी कहा जा सकता है कि इस तरह के कई एनिमेशन वास्तव में रामायण और महाभारत जैसे दो भारतीय महाकाव्यों, पंचतंत्र एवं अन्य भारतीय कथा परंपराओं से लिए गए है।

एनिमेशन गतिमान चित्रों या तीव्र गति से चालित चित्रों का रूप है तथा यह गति या चाल दृष्टि के स्थायित्व सिद्धांत के कारण बिंबों को वास्तविक समय में क्रिया का भ्रम प्रदान करती है। इसलिए दर्शकों को परदे पर चित्रों का यह संग्रह न प्रतीत होकर चित्रों के माध्यम से निष्पादित क्रिया के रूप में प्रतीत होता है। इस रूप में वीडियो कैमरे के सिद्धांत के समान ही कार्य होता है। 19वीं शताब्दी में एनिमेशन की पारंपरिक तकनीक व्यवहार में लाई जाती थी, जिसमें सर्वप्रथम दिए गए पाठ (कार्टून या कहानी आदि) के आधार पर गत्ते पर द्विआयामिक (2डी) रेखाचित्र फिल्माए जाते थे। फिल्मांकन की इस तकनीक को 'स्टॉमोशन' कहा जाता था। जब फिल्माए गए चित्रों को संपादित कर एक साथ रखा जाता है, तब वे वास्तविक समय में गति का आभास उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार की तकनीक की मुख्य समस्याओं में से एक यह थी कि कई बार/अक्सर स्क्रीन पर पात्र बहुआयामिक प्रतीत नहीं होते थे, अर्थात् वे अवास्तविक ही लगते थे। वे बिना आवाज के निर्जीव से दिखाई पड़ते थे। दूसरी कठिनाई यह थी कि कई बार परदे पर चित्रों का संचालन निर्बाध प्रतीत नहीं होता था। ऐसा इसलिए था क्योंकि गति का आभास स्थिर वस्तुओं पर प्रयुक्त फिल्मांकन और संपादकीय प्रक्रियाओं पर क्रियान्वित कर उत्पन्न किया जाता था। इस सीमाओं के बावजूद डिज़्नी जैसी एनिमेशन संस्थाओं ने खासकर कार्टून एनिमेशन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। एनिमेशन की किसी भी प्रकार की चर्चा डिजिटल टेक्नोलॉजी के बिना संभव नहीं है। इसने मात्र बच्चों के लिए ही पाठों का विशेषकर कार्टून का एनिमेशन नहीं किया; बल्कि विश्वभर के सभी उम्र के दर्शकों के लिए पाठों का एनिमेशन किया। मुख्यरूप हॉलीवुड से प्रभावित स्पाइडरमैन सीरीज, द ऐक्समैन सीरीज, द ट्विलाइट सीरीज, लार्ड ऑफ द रिंग सीरीज तथा अत्यंत प्रसिद्ध ब्रिटिश प्रोडक्शन हैरी पॉटर सीरीज जैसी फिल्में इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं। ये अत्यधिक सफल फिल्में कार्टूनों के एनिमेशन नहीं है। उदाहरण के लिए, द हैरी पॉटर सीरीज जे. के. रॉलिंग द्वारा रचित इसी नाम के काल्पनिक उपन्यास शृंखला पर आधारित है। इनमें एनिमेशन अलौकिक यथार्थवाद प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिस पर ये फिल्में आधारित हैं। इस तरह की फिल्में डिजिटल टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में उन्नति होने और सिनेमा में इसके अनुप्रयोग के कारण संभव हो सकीं। इस तकनीक की लोकप्रियता इस बात से देखी जा सकती है कि 'डिस्कवरी' जैसे ज्ञान पर आधारित लोकप्रिय चैनल फिल्म निर्माण में डिजिटल तकनीक के प्रयोग पर विशेष कार्यक्रम लाते हैं।

10.7 अनुवाद और रूपांतरण में अंतर और संबंध

अनुवाद और रूपांतरण में संरचना और प्रकार्य की दृष्टि से कुछ-न-कुछ अंतर है। कुछ विद्वान रूपांतरण को अनुवाद की श्रेणी में रखते हैं, किंतु सभी रूपांतरण अनुवाद नहीं होते। अर्थ, शैली, संदेश, संदर्भ आदि की दृष्टि से अनुवाद स्रोतभाषा के पूरे कथ्य को अपने भीतर निष्ठापूर्वक समेटे होता है। अनुवाद में स्रोतभाषा के कथ्य में परिवर्तन करने की स्वतंत्रता नहीं होती। यह बात अलग है कि यह पाठक या श्रोता-विशेष को ध्यान में रखकर स्रोतभाषा के पाठ को लक्ष्यभाषा में ईमानदारी से संजोता है।

रूपांतरण स्रोतभाषा के पाठ के विचार या भाव को ग्रहण करता है और पूर्णतया नए ढंग से उसका पुनर्लेखन करता है। इसमें पाठ को नए ढाँचे में ढाला जाता है ताकि वह नए पाठक या श्रोता के भाषिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण के अनुकूल हो और साथ ही उसे आकृष्ट कर सके। वस्तुतः रूपांतरण साहित्यिक और साहित्येतर सामग्री के लिए अधिक होता है और उसे अन्य माध्यम से विशेष अर्थ देकर प्रस्तुत किया जाता है ताकि किसी विशेष संदेश अथवा भाव का संप्रेषण अच्छी प्रकार से किया जा सके।

स्रोतभाषा के पाठ का रूपांतरण कितना आवश्यक है, इस बात का निर्णय लेने से पहले रूपांतरण प्रयोजन, प्रयोग और प्रयोक्ता को ध्यान में रखता है और फिर उस पाठ का चयन करता है। इसमें प्रयोक्ता की संस्कृति और समाज को दृष्टि में रखा जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि साहित्यिक विधाओं के रूपांतरण की विशिष्ट भूमिका होती है। साहित्यिक रचनाओं के, विशेषकर कविता के अनुवादपरक रूपांतरण अधिक होते हैं और अनुवाद कम। वास्तव में अन्य संस्कृति के पाठक के लिए वही भाव या विचार लक्ष्यभाषा में अधिकतर संभव नहीं हो पाते जो स्रोतभाषा के पाठ में निहित रहते हैं। काव्य, साहित्य आदि में जो भाव होते हैं वे अधिकांशतः व्यक्तिपरक और समाजपरक होते हैं। उनकी अपनी संस्कृति होती है, अपने परंपराएँ और विश्वास होते हैं, अपने छंद और अलंकार होते हैं। इसलिए एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति में ढालना कठिन और दुष्कर होता है।

अनुवाद में स्थानीकरण की समस्या भी उत्पन्न होती है। यदि अनुवाद में स्रोतभाषा का स्थानीकरण नहीं होता है तो रूपांतरण नहीं होगा, क्योंकि लक्ष्यभाषा में वही कथ्य और संदेश उसी प्रकार से व्यक्त होगा जो स्रोतभाषा में अंतर्निहित है। अतः स्रोतभाषा के पाठ को लक्ष्यभाषा की संरचना, व्याकरण और सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ के अनुसार अनुवाद करना अनुवाद नहीं होगा, वरन् वह रूपांतरण के क्षेत्र में आ जाएगा। अनुवाद उस परिप्रेक्ष्य में किया जाए जो लक्ष्यभाषा में सहज, स्वाभाविक और उपयुक्त होने के साथ लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुकूल हो। रूपांतरण में स्रोतभाषा के पाठ का मूलभाव या मूल तत्व तो होगा ही, लेकिन वह लक्ष्यभाषा में परिवर्तित रूप में अन्य प्रकार से होगा। इस प्रकार रूपांतरण एक प्रकार से अनुसृजन और छायानुवाद है, जिसमें सर्जनात्मकता के साथ-साथ लक्ष्यभाषा का स्थानीकरण भी हो होगा। (छायानुवाद के बारे में पिछले पाठ में चर्चा हो चुकी है।) उदाहरण के लिए, शेक्सपीर का Merchant of Venice एक गीति नाट्य है, किंतु भारतेंदु हरिचंद्र द्वारा अनूदित 'वंशपुर का महाजन' हिन्दी भाषी के लिए एक रूपांतरण है जिसे एक नए रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

स्रोतभाषा के पाठ का लक्ष्यभाषा में रूपांतरण दो प्रकार से होता है-(क) पाठपरक और (ख) श्रव्य-दृश्यपरक।

(क) पाठपरक रूपांतरण स्रोतभाषा के पाठ का लक्ष्यभाषा के पाठ में रूपांतरण है। इसमें रूपांतरण स्रोतभाषा के पाठ को पहले पढ़ता है। फिर उस पाठ का निर्वचन या व्याख्या वह अपनी दृष्टि से करता है ताकि वह पाठ लक्ष्यभाषा के पाठक के प्रति आत्मपरक हो सके। उसके लिए व्यक्तिपरक अनुभूति की अवधारणा की निर्मिति होती है। पाठ का बोधन होने के बाद वह कथावस्तु अथवा कथ्य के मुख्य पात्र को अपने मस्तिष्क में रूपाकार करता है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि अनुवाद की अपेक्षा रूपांतरण अधिक जटिल और श्रमसाध्य है, क्योंकि इसमें सर्जनात्मकता और रोचकता लाने के लिए रूपांतरकार को कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। लक्ष्यभाषा की प्रकृति के अनुसार उसे थोड़ा-बहुत विचलन भी करना पड़ सकता है। वास्तव में इसमें एक प्रकार का पुनर्लेखन करना पड़ता है और उसे पुनः आकार देने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, एनातोले फ्रेंस की Thais रचना के आधार पर प्रेमचंद द्वारा 'अहंकार' रचना की एक प्रकार का रूपांतरण है। जार्ज इलियट का Silas Marner की हिंदी में अनूदित कृति 'सुखदास' को भी रूपांतरण की श्रेणी में रखा जा सकता है।

(ख) श्रव्य-दृश्यपरक रूपांतरण से अभिप्राय स्रोतभाषा के पाठ के लक्ष्यभाषा में टेलीविजन, स्क्रीन अथवा फिल्म माध्यम के रूपांतरण से है। फिल्म या स्क्रीन में किसी कहानी या उपन्यास का रूपांतरण मूर्तिकला की तरह है जिसमें रूपांतरकार मूल कथा में परिवर्तन और संषोधन करता हुआ उसमें अधिक सर्जनात्मकता लाता है। यह एक ऐसी संगतराशी है जिसमें अधिक रोचकता और आकर्षण निहित रहता है। इसकी अपनी तकनीक और प्रविधि है जिसमें कैमरे की भूमिका, संवाद-योजना, संगीत और नेपथ्य संगीत, प्रकाश-योजना वीडियों

फुटेज, फिल्म संपादन आदि उसे प्रभावकारी बना देते हैं। रोमन याकोब्सन द्वारा प्रतिपादित अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद का यह एक रूप है जिसमें पाठ का रूपांतरण भाषिक प्रतीकों से भाषेतर प्रतीकों में होता है। इसमें पाठ पटकथा बन जाता है और जब यह पटकथा फिल्म के रूप में आती है तो वह स्क्रीनप्ले कही जाती है। वास्तव में कहानी या उपन्यास की कथावस्तुत का फिल्म में आकर्षण के केंद्र बन सके इसलिए इसमें फिल्म की लंबाई को भी ध्यान में रखना होता है। मुख्य पात्र को पहचान देनी पड़ती है ताकि पटकथा मुख्य पात्र के आसपास घूमती रहे। इस प्रकार लिखित कृति को नए रूप में ढाला (recast) जाता है। हम इस प्रकार की कई फिल्मों और टी.वी. सीरियलों को देख सकते हैं जो लिखित पाठ की संरचना से काफी अलग जा पड़ती हैं। उदाहरण के लिए A Flight of Pigeons रचना की हिन्दी फिल्म 'जुनून (1978) एक रूपांतरण ही है जिसमें 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की कथा को बड़े आकर्षक ढंग से फिल्माया गया है। इसी प्रकार The Blue Umbrella उपन्यास का हिन्दी में 'नीली छतरी' (2005) के नाम से जो फिल्मीकरण किया गया, वह भी एक रूपांतरण है।Sussana's Seven husbands उपन्यास की फिल्म 'सात खून माफ' (2011) प्रदर्शित हुई है। अंग्रेजी साहित्यकार जोसेफ रूडयार्ड क्पिलिंग के प्रसिद्ध बालकृति The Jungle Book है जिसका फिल्मों में किशोरों के लिए रूपांतरण और संक्षिप्तीकरण किया गया। इसका हिन्दी टी.वी. सीरियल 'मौगली' (1994 और 1998) के नाम से प्रदर्शित हुआ। मौगली जंगल में भेड़ियों के बीच पला-पोसा मानव शावक है जो जंगल में पशुओं के बीच अपनी अलग पहचान बनाए हुए हैं। The White Seal नामक अंग्रेजी कहानी का सजीव रूपांतरण (1967) सोवियत संघ में किया गया था। इसमें जानवरों के शब्दों और नामों का उच्चारण रूसी ध्वनियों के अनुसार हुआ है। हम सब को यह भी ज्ञात है कि रामानंद सागर द्वारा निर्देशित 'रामायण' टी.वी. सीरियल काफी लोकप्रिय रहा है। हिन्दी का यह टी.वी. सीरियल संस्कृत भाषा में बाल्मीकी कृत 'रामायण', हिन्दी भाषा में तुलसी कृत 'रामचरित मानस', तमिल में 'कंब रामायण', बंगला में 'कृतिवास रामायण', तेलुगु में 'रंगनाथ रामायण' आदि महाकाव्यों पर आधारित है जिसके दृश्य, संवाद आदि बहुत ही व्यवस्थित, सुनियोजित, आकर्षक और रोचक हैं।

इस प्रकार रूपांतरण अनवुाद का एक महत्वपूर्ण आयाम होते हुए भी अपनी अलग सत्ता रखता है। इसमें अनुवाद का तो योगदान होता है, साथ ही सर्जनात्मकता, फिल्म तकनीक के अनुकूल अपेक्षित परिवर्तन, संगीत, यथावश्यक कल्पना शक्ति, रोचकता आदि अनेक आयामों का भी महत्व रहता है। यदि हम अनुवाद को पुनर्रचना अथवा पुनर्सृजन कहे तो रूपांतरण उसका सुंदर और आकर्षक आयाम हैं। व्यापक संदर्भ में रूपांतरण को अगर अनुवाद का एक प्रकार माना जाए तो इसमें अनुसृजन, छायानुवाद, अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद आदि अन्य प्रकारों का भी योगदान रहता है।

10.8 सारांश

इस इकाई में हमने विभिन्न प्रकार के रूपांतरणों के बीच अंतर करने का प्रयास किया जो दिए हुए पाठ से किए जा सकते हैं। हमने यह भी सूचीबद्ध करने का प्रयास किया कि तकनीक और अंतर्वस्तु दोनों पाठ रूपांतरण के किसी भी अध्ययन के आवश्यक घटक हैं। जिस माध्यम में एक पाठ का रूपांतरण किया जाता है उसकी अपनी विशिष्ट तकनीक होती है। इसलिए पाठपरक प्रस्तुति, पाठ से पाठ, पाठ से मंच, पाठ से स्क्रीन या फिल्म और अनुवाद तथा रूपांतरण का संबंध आदि सभी रूपांतरण की विभिन्न तकनीकों पर आधारित है। इस इकाई में हमने देखा कि अंतर्वस्तु का रूपांतरण सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरों और लक्ष्य संस्कृति में स्रोत पाठ के अनुरूप किए गए सामंजस्य के परिणामस्वरूप होता है, किंतु हमने यह भी देखा कि तकनीक अंतर्वस्तु रूपांतरणों को भी संभव बनाने में एक सहायक भूमिका निभाती है। अतः व्यापक संदर्भ में रूपांतरण अनुवाद का ऐसा प्रकार है जो अनुसृजन, अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद तथा छायानुवाद को किसी न किसी सीमा तक अपने भीतर समेटे हुए हैं।

10.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. रूपांतरण की संकल्पना को स्पष्ट करते हुए रूपांतरण और अनुसृजन में अंतर बताइए।
2. पाठपरक अनुपालनों में रूपांतरण के तीन लक्षण बताइए।

3. किसी भी एक पाठ का पाठ से पाठ रूपांतरण में होने वाले किन्हीं दो परिवर्तनों को रेखांकित कीजिए।
4. पाठ से मंच रूपांतरण के कम से कम तीन महत्वपूर्ण लक्षण बताइए।
5. दो ऐसे क्षेत्रों का उल्लेख करें जिनमें कैमरे की भूमिका पाठ से स्क्रीन रूपांतरण में महत्वपूर्ण होती है।
6. कंप्यूटर, पाठ से एनिमेशन रूपांतरण में किस प्रकार सहायता करता है?
7. अनुवाद और रूपांतरण में अंतर बताते हुए उसके संबंधों पर भी चर्चा कीजिए।

10.10 शब्दावली

रूपांतरण, स्थानीकरण, छायानुवाद, अंतरप्रतीकात्मक अनुवाद, विचलन, पुनर्लेखन, स्क्रीन, स्क्रीनप्ले, डिजिटल मेमोरी, लाँग-शॉट, वीडिया, फुटेज, निगेटिव, क्लोज-अप, एनिमेशन।

10.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- पाला रिचमैन (संपादित), मैनी रामायणाज़ : द डायवर्सिटी ऑफ नैरेटिव ट्रेडिशन इन साउथ एशिया, 1991, कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी प्रेस।
- दास, एस. के., 1991, अ हिस्ट्री ऑफ इंडियन लिटरेचर 1800-1900, नई दिल्ली, साहित्य अकादमी।
- कैरियर, जीन क्लाउड, 2001, इन सर्च ऑफ द महाभारत : नोट्स ऑफ ट्रेवेल्स इन इण्डिया विद पिटर ब्रुक 1982-85, मैकमिलन।
- लिन्डा, सेगर, 1992, द आर्ट ऑफ एडेप्टे ान : टर्निंग फैक्ट् एण्ड फिक्शन इनटू फिल्म, आउल बुक्स।
- फेबर एंड हेलेन वातटर्स, 2004, एनिमेशन अनलिमिटेड : इनोवेटिव शॉर्ट फिल्मय सिन्स 1940, हारपर कॉलिन्स पब्लिशर्स।
- रवींद्रनाथ श्रीवास्तव और कृष्णकुमार गोस्वामी (संपा.), 1995, अनुवाद सिद्धांत और समस्याएँ, दिल्ली, आलेख प्रकाशन।

इकाई-11 डबिंग और सबटाइटलिंग की प्रक्रिया और अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 डबिंग (पश्च-ध्वन्यंकरण)

- 11.2.1 डबिंग का अर्थ और स्वरूप
- 11.2.2 डबिंग का ऐतिहासिक संदर्भ
- 11.2.3 डबिंग और वायस-ओवर (voice-over) में अंतर
- 11.2.4 डबिंग की सीमाएं
- 11.2.5 डबिंग में अनुवाद की भूमिका

11.3 सबटाइटलिंग (उपशीर्षीकरण)

- 11.3.1 सबटाइटलिंग का अर्थ और स्वरूप
- 11.3.2 सबटाइटलिंग के प्रकार
- 11.3.3 सबटाइटलिंग का ऐतिहासिक संदर्भ
- 11.3.4 सबटाइटलिंग की सीमाएं
- 11.3.5 डबिंग और सबटाइटलिंग में अंतर
- 11.3.6 सबटाइटलिंग में अनुवाद की भूमिका

11.4 सारांश

11.5 शब्दावली

11.6 अभ्यास के लिए प्रश्न

11.7 संदर्भ-सूची

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- डबिंग की अवधारणा को समझ सकेंगे;
- डबिंग और वाइस-ओवर में अंतर कर सकेंगे;
- डबिंग में अनुवाद की भूमिका के बारे में समझ सकेंगे;
- सबटाइटलिंग की अवधारणा से अवगत हो सकेंगे;
- डबिंग और सबटाइटलिंग में अंतर कर सकेंगे; तथा
- सबटाइटलिंग के साथ अनुवाद का संबंध बता सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

आज जन संचार और अनुवाद के क्षेत्र में डबिंग (dubbing) तथा सबटाइटलिंग (subtitling) का महत्व बढ़ गया है। विदेशी भाषाओं में ही नहीं, भारत में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में भी इसकी भूमिका को बहुत उपयोगी माना जा रहा है। डबिंग के लिए हिन्दी में 'पश्च ध्वन्यंकरण' और सबटाइटलिंग के लिए 'उपषीर्शीकरण' का प्रयोग

होता है। मीडिया और अनुवाद के संदर्भ में इन दोनों की प्रक्रिया और आवश्यकता को समझा जाने लगा है। वास्तव में टेलीविजन में प्रसारित कार्यक्रमों में और फिल्मों में अधिकाधिक विविधता लाने का प्रयास रहता है, क्योंकि अधि ाकतर फिल्में और सीरियल दर्शक-केन्द्रित होते हैं। कई बार निर्माता और प्रायोजक अलग प्रकार के कार्यक्रम और सीरियल प्रस्तुत करते हैं जो अन्य भाषाओं में बड़े लोकप्रिय या मनोरंजक माने जाते हैं। श्रोता और दर्शक विविध ाता तथा नवीनता को बहुत पसंद करते हैं। इसलिए अन्य भाषाओं के कार्यकर्मों, धारावाहिकों आदि को दूसरी भाषा में लाया जाता है। इस प्रक्रिया को डबिंग कहते हैं। श्रोता और दर्शक को ऐसे सीरियल, फीचर फिल्म, एनीमे शन और कार्टून दिखाए जाते हैं जिनका संबंध पूरे विश्व से होता है, लेकिन दिखाई देता है अपनी भाषा में। ऐसे अनजाने, अनदेखे और अलग से लगने वाले लोगों और पात्रों को अपनी भाषा में बातचीत करते देखना रोमांचकारी और रोचक लगता है। यह रोमांच दिलाता है डबिंग। डविंग और सबटाइटलिग पर हमने पाठ्यक्रम एम टी टी 016 में भी चर्चा की है; परन्तु यहाँ हम इनके अनुवादपरक महत्व और प्रसारण की गुणवत्ता के पहलु से बात करेंगे।

उपशीर्षक की उत्पत्ति या तो प्रतिलेख से हुई है या इसका संबंध फिल्मों, टेलीविजन कार्यक्रमों आदि में संवाद, वक्तव्य, भाषण, वर्णन आदि के स्क्रीन पर होने वाले लिखित प्रदर्शन से है। ये उपशीर्षक प्रायः स्क्रीन के नीचे होते हैं। कभी-कभी ये स्क्रीन के शीर्ष-भाग पर भी प्रदर्शित होते हैं अगर स्क्रीन का पाठ पहले से ही नीचे हो। संवाद के लिखित रूप ये उपशीर्षक या तो संवाद की अपनी भाषा में होते हैं या दूसरी भाषा में अनूदित रूप में होते हैं। उपशीर्षीकरण का विकास मूक फिल्म युग में हुआ था। उस युग में हालीवुड स्टूडियो अपनी फिल्मों को उनके उपशीर्षक विभिन्न भाषाओं में दे कर विदेशी बाजार में भेजते थे। उपशीर्षीकरणमुख्यतः दो प्रकार के होते हैं - एक, सीधा उपशीर्षीकरण और दो, अनूदित उपशीर्षीकरण। सीधा उपशीर्षीकरणउन लोगों के लिए होता है जो फिल्म तो देख लेते हैं लेकिन बधिर होने के कारण संवाद सुन नहीं पाते। यह उन लोगों के लिए भी होता है जो अभिनेता द्वारा बोले गए संवाद में आए बलाघात, लहजा आदि समझ नहीं पाते। अनूदित उपशीर्षीकरण उन लोगों के लिए होता है जो फिल्म या टीवी कार्यक्रम के संवाद या वर्णन की मूल भाषा नहीं जानते और ये संवाद या वर्णन उनकी अपनी भाषा में प्रस्तुत किए जाते हैं।

डबिंग और उपशीर्षीकरण का अनुवाद के साथ भी निकट का संबंध है। इसे व्यापक संदर्भ में श्रव्य-दृश्य अनुवाद की विधा में रखा जा सकता है। ये अनुवाद के अंतःभाषिक और अंतरभाषिक दोनों आयामों को अपने भीतर समेटे हुए तो हैं ही, साथ ही अपनी प्रक्रिया में ध्वनि, चित्र, संगीत तथा अन्य सांकेतिक अथवा अमौखिक तत्वों को भी सन्निहित किए होते हैं। इस प्रकार डबिंग और सबटाइटलिंग की प्रक्रिया में अनुवाद का विशेष संबंध है।

11.2 डबिंग

11.2.1 डबिंग का अर्थ और स्वरूप

फिल्मी जगत में डबिंग एक जाना-पहचाना शब्द है। फिल्म उद्योग में फिल्म के निर्माण के समय सभी अभिनेताओं को अपनी फिल्मों की डबिंग करनी पड़ती है। वास्तव में फिल्म की शूटिंग के दौरान कलाकार अपने जो संवाद बोलते हैं, उनके साथ-साथ कई अन्य अवांछित ध्वनियाँ शोरगुल भी रिकार्ड हो जाते हैं। इन अवांछित व्यवधानों को ध वनि-पथ (sound track) से हटाने के लिए डबिंग की जाती है। डबिंग थियेटर में कलाकार अपनी फिल्म को छोटे-छोटे टुकड़ों जिन्हें ोिवजे कहते हैं, उनमें देखता है और अपने होठों के उतार-चढ़ाव को पर्दे पर देख कर एक बार फिर संवाद को माइक्रोफोन से बोलता है। दोबारा बोले गए संवाद को पहले रिकार्ड हुई कटी-फटी आवाज के स्थान पर भर लिया जाता है। यही डबिंग कहलाता है।

सामान्य अर्थ में डबिंग स्क्रीन पर दिखाई देने वाले अभिनेता की आवाज को दूसरे कलाकार की आवाज से देना है जो अन्य भाषाभाषी हो सकता है। कई बार तो नया ध्वन्यंकन प्रस्तुत करने के लिए भी डबिंग होता है जो वीडियो में पहले ही लक्षित श्रोता या दर्शक की भाषामें दिया होता है। इस प्रकार ध्वन्यालेखन sound recording में पहले से की गई श्रव्य सामग्री का एक माध्यम से दूसरे माध्यम में रूपांतरण करना या अनुकरण करना डबिंग है। यह रूपांतरण एक समान ढंग से या भिन्न प्रकार से होता है। डबिंग फिल्म निर्माण या वीडियो रचना में बाद में प्रयुक्त वह उत्पादन प्रक्रिया है जिसमें अतिरिक्त अथवा पूरक रिकार्डिंग मूल उत्पादन ध्वनि के साथ मिल जाती है। इससे

परि त ध्वनि-पथ का सृजन होता है।

डबिंग किसी फिल्म के पूर्ण संवाद के समेकित ध्वन्यांकन तथा विकल्पों के निर्माण की प्रक्रिया भी है जो टीवी कार्यक्रम, वीडियो कार्यक्रम आदि में भी हो सकता है। दूसरे शब्दों में, डबिंग एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे किसी वीडियो कार्यक्रम के मूल ध्वन्यांकन को बदला जा सकता है। निर्माण प्रक्रिया की बाद की जो परिवर्तित या मिश्रित ध्वन्यांकन क्रिया होती है वह टी वी कार्यक्रम, वीडियो आदि में की जाती है। डबिंग का प्रयोग प्रायः विदेशी फिल्म या मूवी का स्थानीकरण करने के लिए होता है। नए स्वर-पथ अवपबम जतंबा में स्वर-कलाकार या स्वर-अभिनेता की आवाज प्रायः होती है, जैसे - टी वी चैनल पर 'वेकशीकेसल' और 'डोरेमान' नामक जो जापानी कार्यक्रम होते हैं, उनकी डबिंग हिन्दी में अच्छी हुई है। इसी प्रकार सुप्रसिद्ध चौनल 'डिस्कवरी' पर टेलिकास्ट होने वाले सुपरहिट सीरियल 'मैन वर्सेस वाइल्ड' के एंकर बीयर ग्रिल्स की आवाज की डबिंग हिन्दी में हुई हैं। आज विदेशी बाजार में स्थानीय भाषा में फिल्मों, वीडियो या वीडियो गेम्स की डबिंग होती है। यह डबिंग मंचीय रूप से निर्मित फिल्मों, टी वी फिल्मों, टी वी धारावाहिकों, कार्टूनों और सजीव चित्रें (animation) में आम है। हिन्दी में 'मोटू-पतलू' एनिमेटिड कार्टून धारावाहिक के पात्रों की आवाज का डबिंग है।

डबिंग और ए डी आर कभी-कभी ए डी आर और डबिंग के बीच भ्रम हो जाता है। ए डी आर को आटोमेटेड डायलाग रिप्लेसमेंट Automated Dialogue Replacement अथवा एडीशनल डायलाग रिकार्डिंग (Additional Dialogue Recording) नाम से भी जाना जाता है। इसमें मूल अभिनेता श्रव्य खंडों का रिकार्ड और समक्रमण करता है। ए डी आर मूल अभिनेता द्वारा बोले गए संवाद के पुनः रिकार्डिंग की प्रक्रिया है जो फिल्म-निर्माण की प्रक्रिया के पश्चात होती है। इससे श्रव्य की गुणवत्ता में या तो सुधार होता है या संवाद में परिवर्तन दिखाई देता है। डी आर का प्रयोग उन मूल पंक्तियों को परिवर्तित करने के लिए भी होता है जो सेट पर रिकार्डिड होती हैं। यह कार्य संदर्भ स्पष्ट करने के लिए अथवा कथन-शैली या समय-अंतराल में संशोधन करने के लिए अथवा बलाघातपूर्ण वाचिक निष्पादन के प्रतिस्थापन के लिए होता है। यूनाइटेड किंगडम में इसे पश्च-समक्रमीकरण कहते हैं।

फिल्म उद्योग के बाहर डबिंग शब्द सामान्यतः स्क्रीन पर दिखाए गए अभिनेताओं की आवाजों को अन्य भाषा बोलने वाले विभिन्न अभिनेताओं की आवाजों के प्रतिस्थापन का अर्थ देता है। इसे फिल्म उद्योग में पुनर्स्वरीकरण त्म - Voicing कहा जाता है।

11.2.2 डबिंग का ऐतिहासिक संदर्भ

डबिंग फिल्मों में कई वर्षों से चली आ रही है। डबिंग का पहला श्रेय सन 1929 में रेडियो-कीथ-ओर्फीयम, (RKO) न्यूयार्क के मेरिओन पी हॉल्ट को जाता है जिन्होंने अपनी अंग्रेजी फिल्म 'रियोरिटा' का स्पेनिश में डबिंग कराया था। इसके पश्चात डबिंग की तकनीक का विस्तार बहुत हो गया। पांचवें दशक में राजकपूर की हिन्दी फिल्म 'आवारा' को रूस के दर्शकों ने रूसी भाषा में देख कर वे राजकपूर के दीवाने हो गए थे।

प्रारंभिक काल में डबिंग की प्रक्रिया मुख्यतः संगीत में प्रयुक्त होती थी जब नायक-नायिकाओं की आवाज में सुरीलापन नहीं होता था। उनके गाने की आवाज संतोषजनक न होने के कारण सुरीली आवाजों को रिकर्ड किया जाता था और मूल आवाज के साथ बदल दिया जाता था। वास्तव में फिल्म के प्रारंभ में नायक-नायिका को अपना गीत गाना होता था। बाद में प्लेबैक पद्धति का विकास हुआ जिसमें फिल्मों के नायक-नायिका अलग होते थे और उनपर फिल्माए गए गीतों के गायक अलग होते थे। कभी-कभी उसी नायक या नायिका से पुनः रिकार्डिंग कराई जाती है ताकि ध्वनि-चिह्नों में सुधार किया जा सके और उसे प्रभावी बनाया जा सके।

विश्व भर में विभिन्न भाषाभाषी दर्शकों एवं श्रोताओं तक अपनी पहुँच बनाने के लिए डबिंग का काफी उपयोग होने लगा है। भारत में बॉलीवुड की फिल्म समूचे देश में तो प्रदर्शित होती ही है, बाहर समुद्रपार भी प्रदर्शित होती है। हॉलीवुड की फिल्में भी एक ही समय में अनेक देशों में प्रदर्शित होती हैं। कुछ देशों में यह स्थानीय भाषाओं के उपशीर्षक अथवा स्थानीय भाषाओं में डबिंग कर प्रदर्शित की जाती है। इस प्रक्रिया में आज डबिंग श्रव्य-दृश य सामग्री की स्क्रीनिंग में फिल्म कलाकारों, निर्माताओं और निर्देशकों को उन देशों के वृहत्तर श्रोतावर्ग से जोड़ने में सहायता करता है, जिनके दर्शक मूल फिल्म के अभिनेताओं की भाषा नहीं बोल पाते हैं।

डबिंग की अनेक समस्याओं को दूर करने के लिए तकनीशीयनों ने एक नई तकनीक की खोज की है जिसे वीडियो-पुनर्लेखन (Video Rewrite) कहते है। इसमें कंप्यूटर से होठों की गति को नए ध्वनि पथ में सजीवीकरण के अनुरूप जोड़ा जाता है। इस प्रकार डबिंग की प्रक्रिया ने एक लंबा रास्ता तय किया है। अब यह विशेषज्ञता का क्षेत्र बन चुका है। भारत में ही लगभग एक सौ से अधिक ऐसे संगठन हैं जो डबिंग में विशेषज्ञता प्राप्त कर चुके हैं।

11.2.3 डबिंग और वायस-ओवर में अंतर

वायस-ओवर (सह संवाद) डबिंग का एक रूप है जिसके माध्यम से 'डिस्कवरी' और 'नेशनल ज्योग्राफिक' जैसे चैनलों की पहुँच भारत में दूर-दूर तक फैली हुई है। वास्तव में वायस-ओवर ध्वनि-पथ में दृश्यों के अंशों में भाषा के द्वारा अधिक विस्तार देने की प्रक्रिया है। यह स्क्रीन पर दृश यों की व्याख्या करता है जिसमें सामान्य तौर पर वर्णनकर्ता अपनी आवाज से स्क्रीन पर दृश यों की सूचना देता है। यह उल्लेखनीय है कि डबिंग की प्रक्रिया वायस-ओवर की प्रक्रिया से अधिक कठिन है। डबिंग के दौरान होठों की गति और शारीरिक भाषा में समरूपता या एकरूपता सुनि चत की जाती है तथा उनमें तालमेल तथा सामंजस्य बिठाने की आवश्यकता होती है। वायस-ओवर में वर्णनकर्ता की कोई सीमा निर्धारित नहीं होती। उसके लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि उसके द्वारा किया जा रहा वर्णन दृश्यों के साथ सामंजस्य बैठा रहा है या नहीं। अतः वर्णन का मिलान दृश्यों के साथ होना आवश्यक है।

डबिंग का मूल्य और महत्व वायस-ओवर से काफी अधिक है। डबिंग के लिए विभिन्न पात्रों या चरित्रों के संवाद रिकार्ड करने के लिए अनेक कलाकारों की जरूरत होती है, जबकि वायस-ओवर में दृश्यों की व्याख्या करने के लिए केवल एक व्यक्ति की आवश्यकता होती है। अतः डबिंग वायस-ओवर से अधिक जटिल कार्य है।

11.2.4 डबिंग में अनुवाद की भूमिका

जैसा कि हम पहले बात कर चुके हैं कि डबिंग स्क्रीन पर दिखाई दे रहे अभिनेता की आवाज को दूसरे कलाकार की आवाज में बदला जा सकता है वहाँ यह आवाज एकभााी कलाकार की होती है तो अन्यभाषी कलाकार की भी आवाज हो सकती है। इस प्रकार अन्य भाषा में जो डबिंग होती है उसका संबंध अनुवाद से होना स्वाभाविक है। यहाँ डबिंग का अर्थ अनुवाद के माध्यम से अन्य भाषा में अंतरण करने से है। मूल भाषा में जब कोई फिल्म बनती है तो उनके संवादों, गीतों आदि को डबिंग करते हुए अन्य भाषा या भाषाओं में संयोजित किया जाता है। इस प्रकार डबिंग एक भाषा से दूसरी भाषा में किए गए अनुवाद को दर्शकों एवं श्रोताओं तक पहुँचाने का माध यम है।

डबिंग-अनुवाद में यथासंभव यह प्रयास रहता है कि शब्दों, वाक्यां ाों आदि अभिव्यक्तियों से भावों और विचारों का उद्घाटन लक्ष्य भाषा में हो जाए। वस्तुतः क्लोजशॉट (Close Shot) में संवादों को बनाए रखने के साथ-साथ लॉंगशॉट (Long shot) में भी थोड़ी-बहुत स्वतंत्रता ली जा सकती है। अनुवाद में भाषा की मुखरता, गति, रवानी, मुहावरा आदि पर भी ध्यान रखना पड़ता है, किंतु अभिनेता के मुख से निकली मूल भाषा की ध्वनियों से हुए होठों के समक्रमीकरण और फैलाव (lip synchronization) का भी अधिकाधिक ध्यान रखना पड़ता है। दूसरे शब्दों में अनुवाद को इस ढंग से शैलीबद्ध करके उच्चरित किया जाता है कि डब करने वाले अभिनेता का उच्चारण पर्दे पर दिखाई देने वाले अभिनेता के होठों के संचालन से मेल खाए। इसके अतिरिक्त डबिंग-अनुवाद में संवादों के दौरान होठों के हिलने के साथ-साथ अभिनेताओं के चेहरे की भंगिमाओं और कंधे उचकाने या झटकाने जैसी शारीरिक चेष्टाओं का तालमेल भी लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत संवादों से मिलाना होता है। इसमें समय-निर्धारण अथवा समय-मापन (timing) दो स्तरों पर करना होता है - एक, अक्षरों को बोलने का समय और दो, शब्दों या वाक्यों के बीच आने वाले विराम या श्वसन का समय। वास्तव में डबिंग-अनुवाद की सफलता इस बात में है कि दर्शक को यह पता न चले कि पर्दे में दिखाई देने वाले अभिनेता ने जो संवाद बोला है वह उसे मूल भाषा में सुन रहा है या किसी अन्य भाषा में। हर भाषा की अपनी प्रकृति, संरचना, सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति, देश-काल, लक्षणा-व्यंजना आदि होती हैं जो अनुवाद में, विशेषकर डबिंग में समस्या पैदा करते हैं। पात्रनुकूल भाषा को भी ध्यान में रख कर लक्ष्य

भाषा के दर्शकों और श्रोताओं की क्षमता पर भी दृष्टि रखनी पड़ती है। यदि इनमें कोई गड़बड़ी हो जाती है तो दर्शक या श्रोता को परेशानी हो जाती है।

डबिंग से वीडियो विश्व-भर के बहुभ्ााी दर्शकों और श्रोताओं के पास पहुँचता है। जहाँ निर्माता अन्य भाषाभ्ााी वर्ग तक अपनी फिल्म पहुँचा कर लाभ कमाता है, वहाँ अन्य भ्ााी लोग उस फिल्म को अपनी भाषा में देख लेते हैं जिसका निर्माण मूल भाषा में हुआ है। इसी डबिंग-अनुवाद से हालीवुड की अनेक फिल्मों ने भारतीय दर्शकों को प्रभावित किया है। विदेशी फिल्मों, विशेषकर अंग्रेजी से हिन्दी में अनूदित फिल्मों को भारतींय दर्शक बड़ी रुचि से देखते हैं जिनमें जुरासिक पार्क, टाइटैनिक, होम अलोन, डीप-इंपेक्ट, मैन-इन-ब्लैक, अनाकोंडा आदि उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार स्माल वंडर, आई ड्रीम आफ ए जिनी, टोम एंड जेरी आदि अनेक विदेशी सीरियल भी टेलीविजन पर दिखाए गए हैं और दिखाए जा रहे हैं जिनका अनुवाद डबिंग प्रक्रिया के दौरान हुआ है। कार्टून और एनीमेशन फिल्मों के लिए तो डबिंग सामान्य बात हो गई है। रूडयार्ड किपलिंग की पुस्तक ‘जंगल बुक‘ की एनिमेटेड श्रृंखला के मोगली को डबिंग कलाकारों ने बच्चों में लोकप्रिय बना दिया है। इनके अनुवाद में न तो शाब्दिक अनुवाद हुआ है, न ही मूल या स्रोत भाषा के शब्दों का प्रतिस्थापन और न ही वाक्य-विन्यास का अनुगमन। साथ ही इनमें सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश का भी ध्यान रखा गया है।इसी प्रकार हिन्दी की अनेक फिल्में दक्षिण भारत में डब करके दिखाई जाती है और दक्षिण भारत की भाषाओं की फिल्में उतर भारत में दिखाई जाती हैं।

डबिंग-अनुवाद के दौरान अनुवाद सिद्धांत के अनुसार ही फिल्मी संवादों का अनुवाद पूर्णतया समरूपी नहीं होता, अपितु इसमें समतुल्यता (Equivalence) के सिद्धांत का निर्वाह किया जाता है। कई बार मूल पाठ का पहले लक्ष्य भाषा में अनुवाद होता है और फिर उसका मुक्त पुनरनुवाद होता है। जैसे एन टी रामाराव और मीनाक्षी शोषाद्रि की द्विभाषिक फिल्म ‘विश्वामित्र‘ के संवाद-लेखन के समय पहले संवाद-लेखक को तेलुगू से भाषांतर कर सरल अंग्रेजी में संवाद दिए गए, फिर उनके आधार पर संवाद-लेखन किया गया। इस प्रकार डबिंग-अनुवाद में एक से अधिक व्यक्तियों का सहयोग रहता है। यहाँ यह उल्लेख करना असमीचीन न होगा की डबिंग के लिए संवाद-लेखक को मूल संवाद-लेखक की अपेक्षा बहुत कम मान्यता मिलती है, जबकि स्रोत भाषा के मूल संवाद-लेखक की तुलना में डबिंग के लिए संवाद लिखने वाले को अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता है। यही सिद्धांत तेलुगू और तमिल फिल्म ‘महाबली‘ के हिन्दी डबिंग-अनुवाद पर लागू होती है। वस्तुतः डबिंग-अनुवाद में एक ऐसी फिल्म को लक्ष्य भाषा के शब्द या अभिव्यक्तियाँ दी जाती हैं जिसे पहले ही अपनी छवि तथा रूप प्राप्त हो चुके होते हैं। डबिंग के व्याकरण का यही सूत्र है जिस पर ध्यान देना आवश्यक है। अनूदित संवादों के विश्लेषणात्मक अध्ययन में स्रोत और लक्ष्य भाषाओं के व्यतिरेकों, सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों, भाषापरक विशिष्टताओं, प्रोक्तिपरक संरचनाओं आदि के साथ-साथ भाव-भंगिमाओं पर भी विचार होता है। इस प्रकारअनुवाद एक अनुप्रायोगिक विधा तो है ही लेकिन डबिंग-अनुवाद तो उसका भी अनुप्रयोग है।

11.2.5 डबिंग की सीमाएँ

डबिंग श्रव्य-दृश्य (AVT) जैसे वि ााल व्ाािय का एक अंग माना जाता है जिसमें अंतरभ्ाािक अंतरण के अतिरिक्त चित्रें, संगीत और अन्य भाषेतर तत्वों की भी भूमिका रहती है। इस दृष्टि से यहएक प्रकार से बहु-सकेतित अंतरण है। आज फिल्मों और टी वी कार्यक्रमों के तीव्र गति से हो रहे अंतरराष्ट्रीयकरण के कारण विश्व के अनेक देशों के दर्शक और श्रोता अनेक भाषाओं तथा संस्कृतियों में श्रव्य-दृश्य उत्पाद देख पा रहे हैं। भाषा-ज्ञान की दीवारों को तोड़ते हुए दर्शक और श्रोता वर्ग में प्रयुक्त डीवीडी (DVD) से डबिंग की व्यावसायिक मांग में वृद्धि हुई है। इस लिए भ्ाािक अंतरण और निर्माण-तकनीकों के प्रयोग के अंतर्गत कई बार सामाजिक-सांकृतिक तत्त्वों, देश-काल, जीवन-शैली और मूल्य पद्धति की अनदेखी हो जाती है जिसके कारण फिल्मों और टी वी कार्यक्रमों के साथ दर्शकों का तादात्म्य नहीं हो पाता।

ये भी एक धारणा है कि विदेशी भाषा और ध्वनियों के साथ स्क्रीन पर अभिनेता के होठों की गति तथा डब की गई आवाज कितनी भी अच्छी तरह से संश्लेषित हो, उसमें कोई-न-कोई द्ाोा मिल ही जाता है और यह भ्रम की स्थिति पैदा करता है।

हर भाषा की अपनी अभिव्यक्ति पद्धति होती है। उसका तान-अनुतान, बलाघात, लय विधान आदि अलग होता है। किसी फिल्म की लक्ष्य भाषा में डबिंग करते हुए उस भाषा की विशिष्टताओं और लक्षणों से यदि कलाकार परिचित नहीं है तो वह नए दर्शक की भाषा से न्याय नहीं कर पाएगा और यह उसकी सीमा है। एक विद्वान मैक ने कहा है कि हालीवुड की कई फिल्मों में कुछ फ्रांसीसी कलाकार निरंतर आवाज देते हैं। इनकी आवाज को अनेक फ्रांसीसी लोग पहचानते हैं और वे आ चर्य में पड़ जाते हैं। अतः लक्ष्य भाषा के भाषाभाषी कलाकार से आवाज डब करने से ही न्याय हो पाने की संभावना है। लेकिन लक्ष्य भाषा के डबिंग कलाकार को ढूँढ पाना कठिन है। इसके बिना मूल फिल्म की सटीक प्रतिकृति तैयार करना संभव नहीं है।

कई विदेशी भाषाओं के डबिंग का खर्च बहुत अधिक पड़ता है और वह भी अनेक लक्ष्य भाषाओं का डबिंग। यह सुनि चत नहीं की वह फिल्म कितनी सफल होगी, क्योंकि यह आवश्यक नहीं हर लक्ष्य भाषा के दर्शक को वह फिल्म पसंद आए।

कई बार डबिंग अनुवाद भी एक सीमा बन कर खड़ा होता है। यदि अनुवाद स्तरीय नहीं होता है या नितांत शब्दानुवाद होता है तो फिल्म का मूल संदेश दर्शक वर्ग तक नहीं पहुँच पता। हर भाषा न केवल उच्चारण, शब्दावली, व्याकरण आदि की दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न होती है बल्कि संस तियों की दृष्टि से भी भिन्न होती है। इसमें यदि चूक हो जाए तो दर्शक और श्रोता वर्ग उस फिल्म को पसंद नहीं कर पाए।

11.3 सबटाइटलिंग (उपशीर्षीकरण)

11.3.1 सबटाइटलिंग का अर्थ और स्वरूप

उपशीर्षक की उत्पत्ति या तो प्रतिलेख (transcript) से हुई है या संवाद के स्क्रीनप्ले से हुई है। यह फिल्मों, टी वी कार्यक्रमों, वीडियो गेम आदि में व्याख्या या विवरण का पाठात्मकरूप होता है जो स्क्रीन के निचले भाग में प्रायरू दिखाया जाता है। वस्तुतः चित्रों के कथाक्रम में उपशीर्षक तैयार कर लिए जाते हैं और उन्हें फिल्म के साथ मुद्रित किया जाता है। जैसे-जैसे फिल्म चलती जाती है वैसे-वैसे फिल्म के संवादों का मुद्रित मूल रूप या अनुवाद पर्दे के निचले भाग पर प्रदर्शित होता है। इसे अनुशीर्षक (captioning) भी कहते है। यदि स्क्रीन के निचले भाग में पहले से ही पाठ होता है तो यह स्क्रीन के शीर्ष भाग पर हो सकता है। स्क्रीन अथवा मंच के ऊपरी भाग पर प्रदर्शित उपशीर्षक को अधिशीर्षक (surtitle) कहते हैं। ओपेरा जैसे कुछ प्रदर्शनों में यह सांप्रतिक शीर्षक का भी काम करता है। इससे दर्शकों को पाठ की अतिरिक्त सूचना मिल भी सकती है और नहीं भी।

उपशीर्षक उन दर्शकों की सुविधा के लिए है जो या तो बधिर है या ऊँचा सुनते हैं। यह उन दर्शकों के लिए भी है जो मौखिक संवाद को समझ नहीं पाते या जिन्हें बलाघात पहचानने में कठिनाई होती है। ऐसे दर्शकों के लिए ये उपशीर्षक टी वी टेलीपाठ में या तो छिपे होते हैं या इन्हें संभाल कर रखा जाता है। जब तक दर्शक से अनुरोध ा प्राप्त नहीं होता तब तक प्रामाणिक टेलीपाठ के पृष्ठ नहीं बताए जाते। इसे कोडीकृत पद्धति से या तो वीडियो में पुनः प्रस्तुत किया जाता है अथवा पृथक पाठ के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इसमें बधिरों के लिए अतिरिक्त ध्वनि-प्रस्तुतीकरण होता है। टेलीपाठ-उपशीर्षक की भाषा मूल श्रव्य का अनुसरण करती है, जबकि बहुभाषी देशों में प्रसारक (broadcaster) अन्य टेलीपाठों पर अतिरिक्त भाषाओं में उपशीर्षक प्रस्तुत करता है। यहाँ यह बताना असमीचीन न होगा कि जो उपशीर्षक स्क्रीन पर प्रक्षेपित होता है वह या तो उसी भाषा में संवाद का लिखित रूप होता है या अन्य भाषा में अनूदित होता है।

कभी-कभी और वह भी अधिकतर फिल्म महोत्सवों में उपशीर्षक स्क्रीन के नीचे अलग से प्रदर्शित किए जाते हैं। इससे फिल्म-निर्माता मात्र एक शो के लिए उपशीर्षक की प्रति बनाने से बच जाते हैं। उपशीर्षक को कई तरीकों से पढ़ा जा सकता है। दो वक्ताओं के बीच हो रहे संवाद को जब एक ही स्क्रीन पर दिखाया जाता है तब प्रत्येक वाक्य डैश के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है और अपेक्षाकृत केंद्रित वाक्य सामान्यतः बाईं ओर दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए,

-- क्या आप टाइटैनिक में वापिस जाना चाहेंगी?

-- क्या हुआ, कुछ बताएँगी? (टाइटैनिक फिल्म)

कुछ विशेषज्ञ हर वक्ता को अलग रंग में उपशीर्षक प्रस्तुत करने की बात करते हैं ताकि यह ज्ञात हो सके कि कौन वक्ता बोल रहा है।

आजकल व्यावसायिक तौर पर काम करने वाले उपशीर्षक-लेखक आधेकतर विशेषीकृत कंप्यूटर साफ्टवेयर और हार्डवेयर के साथ काम करते है जिसमें वीडियो का हार्ड डिस्क अंकीय रूप से कपहपजंससल भंडारित होता है और हर व्यक्तिपरक फ्रेम की पहुँच के भीतर होता है। उपशीर्षक-लेखक कंप्यूटर में कंप्यूटर साफ्टवेयर के उपयुक्त स्थल का समन्वयन इस प्रकार करता है कि उपशीर्षक कहाँ दिखाई देगा और कहाँ लुप्त हो जाएगा। सिनेमा-फिल्मों में यह कार्य तकनीशन परंपरागत रूप से करते है। इससे वास्तविक उपशीर्षक और स्थल-चिह्न का पता चलता है। अगर यह कार्य टी वी वीडियो, डी वी डी आदि इलेक्ट्रानिक मीडिया में होता है तोये चिह्न मुख्यतः समय-कोड पर आधारित होते हैं और अगर परंपरागत सिनेमा-फिल्म के लिए प्रयुक्त होता है तो फिल्म की लंबाई पर आधारित होता है।

11.3.2 सबटाइटलिंग के प्रकार

सबटाइटलिंग या उपशीर्षीकरण के मुख्यतः दो प्रकार हैंः एक, सदृश भाषा सबटाइटलिंग और दो, अनूदित सबटाइटलिंग।

1. सदृश भाषा सबटाइटलिंगः यह सबटाइटलिंग उन लोगों के लिए की जाती है जो फिल्म या टी वी कार्यक्रम देख तो सकते हैं किंतु बहरा होने के कारण संवाद नहीं सुन पाते। इसके अतिरिक्त ऐसे दर्शक भी होते हैं जो या तो ऊँचा सुनते हैं या अभिनेता के बलाघात समझ नहीं पाते। यह एक ऐसा प्रतिलेखन भी है जिसमें संवाद-रहित श्रव्य का भी वर्णन होता है; जैसे - दरवाजे की आवाज या गहरी साँस। कई बार एक ही भाषा के अलग-अलग रूप या शैलियाँ होती हैं अथवा उनके अलग-अलग उच्चारण होते होते हैं; जैसे ब्रिटिश इंगलिश, अमेरिकन इंगलिश या इंडियन इंगलि ा। इसी प्रकार कलकतिया हिन्दी, मुंबइया हिन्दी, हैदराबादी हिन्दी, बिहारी हिन्दी, पंजाबी हिन्दी आदि अलग-अलग रूपों को समझने के लिए सदृश उपशीर्षीकरण की आवश्यकता पड़ती है। इसे सीधा उप ार्षीकरण भी कहते हैं।

   सदृश भाषा उप ार्षीकरण बहरे या ऊँचा सुनने वाले दर्शकों के अतिरिक्त साक्षरता पर भी बड़ा प्रभाव डालता है। इससे पाठन योग्यता के व्यापक क्षेत्र में पाठन विकास होता है। भारत और चीन के राष्ट्रीय दूरदर्शन प्रसारण सेवा में यह पद्धति अपनाई जाती है। सदृश भाषा उपशीर्षीकरण की प्रक्रिया में पाठन व्यवहार आकस्मिक, स्वचालित और लोकप्रिय टी वी मनोरंजन कार्यक्रमों का अवचेतन भाग है। प्रतिव्यक्ति कम लागत पर और भारत में साक्षारता दर की वृद्धि करने में सहायक है। यह पद्धति अन्य एशियाई, अफ्रीकी, लेटिन अमेरिकी जैसे विकास ील देशों में काफी उपयोगी मानी जा रही है।

   सदृश भाषा उपशीर्षीकरण का शैक्षिक प्रयोग संगीत तथा गीत में भी होता है। इसमें श्रव्य और पाठ में उच्च गुणवत्ता-प्राप्त समक्रमीकरण अपेक्षित है। आक्षरिक समक्रमीकरण के अंतर्गत श्रव्य प्रारूप में परिवर्तन होता है ताकि पाठ से भाषा-योग्यता को ऊँचे स्तर तक पहुँचाया जा सके।

   यदि किसी वक्ता में वाक-दोष हो तो उसके लिए भी उपशीर्षीकरण काम कर सकता है। श्रव्य-सामग्री को अच्छी तरह समझने के लिए यह अतिरिक्त सूचना भी देता है। इसके अलावा विदेशी भाषा प्रशिक्षु को भी सदृश भाषा उपशीर्षक अनुवाद किए बिना संवाद समझने में सहायता करता है।

2. अनूदित सबटाइटलिंगः स्क्रीन पर अन्य भाषा से श्रोता की भाषा में संवाद की पाठपरक प्रस्तुति अनूदित सबटाइटलिंग या उप ार्षीकरण कहलाता है। इसे विकर्ण उपशीर्षीकरण भी कहते हैं। उपशीर्षक उपशीर्षक में कभी-कभी संवाद का अक्षर ाः अनुवाद नहीं होता। उसे संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है ताकि फिल्म की गति के सीमित समय में उसे सीमित शब्दों में पढ़ा जा सके। वस्तुतः दर्शकों का ध्यान अधिकतर फिल्म पर और गौण रूप से शब्दों पर रहता है। अगर उपशीर्षक लंबा होगा तो दर्शक का सारा समय उसे पढ़ने में लग

जाएगा और वह अभिनय तथा फिल्म के अन्य पक्षों पर ध्यान नहीं दे पाएगा। सबटाइटलिंगों को अक्सर आठ अक्षर प्रति सैकंड की अधिकतम गति के अनुपात से दिखाया जाता है। इस गति का निर्धारण इन्हें पढ़ने के औसत समय को ध्यान में रख कर किया गया है। धीमी गति से पढ़ने वाले दर्शक अथवा भाषा के कम ज्ञान वाले दर्शक को इस गति में असुविधा होती है।

फिल्मों, कार्टून-फिल्मों, वीडियो आदि को अन्यभाषी देशों में निर्यात करने के लिए अनूदित उपशीर्षीकरण की आवश्यकता पड़ती है। आज विश्व में मीडिया का इतना विस्तार हो गया है कि एक देश में एक फिल्म का निर्माण होता है तो उसे सबटाइटल के साथ अन्यभाषी देशों में प्रदर्शित किया जाता है। इससे अनुवाद से विभिन्न भाषाभाषी श्रोताओं को अपनी भाषा में फिल्म समझने में सुविधा होती है। इसके अतिरिक्त टी वी कार्यक्रमों में किसी अन्यभाषी वक्ता से वार्तालाप करते हुए या साक्षात्कार लेते हुए अनूदित सबटाइटलिंग की आवश्यकता होती है। इस प्रकार अनूदित सबटाइटलिंग आज जनसंचार या मीडिया का आवश्यक अंग हो गया है।

11.3.3 सबटाइटलिंग का ऐतिहासिक संदर्भ

फिल्मों के आविष्कार से पहले अभिनेताओं के संवाद को श्रोताओं तक पहुँचाने के प्रयास किए जाते थे। इसका प्रारंभ अंतरशीर्षक (inter title) के साथ शुरू हुआ। यूरोप में फिल्म निर्माण के दौरान पहले वर्णनात्मक उपशीर्षक दिए जाते थे पाठ लिखे जाते थे अथवा पत्रों पर प्रकाि ात किए जाते थे या फिल्माए जाते थे और फिर फिल्म के बीच क्रम बिठाया जाता था। बाद में इसे 'सबटाइटल' कहा गया। इसका प्रयोग उसी प्रकार होता था जिस प्रकार समाचार पत्रों में होता है। प्रारंभिक काल में सबटाइटल या उपशीर्षक दृश्यों में बहुत कम दिए जाते थेय जैसे- कॉलेज चम्स (1907), फ्रेंच फिल्म 'जुडेक्स' अथवा 'मिक्जेली'(1922)। वास्तव में मूक फिल्म काल में उपशीर्षीकरण ध्वनि की कमी को पूरा करने के उद्देश्य से किया जाता था।

मूक फिल्म काल में हॉलीवुड स्टूडियो विदेशी बाजार में अपनी पहुँच अपनी फिल्मों के उपशीर्षक उपयुक्त भाषा में दे कर बनाई। आवाज-रोधी (silent) या मूक युग में फिल्में वार्तालाप (जंसा) नहीं करती थीं, किंतु वे कभी 'शांत' (silent) भी नहीं देखी गईं। उपशीर्षकों के द्वारा संवाद प्रस्तुत किए जाते थे जो ज्यादातर अंग्रेजी में होते थे या दो-तीन भारतीय भाषाओं में। इस प्रकार फिल्में बनाना और उसे कई स्थानों पर विभिन्न भाषाभाषी दर्शकों के समक्ष प्रदर्शित करने में कोई समस्या नहीं थी। इस सबटाइटलिंग का प्रयोग मात्र आवाज की कमी को पूरा करने के नहीं होता अपितु ध्वनि को परिपूर्ण बनाने के लिए भी होता है। इसका सदैव यह उद्देश्य रहा है कि श्रोताओं के बीच फिल्म को बोधगम्य और सहज बनाया जा सके।

भारत में सबसे पहली फिल्म सन 1913 में 'राजा हरि चंद्र' थियेटर में प्रदर्शित हुई थी। इस फिल्म को भारतीय सिनेमा के जनक दादा साहब फालके के नाम से प्रसिद्ध श्री धुंडीराज गोविंद फालके ने बनाई थी। यह एक मूक फिल्म थी। यह फिल्म शारीरिक भाव-भंगिमा के साथ मात्र एक चित्र थी। इसे भारत के विभिन्न भाषा-भाषियों ने देखा था। यह फिल्म इतनी लोकप्रिय हुई कि फालके साहब ने लगभग सौ फिल्मों का निर्माण कर डाला।

सिनेमा के प्रारंभ से ही फिल्मों ने विश्व में अपनी पहुँच बनानी शुरू कर दी थी। विश्व भर के देश फिल्मों का आयात-निर्यात फिल्म उद्योग के प्रारं'भ से करते आ रहे हैं। सिनेमेटोग्राफी के लुमिरे भाई के नाम से प्रसिद्ध दो भाई आमिस्ट तथा लुइस ने अपने सिनेमा दिखाने के लिए विश्व के अनेक दे ाों और भारत में भ्रमण किया। बोलती फिल्मों के आने के बाद बाजार में अधिकाधिक कमाने की प्रवृति बढ़ी और समूचे विश्व में इसकी पहुँच बनाना आवश्यक हो गया। इस प्रकार सबटाइटलिंग का प्रयोग भारत के साथ-साथ विश्व भर में सिनेमा के लिए किया जा रहा है। आज के भूमंडलीकरण के युग में विश्व एक विश्व-ग्राम के रूप में उभर रहा है, अतः इसकी उपयोगिता में और अधि ाक वृद्धि हो गई है। यह सबटाइटलिंग सदृश भाषा के साथ-साथ अन्य भाषा अनुवाद के रूप में अपनी सार्थक भूमिका निभा रहा है।

13.3.4 सबटाइटलिंग की सीमाएं

जब स्रोत भाषा की फिल्म का दृश्य और ध्वनि एक ट्रैक पर नहीं होते तो सबटाइटलिंग करते हुए 'कट' का सामना

करना पड़ता है। दृश्य और ध्वनि का ट्रैक में समन्वय न होने से दृश्य के पीछे वायस ओवर व्याख्या करने लगता है। एल्सर बे (1998) का कथन है कि सबटाइटल के 'कट' के एक सेकंड पहले और एक सेकंड बाद आना चाहिए। इस दृष्टि से उपशीर्षक को दृश्य से ध्वनि संकेत की ओर निरंतर चलते रहना चाहिए। एल्सर बे का यह मत गाटलिन (1998) के जन दूरद ान सेवा के उस अभिमत की पुटि करता है, जिसमें उन्होंने कहा है कि अगर तीव्र गति से बोली गई खामो ाी आती है और कैमरा वक्ता पर केंद्रित रहता है तो एक टी वी उपशीर्षक-लेखक को उसे एक या दो सेकंड के लिए हवा में रखना चाहिए जिससे दर्शक को पढ़ने के लिए समय मिल सके। यदि इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं दिया जाता तो समस्या खड़ी हो जाती है।

भाषा के दो मुख्य रूप हैं- एक, मौखिक और दो, लिखित। ये दोनों रूप एक-दूसरे से भिन्न हैं। लिखित भाषा मौखिक भाषा की अपेक्षा अधिक मानक, प्रांजल और प्रतिठासूचक अधिक होती है। फिल्मों के संवाद और टी. वी. कार्यक्रमों की भाषा सामान्यतः मौखिक होती है। उसमें कई बार मानकता और प्रांजलता नहीं होती। ऐसे मौखिक संवाद का लिखित भाषा में उप ाीर्षीकरण करना एक सरल नहीं है। मौखिक भाषा में एक कलात्मकता होती है जिसमें तन-अनुतान, लय और लहजा होता है जबकि लिखित भाषा ज्ञान के संरक्षण से जुड़ी है और यह अधिकांशतः सीध ाी-सपाट होती है, इस लिए इन दोनों रूपों में तालमेल बिठाना एक सीमा है।

उपशीर्षीकरण में अनुवाद भी एक सीमा है। चित्र-प्रारूप की गति, एक फ्रेम पर एक से अधिक पात्रों का संवाद, मूल संवाद का सांस्कृतिक संदर्भ आदि ऐसे तत्त्व हैं जिनका लक्ष्य भाषा में सटीक अनुवाद नहीं हो पाता। अगर दृश्य लंबा हो तो संवाद के उपशीर्षक को फ्रेम की गति के साथ-साथ पढ्ना होता है। यदि ऐसा नहीं होता तो दर्शक को उसे पढ़ने में और समझने मैं काफी समय लगता है और वह कभी-कभी नीरस भी हो जाता है। अगर दृश्य छोटे समय के लिए होते हैं तो उसका पूरा उपशीर्षक पढ़ने में कठिनाई होती है।

एक लंबे उपशीर्षक को दो लघु उपशीर्षक की अपेक्षा पढ्ना अधिक सरल है। इसमें जो विभाजन किया जाता है वह अधिक या कम लंबाई की लाइनों में अनुकूल स्तर पर हो। वास्तव में यह विभाजन अत्यधिक संभावित वाक्य-विन्यास पर किया जाए तभी उपशीर्षक अधिक पठनीय होगा। यदि वाक्य-विन्यास व्याकरणिक संरचना की अपेक्षा आलंकारिक खंडों से संबंधित हो तभी इस में सरसता और सहजता रहेगी। वास्तव में व्याकरणिक विखंडन में अर्थवत्ता होती है। फिल्म में दृश्य कैमरे की गति और कट का पीछा करता है। आलंकारिक विखंडन आवाज की लय से संचालित होता है। कट वहाँ आता है जहां वक्ता साँस लेना चाहता है। यह वास्तव में स्क्रीन के बीच रुकावट से संबद्ध है। रुकावट या विराम 5-6 सेकंड के बीच दो लाइनों के मानक उपशीर्षक के साथ मिलता है। इसके अभाव में आँख और 'कान' दोनों में समन्वय नहीं हो पाता और यह विभाजन अप्रिय लगता है।

कई बार स्रोत भाषा में दिए गए संवाद में सामाजिक-सांस्कृतिक तथा भौगोलिक अंतर होने के कारण लक्ष्य भाषा के लिखित रूप में अनुवाद करने में समस्या पैदा होती है, क्योंकि भाािक अंतरण में लक्ष्य भाषा का सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश और विजातीयता की बड़ी भूमिका होती है। अतः यदि फिल्म के भाषिक अंतरण में लिखित सूचना मात्र ध्वनियों के द्वारा न दी जाए तो अनुवाद पठनीय, सटीक और स्पष्ट नहीं हो पाएगा। इसमें तान-अनुतान, बलाघात आदि का सहयोग हर वातावरण और मनःस्थिति में आवश्यक है। इसके लिए उपशीर्षक-लेखक को निश्चित सीमारेखा, निश्चित स्थल और अल्पकालिक व्यवधानों का ध्यान रखना पड़ेगा।

11.3.5 डबिंग और सबटाइटलिंग में अंतर

डबिंग और सबटाइटलिंग अपनी मूल अवधारणा और प्रकार्य की दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न हैं। डबिंग का प्रकार्य एक ऐसा विकल्प तैयार करना है जिससे समूचे संवाद का मिलता-जुलता ध्वनि-संकेत निर्मित हो जाए। सबटाइटलिंग संवाद का लिखित पाठ प्रारूप है जो स्क्रीन के निचले भाग में प्रक्षेपित होता है। डबिंग से स्रोत भाषा की फिल्म अर्थात हिन्दी फिल्म के नायक-नायिका और अभिनेताओं को तमिल, बंगला, मराठी अथवा अंग्रेजी, स्पेनि ा आदि भाषाएँ बोलते हुए स्क्रीन पर देखेंगे, जबकि सबटाइटलिंग से नायक-नायिका और अभिनेताओं को अपनी मूल भाषा में बोलते हुए देखेंगे किंतु फिल्म के नीचे उनके या तो उसी मूल भाषा में लिखित रूप देखेंगे या तमिल, कन्नड़, अंग्रेजी आदि अन्य भाषाओं में अनूदित पाठ देखेंगे। इस संबंध में एक विद्वान हेनरिक गाटलिब (1998) का कथन है कि उपशीर्षक खंडित अनुवाद है और डबिंग एकीकृत अनुवाद है।

आजकल यह संभव नहीं है कि किसी एक भाषा में फिल्म बनाई जाए और उसे अन्य भाी दर्शकों को दिखाया जाए तथा इसके लिए उनकी भाषा में उपशीर्षक दिया जाए। वस्तुतः इससे फिल्म में कई बार बोधगम्यता में कठिनाई होती है, उसकी प्रकृति और नैसर्गिकता में अंतर आता है तथा उस फिल्म के साथ तादात्मय स्थापित नहीं हो पाता जिससे रसास्वादन में व्यवधान पहुँचता है। इसी लिए ऐसी फिल्म में आवाज देना आवश्यक हो गया है जिससे फिल्म अधिक बोधगम्य और मनोरंजक हो जाती है। इस प्रकार डबिंग की यह प्रक्रिया अन्य भाषी या विदेशी फिल्म का स्थानीकरण करती है जो अन्य भाषी दर्शक के लिए अधिक सुविधाजनक होती है। इसी संदर्भ में सुविख्यात अनुवादशास्त्री जूलियाना हाउस (1977) ने अनुवाद के प्रकारों के बारे में चर्चा करते हुए सबटाइटलिंग को खुला अनुवाद कहा है और डबिंग को बंद अनुवाद कहा है जिसका उद्दे य दूसरे स्तर का मूल तैयार करना है।

इस प्रकार डबिंग और सबटाइटलिंग अनुवाद के दो वृहत किंतु भिन्न विधाएँ हैं। इनका उपयोग निर्मित फिल्म अथवा संदेश भाषा को अन्य भाी दर्शकों के विशाल समुदाय तक अपनी पहुँच प्राप्त करने के लिए होता है। कई फिल्मों या टी वी कार्यक्रमों के मामले में निर्माण की भाषा में उन लोगों के लिए सबटाइटलिंग या उप ाीर्षीकरण किया जाता है जिन्हें सुनने में बाधा पहुँचती है अथवा जो लोग शैक्षिक प्रयोजन के लिए फिल्म या टी वी कार्यक्रम देखते है।

एक उल्लेखनीय अंतर यह भी है कि डबिंग और सबटाइटलिंग के निर्माण की प्रक्रिया में डबिंग में जो खर्च होता है वह सबटाइटलिंग की तुलना में कई गुना अधिक होता है। उपशीर्षीकरण की प्रक्रिया डबिंग की अपेक्षा अधिक सरल है तथा इसमें अपेक्षाकृत कम समय भी लगता है।

11.3.6 सबटाइटलिंग में अनुवाद की भूमिका

सबटाइटलिंग फिल्मों में अनुवाद का ही एक रूप है। अनुवाद के सिद्धांत के अनुसार एक ही भाषा में मौखिक भाषा से लिखित भाषा में कथ्य का अंतरण करना अंतःभाषिक अनुवाद है और एक भाषा से दूसरी भाषा में कथ्य का अंतरण करना अंतरभाषिक अनुवाद है। किसी विद्वान ने इसे खुला अनुवाद कहा है तो किसी ने खंडित अनुवाद भी कहा है। ऐसे अनुवाद समकालिक या तात्कालिक रूप में दर्शकों को फिल्म के संवाद का रूपांतरण प्रस्तुत करते हैं। अनुवाद-सामग्री की न केवल यह सबसे तीव्र और सस्ती पद्धति है वरन इसे प्राथमिकता भी दी जाती है, क्योंकि इस से मूल संवाद के पाठ को और अभिनेताओं की आवाज को देखा और सुना जा सकता है।

उपशीर्षक का अनुवाद लिखित पाठ के अनुवाद से सामान्यतया भिन्न होता है। किसी फिल्म या टी.वी. कार्यक्रम के लिए उपशीर्षक की सृजन की प्रक्रिया में चित्र और श्रव्य के प्रत्येक वाक्य का विश्लेषण उपशीर्षक-अनुवादक करता है। यह भी संभव है कि उपशीर्षक-अनुवादक को संवाद का लिखित प्रतिलेख प्राप्त न हो सके, विशेषकर वाणिज्यिक उपशीर्षकों के क्षेत्र में, उपशीर्षक-अनुवादक आम तौर पर व्याख्या करता है, उसका अर्थ स्पष्ट करता है न कि संवाद का वर्णन किस प्रकार से हुआ है उसका अनुवाद करता है। इसका अभिप्राय यह है कि संवाद के रूप की अपेक्षा अर्थ पर अधिक ध्यान देता है। जो दर्शक या श्रोता मौखिक भाषा की प्रकृति से थोड़ा-बहुत परिचित हैं वे इस प्रकार के अनुवाद की प्रशंसा नहीं करते। मौखिक भाषा में अनावश्यक शाब्दिक विस्तार भी होता है और उसमें सांस्कृतिक अर्थ भी हो सकता है जिनका संप्रेषण लिखित उपशीर्षक में नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त उपशीर्षक-अनुवादक निर्धारित पठन गति प्राप्त करने के लिए संवाद को संक्षिप्त करना पड़ता है जिस में संवाद के रूप की अपेक्षा उसका प्रयोजन अधिक महत्वपूर्ण है।

उपशीर्षक के अनुवाद में अनुवादक को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा दोनों की संरचना और संस्कृति के ज्ञान के साथ-साथ दृश्य और उपशीर्षक के परस्पर समन्वय के बारे में भी पर्याप्त जानकारी भी अपेक्षित है। उसे मात्र शब्दानुवाद ही नहीं करना होता, साथ ही दृश य की अंतर्वस्तु, अभिनेताओं और संवाद की प्रकृति को भी अन्य भाषा में प्रस्तुत करना होता है। उपयुक्त शब्दों और अभिव्यक्तियों का चयन करते हुए अन्य भाषा के दर्शकों और श्रोताओं के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों के साथ-साथ उनकी मनरूस्थिति का भी ध्यान रखना होता है। इस प्रकार उपशीर्षकों के अनुवाद की प्रक्रिया अन्य अनुवादों की तुलना में अधिक जटिल होती है।

11.4 सारांश

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं की डबिंग और सबटाइटलिंग प्रयोग वैि वक तथा भारतीय मीडिया उद्योग में व्यापक स्तर पर हो रहा है। वास्तव में चित्रें की एक सार्वभौमिक भाषा होती है। इन चित्रों का अर्थ विश्व भर में लगभग एक-जैसा निकलता है। कुछ विद्वानों का मत है कि एक हजार शब्दों की तुलना में एक चित्र बेहतर होता है। फिल्म, टी. वी. कार्यक्रम, वीडियो आदि गतिमान चित्रें के ऐसे प्रारूप हैं जिनमें चित्र बड़ी तीव्र गति से चलते हैं, किंतु यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यदि दृश्य को श्रव्य के साथ दिखाया जाए तो चित्रें को वाणी या जुबान मिल जाती है।यहीं से डबिंग और सबटाइटलिंग की यात्र प्रारंभ होती है। आज के भूमंडलीकरण के युग में जनसंचार ने मनोरंजन के साथ-साथ सूचना और ज्ञान के क्षेत्र में भी द्वार खोल दिए हैं। इस लिए एक फिल्म या टी वी कार्यक्रम किसी निश्चित अंचल तक सीमित नहीं रह गया वरन उसे विश्व के अनेक देशों में प्रसारित करना आवश्यक हो गया है। अतः फिल्मों और टी वी कार्यक्रमों को स्थानीय, क्षेत्रीय और विदेशी भाषाओं में डब किया जाता है।

सिनेमा के प्रारंभ से ही सबटाइटलिंग का प्रयोग हो रहा है। शुरू-शुरू फिल्में मूक होती थीं, इस लिए उनको सबटाइटल के द्वारा व्याख्यायित किया जाता था। सबटाइटल भी एक प्रकार का अनुवाद है जो मूकता या मौन के कथ्य को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। जहाँ तक डबिंग का प्रश्न है इसका प्रचलन टाकीज या बोलती फिल्मों के समय से प्रारंभ हुआ। शुरुआत में डबिंग का प्रयोग फिल्मों के ध्वनिगुणों को बढ़ाने के लिए होता था। पहले नायक-नायिकाओं अथवा पात्रें को स्वयं गीत गाने होते थे। अगर उनकी आवाज सुरीली नहीं होती थी तो ऐसी स्थिति में गीतों को रिकार्ड कर लिया जाता था। बाद में जो गीत अन्य स्रोतों से निर्मित किए जाते थे, उन्हें मूल गीतों के स्थान पर रखा जाता था। आजकल डबिंग का काफी विस्तार हो गया है और एक भाषा में निर्मित फिल्म या टी वी कार्यक्रम की डबिंग कई भाषाओं में होती है। इस प्रकार आज डबिंग सबटाइटलिंग की व्यावसायिक सेवाफिल्म, डी वी डी, दूरदर्शन आदि में बहुत बढ़ गई है। ये एक ऐसे अनिवार्य उपकरण बन गए हैं जिनकी माँग न केवल स्वदेशी भाषाओं के किए है बल्कि विदेशी भाषी लोगों के लिए भी है। इसी कारण अनुवाद को भी नई दिशा और नए क्षेत्र प्राप्त हुए हैं। इस अनुवाद का संबंध उस भाषाभाषी दर्शकों तक होगा जिसका सामाजिक-सांस्कृतिक परिवे ा उसमें निहित होगा। डबिंग और सबटाइटलिंग के अनुवादकों की माँग में वृद्धि हो रही है।

11.5 शब्दावली

पश्च ध्वन्यंकरण (dubbing) उपशीर्षीकरण (subtitling) उपशीर्षक, सहसंवाद (voice over) आटोमेटेड डायलाग रिप्लेसमेंत (ADR) प्रतिलेख, श्रव्य-दृश्य, अनुतान, बलाघात, संवाद, आवाज-रोधी, दूरदर्शन (TV) टेलीटेस्ट, वीडियो, अंतरशीर्षक, अंतरूभाषिक अनुवाद, अंतरभाषिक अनुवाद, डी. वी. डी., जनसंचार, भूमंडलीकरण

11.6 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. डबिंग की अवधारणा स्पष्ट करते हुए उसके अर्थ और स्वरूप के बारे में बताइए।
2. डबिंग और वॉयस-ओवर में अंतर स्पष्ट कीजिए।
3. डबिंग में अनुवाद की क्या भूमिका है? उदाहरण सहित विवेचन कीजिए।
4. सबटाइटलिंग से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।
5. डबिंग और सबटाइटलिंग में अंतर स्पष्ट करते हुए यह भी बताइए कि क्या सबटाइटलिंग डबिंग से बेहतर विकल्प है।
6. सबटाइटलिंग में अनुवाद की भूमिका के संबंध में विवेचन कीजिए।

11.7 संदर्भ-सूची

Gautbill, H. 1998, **subtitling** ***In*** M. Baker (ed.) An Enclopaedia of Translation Studies; Routledge: pp. 244&81.

House, Juliana. 1977 Model for Translation Quality. TBL, Verlag.

Jakobson, Roman. 1959, On Linguistic Aspects of Translation *In* R. Brower. (ed) On Translation; OUP. PP.232&239.

Tveit, JE 1998. The Role of Translation in the Film and Television Industries, *In* MG Macfarlance (ed) Proceedings of the 39th Annual Conference of the American Translators Association, AleÛandria, VA:ATA; pp.365&69.

Tveit, JE 2000, Tthe Challenges of Subtitling, ATA, Chronicle 29. pp. 43&45

—".k dqekj xksLokeh] 2008&2012 vuqokn foKku dh Hkwfedk] ubZ fnYyh% jktdey izdk'ku